UNIVERSAL
LIBRARY

OU_176793
UNIVERSAL
LIBRARY

पञ्चामृत

[तेलुगु]

बालशौरि रेड्डि

सम्पादक

श्रीराम शर्मा

आन्ध्र हिन्दी परिषद्
(हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद)

प्रथम संस्करण ११०० सितम्बर १९५४

(सर्वाधिकार सभा द्वारा सुरक्षित)

मूल्य चार रुपए

प्रकाशक : प्रियबन्धु

व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग

हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद (दक्षिण)

मुद्रक : हिन्दी प्रेस

हिन्दी प्रचार सभा, हिन्दी भवन, हैदराबाद (दक्षिण)

सूची

१	परिचय	१
२	व्याकरण छन्द	३५
३	आन्ध्र महाभारत—राजधर्म और सेवाधर्म (महाकवि तिक्कन्ना)	४२
४	आन्ध्र महाभागवत—माया और कर्म (भक्त पोतन्ना)	७४
५	मनुचरित्र—प्रवर विजय (अल्लसानी पेद्दन्ना)	१०३
६	वेमन्ना के पद्य—योगी वेमन्ना	१४४
७	विजय विलास—उलूपी-अर्जुन विवाह (चेमकूर वेंकट कवि)	१८०
८	शब्दार्थ	२०६

● दो शब्द

हमारे संविधान ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार किया है। इस स्वीकृति का अर्थ है एक निश्चित अवधि के पश्चात् हिन्दी का उपयोग केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और अन्तर्राज्यीय व्यवहारों में होने लगेगा। किन्तु संविधान की इस तरह की स्वीकृति के अतिरिक्त भौगोलिक स्थिति, परम्परा और ऐतिहासिक तथ्यों ने हिन्दी को इससे भी अधिक और महत्वपूर्ण दायित्व सौंपा है—देश का नागरिक हिन्दी के माध्यम से सम्पूर्ण देश की आत्मा का साक्षात्कार कर सके। हमारे देश में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। प्रत्येक प्रान्त का व्यक्ति अपनी मातृभाषा में चिन्तन करता है। गत एक शताब्दी में हमारे बहुत से चिन्तकों और विचारकों ने अपनी मातृभाषा में चिन्तन करने और उस चिन्तन को अभिव्यक्त करने के लिए एक विदेशी भाषा का आश्रय लिया किन्तु यह स्पष्ट है कि एक शताब्दी पूर्व लोगों ने अपनी प्रादेशिक भाषाओं में सोचा और लिखा है तथा देश की स्वतन्त्रता के साथ यह आशा की जाती है कि लोग विदेशी भाषा का परित्याग कर अपनी भाषा में सोचेंगे और लिखेंगे।

प्रत्येक प्रदेश में ज्ञान की अखण्ड साधना करनेवाले अनेक मनीषी उत्पन्न हुए हैं। इन मनीषियों में ऐसे लोग भी हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं में शाश्वत सत्य का दिग्दर्शन कराया है। अपने उदात्त विचारों को वे अपनी भाषा में व्यक्त कर गये हैं, ऐसे उदात्त विचार जिनका महत्व अनेक शताब्दियों तक रहेगा।

इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि एक प्रान्त का निवासी दूसरे प्रान्त की साधना, चिन्तन और ऐसी प्रत्येक अभिव्यक्ति से परिचित हो जो कला के साथ व्यक्त हुई है और जिसका चिरकालीन महत्व है। यह आवश्यकता केवल आध्यात्मिक अथवा अदृश्य जगत की पिपासा से ही सम्बन्ध नहीं रखती किन्तु हमारे महान् देश की सहस्राब्दियों से चली आनेवाली समन्वयात्मक प्रवृत्ति से भी सम्बद्ध है। ज्ञान के आदान-प्रदान और अपनी मान्यताओं को स्थिर करने में हम लोगों ने कभी भी किसी प्रादेशिक सीमा अथवा वंश और जाति की परिधियाँ स्थापित नहीं कीं। जब कभी ऐसी परिधियाँ स्थापित की गईं, हमारी स्वाभाविक उदार वृत्ति ने उसे तोड़ दिया। गोंड, भील, किरात और उनसे भी पहले हमारे देश में प्रागैतिहासिक काल की जो अज्ञात जातियाँ निवास करती थीं उनसे लेकर हमने संसार की सभ्य से सभ्य जातियों की ज्ञान-साधना का लाभ उठाया है।

इस परम्परागत वृत्ति को हिन्दी ने आत्मसात कर लिया तो वह संविधान में स्वीकृत उद्देश्य से भी अधिक महत्वपूर्ण ध्येय को प्राप्त कर सकेगी, और इस ध्येय प्राप्ति के लिए समय की कोई अवधि निश्चित नहीं की गई है। हिन्दी साहित्य की आराधना में लगे हुए साधक अपने उत्साह से ऐसा समय शीघ्र से शीघ्र उपस्थित कर सकते हैं जब कि हिन्दी इस दायित्व को वहन करने लगे।

हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद की बहुविध प्रवृत्तियों में इस बात पर विशेष ध्यान दिया गया है कि हिन्दी में दक्षिण की गौरवशालिनी भाषाओं का साहित्य उपलब्ध किया जाय। जो लोग दक्षिण की तेलुगु, मराठी, कन्नड़, मलयालम और तमिल

नहीं जानते वे हिन्दी के माध्यम से इन भाषाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें। यदि कोई व्यक्ति इन भाषाओं के साहित्य का अध्ययन करना चाहे तो हिन्दी उस व्यक्ति की लालसा पूर्ण कर सके। इसी तरह यह भी आवश्यक है कि दक्षिणी भाषा बोलनेवाले लोग बिना हिन्दी का ज्ञान प्राप्त किये हिन्दी साहित्य की मुख्य प्रवृत्तियों से अवगत हों। सभा ने इन दोनों आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए जो योजना बनाई है, उसीके फल स्वरूप यह "पञ्चामृत" प्रस्तुत किया जा रहा है। तेलुगु, मराठी, कन्नड़, मलयालम, तमिल तथा उर्दू के प्राचीन पाँच प्रातिनिधिक कवियों की कुछ कृतियों को पञ्चामृत में इस तरह प्रस्तुत किया जा रहा है कि कोई व्यक्ति थोड़े से श्रम से मूल रचना का आनन्द भी प्राप्त कर सके।

सभा ने आज से दस वर्ष पूर्व इस प्रकार की योजना बनाई थी। सन् १९४९ के दिसम्बर मास में सभा ने आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में हैदराबाद में एक सम्मेलन बुलाया था, जिसमें इस प्रकार के कार्यों पर दक्षिण के साहित्य-सेवियों ने विचार किया था। लगभग दस वर्ष बाद सभा के प्रयत्न जनता के सामने आ रहे हैं।

लक्ष्मीनारायण गुप्त

अध्यक्ष

हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद

इस पुस्तक के लेखक श्री बालशौरि रेड्डि से मेरा परिचय सन् १९४७ में हुआ। मैंने उस समय उनसे तेलुगु के पाँच प्रातिनिधिक कवियों के सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखने के लिए कहा था। इस पुस्तक में कवियों के परिचय के साथ-साथ उनकी उत्कृष्ट रचनाएँ अर्थ सहित नागरी लिपि में देने की बात भी थी। श्री रेड्डी ने शीघ्र ही यह पुस्तक लिख कर मेरे पास भेज दी। उन दिनों हैदराबाद की स्थिति कुछ ऐसी डाँवाडोल हो गई कि यह पुस्तक शीघ्र ही प्रकाशित नहीं हो सकी और सात वर्ष बाद जनता के सामने आ रही है।

इस पुस्तक के प्रकाशन में बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। नागरी में तेलुगु पद्यों का छापना सरल नहीं था। तेलुगु में अनेक प्रकार की सन्धियाँ हैं। हमारे सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि हम वाक्यों को सन्धि के साथ लिखें या पृथक् पृथक्। इसी तरह तेलुगु में ए ऐ और ओ औ के अतिरिक्त ऍ और 'ऒ' नामक दो स्वर और हैं जिनका उच्चारण 'ए' और 'ओ' की अपेक्षा कम समय में होता है। च का भी दो तरह से उच्चारण होता है तथा 'र' के लिए दो चिह्न हैं। चाहते हुए भी इन विशेष ध्वनियों को हम नागरी में विशेष चिह्न लगा कर ध्वनित नहीं कर सके।

पुस्तक के तेलुगु अंश को शुद्ध करने तथा प्रूफ देखने में श्री नृसिंह शास्त्री साहित्य शिरोमणि ने बहुत सहायता दी है।

—सम्पादक

परिचय

भारतवर्ष में हिन्दी और बंगला के बाद तेलुगु अपना विशेष स्थान रखती है। परन्तु अन्य देशी भाषाओं की तरह तेलुगु का भी जैसा विकास होना चाहिए था वैसा नहीं हो पाया। तेलुगु में स्वर-प्रधान संगीत और वर्ण-प्रधान साहित्य का सुन्दर समन्वय हुआ है। इसीलिए यह भाषा अत्यन्त मधुर बन गई है। इस भाषा की केवल देश के विद्वानों ने ही नहीं बल्कि विदेश के पण्डितों ने भी "इटालियन आफ दी ईस्ट" कह कर भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इसके अतिरिक्त तेलुगु साहित्य उन्नत एवं प्रौढ़ है। इसमें गद्य और पद्य के विभिन्न अंग व उपांगों का अच्छा विकास हुआ है। तेलुगु कविता का प्रारंभ लगभग ८५० से माना जाता है। उस समय केवल गीत एवं पदों से ही तेलुगु कविता का श्रीगणेश हुआ था। ११वीं शताब्दी तक तेलुगु साहित्य में कोई उल्लेखनीय ग्रन्थ नहीं लिखा गया। यों तो आन्ध्रों का अस्तित्व ईसा के पूर्व से ही मिलता है परन्तु उस समय आन्ध्र के राजाओं ने संस्कृत और प्राकृत को ही मान्यता दी। उनके दरबारों में मार्ग कविता (संस्कृत गर्भित कविता) की तूती बोल रही थी तो जनता में देशी कविता का बोल-बाला रहा। जनता के ज्ञान तथा मनोरंजन के उपयोगार्थ कवि गीत और गाथा बना कर गाया करते थे। इस प्रकार आन्ध्र के प्रत्येक आचार-व्यवहार एवं पर्व-त्यौहार से सम्बन्धित अनेक गीत और पदों की रचना हुई है, जिससे तेलुगु का साहित्य अत्यन्त समृद्ध हुआ है। मानव-जीवन की प्रत्येक घटना व नित्य-कर्मों से सम्बन्धित पुराण, इतिहास, समाज, वेदान्त, नीति, दर्शन सम्बन्धी अनेक गीत व गाथाएँ जनपदों में आज भी प्रचलित हैं और उन्हें अत्यन्त प्रेम के साथ गाया जाता है। परन्तु सच्चे अर्थों में तेलुगु कविता का प्रारम्भ 'राजराजनरेंद्र' के समय से ही हुआ है। उनके राज-कवि नन्नय ने सर्वप्रथम संस्कृत के महाभारत को तेलुगु में अनूदित करके काव्यक्षेत्र का श्रीगणेश किया परन्तु वे महाभारत को पूरा नहीं कर पाये। आदि और सभापर्व समाप्त करके अरण्यपर्व का थोड़ा-सा अंश ही पूरा कर पाये थे कि उनकी मृत्यु हो गई। उसके उपरान्त यर्राप्रेगड़ा ने शेषांश को पूरा किया तो महाकवि तिक्कन्ना ने शेष पन्द्रह पर्वों का तेलुगु में उल्था किया। महाभारत में इन लोगों ने केवल अनुवाद ही नहीं किया बल्कि उसमें संदर्भ एवं आवश्यकतानुसार अनेक घटनाओं को जोड़ व काट कर काव्य की सृष्टि में अपनी अनन्य प्रतिभा का परिचय दिया। ये तीनों कवि 'कवित्रय' नाम से आन्ध्र में प्रसिद्ध हैं। इन्होंने स्वतन्त्र काव्य-रचना का मार्ग-दर्शन किया। फिर उस पथ पर चल कर अनेक लोगों ने असंख्य काव्यों का सृजन किया। यहाँ तेलुगु साहित्य का इतिहास लिखना हमारा लक्ष्य नहीं है अतः हम उन प्रमुख कवियों का परिचय दे कर आगे बढ़ते हैं जिनकी कविताओं का इस पुस्तक में संकलन किया गया है।

इस 'पञ्चामृत' में आन्ध्र के पाँच प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का परिचय कराया गया है। पाँचों कवि अपने समय के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। पाँचों कवियों के विषय एवं परिस्थितियाँ भी भिन्न हैं। ये सभी प्राचीन कवि हैं। इनमें आन्ध्र महाभारतकार महाकवि तिक्कन्ना (१३ वीं शताब्दी), भक्त कवि पोतन्ना (१४ वीं शताब्दी), 'आन्ध्र कविता पितामह' अल्लसानि पेद्दन्ना (१६ वीं सदी), योगी वेमन्ना (१७ वीं सदी) और शृङ्गारी कवि चेमकूर वेंकट कवि (१७ वीं सदी) की कविताओं का संकलन करके, उनका पूर्ण परिचय दिया गया है। इसमें कवियों की जीवनी, काव्य, तेलुगु साहित्य में इनका स्थान आदि पर भी प्रकाश डाला गया है। पाँचों कवि अपने समय व काल के विकास और साहित्य का परिचय देते हैं। ११ वीं सदी से लेकर १७ वीं शताब्दी तक तेलुगु साहित्य की धारा कैसे बही, किन किन क्षेत्रों को सींचती गई, उस समय की सामाजिक परिस्थितियाँ कैसी थीं, समाज में कवियों का क्या स्थान था, किस युग में किस प्रकार का साहित्य लिखा गया, अन्य साहित्यों की अपेक्षा तेलुगु साहित्य की विशेषता अथवा समानताएँ क्या हैं, सरहदी प्रान्तों और विदेशी शासन का प्रभाव साहित्य और समाज पर क्या पड़ा आदि बातों का अच्छा परिचय मिलता है। ये पाँचों कवि अपने युग के प्रतिनिधि हैं अतः प्रत्येक कवि के द्वारा उस शताब्दी की समस्त परिस्थितियों का पता चलता है। उस युग एवं शताब्दी की सभी स्थितियों से ये कवि पूर्ण रूप से परिचित अथवा प्रभावित थे। इसका परिचय हमें इनकी जीवनी अथवा साहित्य से मिलता है।

(१) **महाकवि तिक्कन्ना**—राजधर्म और सेवाधर्म
(आन्ध्र महाभारत के विराट् पर्व से लेकर अन्त तक के १५ पर्वों में से संकलित)

(२) **भक्त पोतन्ना**—माया और कर्म
(आन्ध्र महाभागवत से संगृहीत)

(३) **योगी वेमन्ना**—वेमन्ना के पद्यों से संगृहीत

(४) **अल्लसानि पेद्दन्ना**—प्रवर-विजय
(मनुचरित्रमु महाकाव्य से प्रथम और द्वितीय आश्वास)

(५) **चेमकूर वेंकट कवि**—उलूपी अर्जुन विवाह
(विजय विलासमु से संगृहीत)

महाकवि तिक्कन्ना (१२२०-१२९०)

आन्ध्र महाभारत की रचना नन्नय भट्ट, तिक्कन्ना सोमयाजी और यर्राप्रेगड़ा ने की थी। नन्नय ने आदि, सभा और अरण्यपर्व का आधा अंश अनुवाद किया तो यर्राप्रेगड़ा ने अरण्यपर्व का शेषांश पूरा किया। अकेले महाकवि तिक्कन्ना ने विराट्-

पर्व से लेकर शेष सभी पर्वों का अनुवाद किया था। इनके अन्य ग्रन्थों में 'निर्वचनोत्तर रामायण' तथा 'कविवाग्बन्ध' मुख्य माने जाते हैं। इनके जन्म-काल के सम्बन्ध में प्रामाणिक रूप से कोई विवरण प्राप्त नहीं है। इनके ग्रन्थों तथा अन्य ऐतिहासिक आधारों से पता चलता है कि ये नन्नय के दो सौ वर्ष बाद उत्पन्न हुए। नेल्लूर मण्डल के राजा मनुमसिद्धि के यहाँ ये मन्त्री तथा कवि थे। ये ईसा की तेरहवीं शती में उत्पन्न हुए। शिला-लेखों से पता चलता है कि मनुमसिद्धि तेरहवीं शताब्दी के मध्य में हुए थे और महाकवि तिक्कन्ना ने अपनी 'निर्वचनोत्तर-रामायण' उन्हें समर्पित की थी। इसके अतिरिक्त बताया जाता है कि इनके आश्रय-दाता मनुमसिद्धि के राज्य को जब पड़ोसी राजा ने हस्तगत कर लिया तो महाकवि तिक्कन्ना ने काकतीय नरेश गणपतिदेव के पास पहुँच कर उनके द्वारा पुनः मनुमसिद्धि को राज्य दिलवाया था। तिक्कन्ना सोमयाजी केवल कवि और मन्त्री ही नहीं थे बल्कि लेखकों के प्रोत्साहक भी थे।

तिक्कन्ना ने आन्ध्र भाषा व साहित्य की जो सेवा की है वह अद्वितीय है। इन्होंने संस्कृत के शब्दों को अपनी भाषा में अधिक स्थान न देकर अधिक से अधिक तेलुगु के शब्दों का प्रयोग किया। इनकी रचना अनुवाद न लग कर मौलिक प्रतीत होती है। इनकी शैली, भावों का प्रतिपादन, विषय-वर्णन आदि की खूबी के कारण महाभारत आन्ध्र का मौलिक काव्य ही बन गया है। इन्होंने तेलुगु के शब्द-कोष को विस्तृत करने, व्यावहारिक शब्दों को साहित्यिक रूप देने, भाषा को समृद्ध बनाने तथा देशी छन्दों को प्रयुक्त करने का स्तुत्य प्रयत्न किया है। इनके पद-प्रयोगों का वैचित्र्य पढ़ते ही बनता है। विजयसेना, कीचक-वध आदि अपनी विशेषता के कारण पठनीय हैं एवं अर्थालङ्कार, श्लेष का प्रयोग, कविता में प्रौढता एवं कला का पूर्ण समावेश इनकी रचनाओं में हुआ है। उपर्युक्त सभी बातों में नई पद्धतियों का अनुसरण करके भावी पीढ़ी के लिए इन्होंने मार्ग-दर्शन किया।

महाकवि तिक्कन्ना के पूर्वज कृष्णा जिले के वेल्लटूरु गाँव में रहा करते थे। तिक्कन्ना के पितामह नौकरी के लिए गुण्टूर आए। नेल्लूर के राजा मनुमसिद्धि ने तिक्कन्ना के परिवार का आदर किया और उन्हें नेल्लूर बुलवाया। वहीं रंगनाथ स्वामी के मन्दिर के समीप अच्छा-सा घर बनवा कर तिक्कन्ना सोमयाजी को रखा गया। कहा जाता है कि राजा मनुमसिद्धि के वंश के नष्ट होने पर तिक्कन्ना का पुत्र कोम्मन्ना नेल्लूर से तीन-चार कोस पर स्थित पाटूरि ग्राम में 'पटवारी' का काम करने लगा। महाकवि के दादा-परदादा का स्थान गुण्टूर था, अतः इनका वंश भी 'गुण्टूर वाले' नाम से विख्यात रहा होगा 'दशकुमार चरित्र' में, जो तिक्कन्ना को समर्पित किया ाया है, महाकवि तिक्कन्ना की वंशावली दी गई है। उसमें महाकवि का वंश 'कोट्टूरु' तलाया गया है। 'दशकुमारचरित्र' कवि केतन्ना के द्वारा रचा गया है। इन्होंने पनी कृति महाकवि तिक्कन्ना को समर्पित करके उनके प्रति अपनी अगाध श्रद्धा

और भक्ति प्रकट की है। दशकुमार चरित्र के प्रारम्भ में महाकवि तिक्कन्ना के दादा के दादा भास्कर और उनके चारों पुत्रों का वर्णन करके, तिक्कन्ना के माता-पिता और महाकवि का जन्म वृत्तान्त बताया गया है। महाकवि के पूर्वज भी अत्यन्त ख्याति-प्राप्त पुरुष थे। कविराज तिक्कन्ना के पद्यों से हमें इनके वंश के बारे में पूरी जानकारी मिल जाती है। केतन्ना कवि ने इनके वंश का जो उल्लेख किया है उसकी पुष्टि हो जाती है :

सीसपद्यमु : "मज्जनकुंडु सम्मान्य गौतम गोत्र
महितुंडु भास्कर मंत्रितनयु
डन्नमांबापति यनघुलु केतन
मल्लन, सिद्धनामात्यवरुल
कूरिमि तम्मुंडु गुंटूरि विभुडु
कोम्मन दंड नाथुंडु मधुर कीर्ति
विस्तरस्फारु डापस्तंभ-सूत्र प
वित्र शीलुंडु सांगवेद वेदि
यर्थि गल वच्चि वात्सल्य मतिशयिल्ल
नस्मदीय प्रणामंबु लादरिंचि
तुष्टि दीविंचि करुणार्द्र दृष्टि जूचि
येलमि निट्लनि यानति यिच्चे नाकु" ।। विराट्पर्व ।।

उपर्युक्त पद्य में स्वयं कवि ने कहा है कि मेरे पिता गौतम गोत्रीय भास्कर मन्त्री के पुत्र हैं। भास्कर मन्त्री के चार पुत्र थे—कोम्मन्ना, केतन्ना, मल्लन्ना और सिद्दन्ना। महाकवि तिक्कन्ना कोम्मन्ना के पुत्र थे। कोम्मन्ना गुण्टूर-नरेश के दरबारी थे। उनकी विद्वत्ता के कारण राजा उन्हें बहुत चाहते थे। विद्याध्ययन में तिक्कन्ना को अपने विद्वान पिता से प्रेरणा प्राप्त हुई होगी।

महाकवि तिक्कन्ना को राजा मनुमसिद्धि का आश्रय प्राप्त हो गया था अतः उन्हें आर्थिक कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ा। तिक्कन्ना कवि और विद्वान् होने के साथ-साथ व्यवहार-कुशल भी थे। इन्होंने अल्पसमय में ही अपने आश्रयदाता का आदर तथा विश्वास प्राप्त कर लिया। मनुमसिद्धि ने उन्हें अपना मन्त्री बना कर पूरा राज-काज सौंप दिया। तिक्कन्ना अपने कार्य में बहुत सफल रहे और ऐसा अवसर कभी नहीं आया जब उन्हें अपने किसी कार्य के लिए पश्चात्ताप करना पड़ा हो। राज-काज चलाते समय तिक्कन्ना को जो अनुभव प्राप्त हुआ उसका उपयोग कवि ने अपनी रचनाओं में किया है।

मनुमसिद्धि के देहान्त के बाद भी महाकवि जीवित रहे। उन्होंने फिर किसी

राजा का आश्रय ग्रहण नहीं किया। प्रतीत होता है जीवन के सान्ध्य-काल में महाकवि को आर्थिक कष्ट सहना पड़ा अन्यथा उनके पुत्र को पाटूरि ग्राम की पटवारगिरी स्वीकार न करनी पड़ती।

तिक्कन्ना व्यवहार-कुशल थे किन्तु उनके हृदय में किसी के प्रति किसी प्रकार की दुर्भावना नहीं थी। वे बहुत सरल-हृदय व्यक्ति थे। विद्वान् होते हुए भी उन्होंने तर्कवितर्क में पड़ने की अपेक्षा भगवद्भक्ति में मन लगाया।

तिक्कन्ना के काव्य के सम्बन्ध में इतना कहना पर्याप्त होगा कि वे तेलुगु में 'आन्ध्र-व्यास' कहलाते हैं। वे दूसरे कवियों का आदर करते थे। उनके बारे में लिखा गया है—

कंदपद्यमु : "कृतुलु रचिंपनु सु कवुल
कृतुलोप्प गोनंग नोरुनिकिं
कृतिनिभुडु वितरण श्री
युतुडन्नम सुतुडु तिक्कडोकनि कि दक्कन्" ॥

"स्वयं रचना करने और अन्य कवियों की रचनाओं को स्वीकार करने में अन्नम्मा के पुत्र तिक्कन्ना ही समर्थ हैं।"

महाकवि तिक्कन्ना संस्कृत के भी प्रकाण्ड पण्डित थे। तेलुगु और संस्कृत पर उनका समानाधिकार था। इस सम्बन्ध में लिखा गया है—

कंदपद्यमु : "अभिनुतुडु मनुम भूविभु
सभ देलुगुन संस्कृतमुन जतुरुंडै ता
नुभय कविमित्र नाममु
त्रिभुवममुल नेगड मंत्रि तिक्कडु दलचेन्" ॥

"यशस्वी राजा मनुमसिद्धि की राज-सभा में तिक्कन्ना ने संस्कृत तथा तेलुगु में काव्य-रचना करके बहुत प्रतिष्ठा प्राप्त की। वे 'उभय कवि' की उपाधि से विभूषित किये गये। इस उपाधि के कारण इनका यश चारों ओर फैल गया।"

तिक्कन्ना ने संस्कृत के पण्डित होते हुए भी अन्य संस्कृतज्ञ कवियों का अनुसरण नहीं किया। उनके पूर्ववर्त्ती कवियों ने संस्कृत के शब्दों का ही प्रचुरता से प्रयोग नहीं किया था अपितु संस्कृत की समास बहुल गौड़ी शैली का अनुगमन भी किया था। इन कवियों ने संस्कृत छन्दों का प्रयोग भी बहुतायत से किया था, किन्तु तिक्कन्ना की विशेषता यह है कि उसने सर्वप्रथम तेलुगु के महत्त्वपूर्ण काव्य महाभारत में संस्कृत के स्थान पर तेलुगु के शब्दों का प्रयोग बहुतायत से किया। ऐसा करते

हुए महाकवि ने जानबूझ कर संस्कृत शब्दों का बहिष्कार नहीं किया है। उन्होंने उचित स्थान पर संस्कृत शब्दों का उपयोग भी किया है और तेलुगु-शब्दों की बहुतायत के कारण कहीं अस्वाभाविकता भी नहीं आने दी है। कवि ने छन्दों के बारे में भी यही नीति अपनाई।

महाकवि को अपने जीवन-काल में ही पर्याप्त यश मिल चुका था। उनके समकालीन कवियों ने उनका नाम बड़े आदर से लिया है। कवि केतन्ना ने अपना 'दशकुमार चरित्र' तिक्कन्ना को समर्पित किया था। अन्य समकालीन तथा परवर्ती कवियों ने इनकी रचनाओं की बहुत प्रशंसा की है।

कवि की पहली रचना 'निर्वचनोत्तर रामायण' है। प्रथम रचना होने के कारण निर्वचनोत्तर रामायण में अन्य रचनाओं जैसी प्रौढ़ता नहीं है।

आन्ध्र कविता विशारद नन्नय भट्ट ने महाभारत का आदिपर्व, सभापर्व और अरण्यपर्व का कुछ अंश लिखा था। उनकी मृत्यु के बहुत काल बाद भी किसी ने इस अधूरे काव्य को पूरा करने की कोशिश नहीं की। विद्वानों की यह धारणा थी कि संस्कृत के महाभारत को जो तेलुगु में रूपान्तरित करेगा वह अवश्य पागल हो जाएगा। तिक्कन्ना ने इस धारणा की परवाह किए बिना महाभारत का काम हाथ में लिया। संभवतः 'निर्वचनोत्तर रामायण' के बाद कवि ने महाभारत का काम ही हाथ में लिया हो, किन्तु इस कार्य में कवि को इतनी सफलता प्राप्त हुई कि महाभारत के कारण कवि की कीर्त्ति ही अजर-अमर नहीं हुई अपितु तेलुगु साहित्य भी गौरवान्वित हुआ।

महाकवि का महाभारत संस्कृत महाभारत का अनुवादमात्र नहीं है। कवि ने संस्कृत महाभारत की कथा को आधार बना कर स्वतन्त्रता से अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। इसी लिए यह ग्रन्थ प्रतिच्छाया मात्र नहीं रह गया। पाठक यह अनुभव करता है कि वह किसी मौलिक ग्रन्थ का अध्ययन कर रहा है। कथाओं के विस्तार को कम किया गया है और कुछ हृदयस्पर्शी स्थलों को अधिक बढ़ा कर लिखा गया है। विराट्पर्व का विस्तार बहुत अधिक हुआ है। गीता महाभारत का एक छोटा-सा अंश है। यहाँ यह बताने की आवश्यकता नहीं कि संस्कृत-साहित्य में गीता का क्या स्थान है। यदि महाभारत न लिख कर वेदव्यास केवल गीता ही लिखते तब भी उनकी कीर्त्ति अक्षुण्ण हो जाती, किन्तु तिक्कन्ना ने गीता के १८ अध्यायों को केवल तीन पद्यों में समाप्त कर दिया है। तिक्कन्ना ने महाभारत के पात्रों का चित्रण बहुत स्वाभाविक ढंग से किया है। महाभारत की कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं को कवि ने इस ढंग से चित्रित किया है कि वे पाठक अथवा श्रोता के मस्तिष्क में सदा के लिए अङ्कित हो जाती हैं। भीष्म की निष्कपटता, द्रोणाचार्य का पाण्डवों पर प्रेम, कर्ण की राजभक्ति, शकुनि की चालाकी, अर्जुन का पराक्रम और अभिमन्यु के व्यूह-भेदन का सजीव वर्णन हुआ है। इस प्रकार के अनेक स्थलों का उल्लेख किया जा सकता है।

स्थायी भाव बड़ी कुशलता से रसों में परिवर्तित होते हुए दिखाई देते हैं। लोकोक्तियों और मुहावरों ने भाषा में प्राण डाल दिए हैं। कवि ने शब्दों की भरमार से बचने की कोशिश की है, जिससे भाव ठीक तरह उभर सके। इतना होते हुए भी भाषा में गजब का प्रभाव है। भाषा की प्राञ्जलता और कल्पना की उड़ान देखने योग्य है।

कवि ने अपनी निर्वचनोत्तर रामायण राजा मनुमसिद्धि को समर्पित की है, किन्तु महाभारत जैसी प्रसिद्ध रचना नेल्लूर ग्राम के देवता हरिहरनाथदेव को अर्पित की गई है। इस घटना को लेकर कुछ लोगों ने यह अनुमान लगाया है कि जिस समय महाभारत की रचना समाप्त हुई कवि तिक्कन्ना और राजा मनुमसिद्धि में अनबन थी किन्तु यह भी हो सकता है कि कवि ने महाभारत जैसी अद्भुत रचना के लिए उस शक्ति को चुना जो मनुमसिद्धि जैसे सहस्रों नरेशों पर शासन करती आई है और करती रहेगी।

तिक्कन्ना का लिखा हुआ "कविवाक्बन्ध" नामक एक लक्षण ग्रन्थ भी मिलता है। इस ग्रन्थ का अन्तिम पद्य इस प्रकार है :

कंदपद्यमु : **"तनरन् गवि वाक्बंधन**
मनुछंदं बवनि वेलय हर्षमु तो दि
क्कन सोमयाजि चेप्पेनु
जनुलेल्ल नुतिंप बुधुल सम्मति गागन्" ॥

"गुरु-जनों और विद्वानों की सम्मति तथा जनता की प्रशंसा के लिए तिक्कन्ना सोमयाजी ने हर्षपूर्वक कवि वाक्बन्ध 'नामक लक्षण ग्रन्थ' की रचना की।"

कुछ लोगों का विचार है, तिक्कन्ना ने 'कृष्णशतक' और 'विजयसेन' नामक दो और ग्रन्थों की रचना भी की थी।

भक्त पोतन्ना (१४०५-१४७०)

अन्य प्राचीन कवियों और विद्वानों की तरह भक्त बम्मेर पोतन्ना के जन्म-स्थान तथा जन्म-तिथि के बारे में दो तीन मत प्रचलित हैं। जहाँ तक पोतन्ना के जन्म-संवत् का प्रश्न है, अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका है कि इनका जन्म सन् १४०५ में हुआ था, किन्तु जन्म-स्थान के बारे में दो विचार सामने आते हैं। बम्मेर पोतन्ना ने अपनी रचनाओं में यह लिखा है कि वे एकशिला नगरी के निवासी हैं। आन्ध्र में एकशिला नगरी के नाम से दो नगरियाँ प्रसिद्ध हैं। कडपा जिले के ओंटिमिट्टा ग्राम का पुराना नाम एकशिला नगरी था। इसी तरह काकतीय

राजाओं की राजधानी वरंगल भी एकशिला नगरी कहलाती थी। वरंगल का मूल नाम है ओरुगल्लु। ओरगल्लु का शाब्दिक अर्थ भी एकशिला नगरी होता है। कुछ विद्वानों ने पोतन्ना को ओंटिमिट्टा का निवासी बताया है तो कुछ ने वरंगल का। स्वर्गीय कन्दुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलू ने बहुत ही छानबीन के बाद यह सिद्ध किया है कि पोतन्ना वरंगल के निवासी थे। वरंगल जिले में ही बम्मेर नामक ग्राम है। बम्मेर ग्राम में उत्पन्न होने के कारण ये बम्मेर पोतन्ना कहलाए। यह अधिक युक्ति-युक्त प्रतीत होता है कि बम्मेर ग्राम से पोतन्ना कडपा जिले में जाने की अपेक्षा अपने निकट के नगर में चले आए हों।

बम्मेर पोतन्ना के बाल्यकाल के सम्बन्ध में हमें अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है। इन्हें बचपन में विशेष सुख प्राप्त हुआ होगा, ऐसा प्रतीत नहीं होता। इन्होंने समाज के उस रूप का साक्षात्कार अवश्य किया है जो असहाय और निराश व्यक्तियों को अधिक असहाय और निराश बनाता है।

आरम्भ में पोतन्ना को राजाश्रय ग्रहण करना पड़ा। उन्होंने अन्य कवियों की तरह राजाओं के मनोरञ्जन की सामग्री प्रस्तुत करने की कोशिश की। संभवतः इसी समय उन्होंने अपनी 'भोगिनी दण्डकम्' नामक पुस्तक लिखी थी। किन्तु इनके ध्यान में यह बात शीघ्र ही आ गई कि राजा की आराधना में प्रतिभा का व्यय करना उचित नहीं है। ये अपनी स्थिति से असन्तुष्ट रहने लगे।

इसी समय इनका परिचय चिदानन्द योगी से हुआ। इस परिचय से पोतन्ना की वृत्ति ही बदल गई। योगी चिदानन्द ने इन्हें उपदेश दिया कि अपनी प्रतिभा का उपयोग ऐसी रचनाओं में करो जिससे तुम्हारा नाम अमर हो जाए। योगी ने इन्हें स्थूल-जगत् से हटा कर सूक्ष्म-जगत् की ओर आकर्षित किया। सुयोग्य गुरु के सुयोग्य शिष्य ने शीघ्र ही यह प्रमाणित कर दिया कि वह गुरु के दिखाये हुए मार्ग पर पूरी तरह चल सकता है। अब तो इनका अधिकांश समय भगवान् की आराधना में व्यतीत होने लगा।

गुरु के उपदेश के कारण इन्होंने उस परमतत्व को पहचाना जो समस्त जगत् में व्याप्त है। इसी लिए इन्हें राम, कृष्ण, हरि आदि नाम पर्यायवाची लगने लगे। इन्होंने आत्मा को पहचाना और उसी के चिन्तन में अपने आपको लगा दिया।

पोतन्ना ने भोगिनी दण्डकम्, वीरभद्र विजय, श्रीमद् भागवत् और नारायण-शतक नामक चार ग्रन्थ लिखे। इनमें श्रीमद् भागवत् मुख्य है। श्रीमद् भागवत् के कारण ही पोतन्ना तेलुगु भाषी प्रदेश में आज भी आदर के साथ स्मरण किए जाते हैं।

भागवत् की रचना के सम्बन्ध में एक कथा प्रचलित है। एक दिन गोदावरी-तट पर आप ध्यान-मग्न बैठे थे। इन्हें एक दिव्य मूर्ति का दर्शन हुआ। जिस समय वे उस दिव्य-मूर्ति के दर्शन में तल्लीन थे, इन्हें कहीं से सुनाई दिया—"श्रीमद्-

भागवत् का अनुवाद करो। तुम भव-बन्धन से मुक्त हो जाओगे।" इस आदेश के सुनते ही कवि के मुख से सहसा निकल गया :—

मत्तेभविक्रीडितम् : "ओनरन् नन्नय तिक्कनादि कवु लीयुर्विन् बुराणावलुल्
देनुगुन् जेयुचु मत्पुराकृत शुभाधिक्यंबु दानेट्टि दो
तेनुगुन् जेयरमुन्नु भागवतमुन् दीनिन् देनिंगिंचिना
जननंबुन् सफलंबु जेसेद बुनर्जन्मंबु लेकुंडगन्"

"नन्नय, तिक्कन्ना आदि कवियों ने तेलुगु में पुराणों का अनुवाद किया है, किन्तु किसी ने भागवत का अनुवाद नहीं किया। मैं भागवत का तेलुगु में अनुवाद कर अपना जन्म सफल बनाऊँगा। मैं जन्म-मरण से मुक्त हो जाऊँगा।"

पोतन्ना की भागवत में ३० हजार पद्य हैं। पोतन्ना ने संस्कृत भागवत से कथा अवश्य ली है किन्तु उसका अक्षरशः अनुवाद नहीं किया है। कई स्थानों पर इन्होंने स्वतन्त्रता से काम लिया है। कई अंश बहुत संक्षिप्त कर दिए गए हैं जब कि कुछ अंश बढ़ाए गए हैं। कठिन स्थलों को सरल करने की चेष्टा की गई है। भागवत के अनेक स्थल काव्य की अपेक्षा दर्शन से अधिक सम्बन्धित हैं, किन्तु कवि ने उन स्थानों को भी काव्यमय बनाने की चेष्टा की है। महाभारत लिखते समय जिस शैली का अवलम्बन तिक्कन्ना ने किया पोतन्ना ने उसी शैली का अनुकरण भागवत में किया है। इसी लिए भागवत अनुवादमात्र नहीं है। पोतन्ना ने भागवत के सभी अंशों को काव्य के गुणों से अलंकृत करने का प्रयत्न किया है। भागवत तेलुगु का मौलिक महाकाव्य है और इस महाकाव्य के कारण पोतन्ना महाकवि की पदवी से विभूषित हुए।

भागवत की रचना करते समय पोतन्ना भगवान् रामचन्द्र की आराधना किया करते थे। कहा जाता है भागवत की पूर्ति में भगवान् राम ने पोतन्ना की सहायता की। इस सम्बन्ध में एक कहानी प्रचलित है। महाकवि भागवत के अष्टम स्कंध की रचना कर रहे थे। गजेन्द्र मोक्ष का वर्णन चल रहा था। कवि विष्णु का वर्णन करते हुए लिख रहे थे कि वे वैकुण्ठ के एक कोने में बने हुए महल में विद्यमान थे। इस आशय को प्रकट करते हुए कवि ने लिखा—"अल वैकुण्ठ पुरंबुलों नगरिलो ना मूल" (वैकुण्ठ पुर के एक कोने में)। बस इसके आगे कुछ सुझाई नहीं दिया। कवि ने बहुत प्रयत्न किया किन्तु पंक्ति आगे बढ़ी नहीं। अन्त में वे आसन से उठे और बाहर राम का ध्यान करने लगे। कहते हैं राम पोतन्ना के वेश में आये और उन्होंने इस पंक्ति में जोड़ दिया—"सौधंबु दापल" (अट्टालिका के भीतर)। जब पोतन्ना फिर आसन पर आये तो उन्होंने अपनी पंक्ति को पूर्ण पाया। उसकी कथा आगे बढ़ी।

जब मगर ने गजेन्द्र को लगभग पूरा निगल लिया था, उस समय गजेन्द्र की प्रार्थना को सुन कर भगवान् विष्णु रक्षा के लिए दौड़े चले आये। पोतन्ना ने इस दृश्य को कितनी अच्छी तरह चित्रित किया है—

मत्तेभविक्रीडितम् : **सिरिकिं जेप्पुडु शंखचक्र युगमुन् जेदोयि संधिंप डे**
परिवारंबुनु जीर डभ्रगपतिन् बन्निंपडा कर्णि कां
तर धम्मिल्लमु चक्कनोत्तडु विवाद प्रोद्धत श्री कुचो
परिचेलांचल मैन वीडडु गज प्राणावनोत्साहि यै ॥

"मगर से गजेन्द्र की रक्षा के लिए भगवान् विष्णु लक्ष्मी को सूचना दिए बिना दौड़े चले आये। यहाँ तक कि अपने अभिन्न साथी शंख, चक्र, गदा और पद्म का धारण करना भी भूल गये।"

सुनते हैं जब इस पद्य को शृंगारी कवि श्रीनाथ ने सुना तो उसने आक्षेप किया—यदि विष्णु अपने साथ चक्र भी नहीं ले गये तो वे मगर को कैसे मारते? क्या वे गजेन्द्र और मगरकी लड़ाई का तमाशा देखने गये थे? पोतन्ना ने इस आक्षेप का तत्काल कोई उत्तर नहीं दिया भोजन करने से पहले पोतन्ना बहाना बना कर बाहर चले गये। उन्होंने श्रीनाथ के पुत्र को कहीं छिपा कर कुए में एक बड़ा-सा पत्थर डाल कर पुकारना शुरू किया—"श्रीनाथ, तुम्हारा पुत्र कुए में गिर गया, गजब हो गया।"

पोतन्ना की चिल्लाहट सुन कर श्रीनाथ दही-भात छोड़ कर बेतहाशा कुए की तरफ़ दौड़े। श्रीनाथ पुत्र की रक्षा के लिए कुए में कूद ही रहे थे कि पोतन्ना ने कहा—"श्रीनाथ, पुत्र को बचाने के लिए रस्सी और सीढ़ी साथ क्यों नहीं लाये? क्या तुम कुए की प्रदक्षिणा करने आये हो? तुम्हारे जिस पुत्र-प्रेम ने तुम्हें विह्वल कर दिया उसी प्रेम से भगवान् विष्णु भी भक्त की पुकार पर अपने शंख-चक्रादि का धारण करना भूल गये थे।

महाकवि ने भागवत में नवों रसों का ठीक-ठीक निरूपण किया है। रौद्र, वीभत्स, करुणा और शान्त रस के चित्रण में कवि को विशेष सफलता मिली है। सप्तम-स्कन्ध भागवत का प्राण कहा जा सकता है। इस स्कन्ध में प्रह्लाद का चित्रण बहुत ही सफलता से किया गया है। जिस तरह तिक्कन्ना महाभारत के विराट् पर्व में अपनी प्रतिभा का पूरा-पूरा परिचय दे सके उसी तरह पोतन्ना ने भागवत के सातवें स्कन्ध में अपनी प्रतिभा का पूरा-पूरा उपयोग किया है। पोतन्ना ने अपनी कविता में काव्य और संगीत का ठीक ठीक समन्वय किया है। कोमल पदावलियों का प्रयोग हुआ है। शैली ने भावों का पूरी तरह अनुगमन किया है।

श्री एस्. लक्ष्मीनरसय्या एम्. ए. एल्. टी. ने पोतन्ना के विषय में लिखा

है कि आन्ध्र के भक्त-कवियों में पोतन्ना का स्थान सबसे पहले आता है। तेलुगु-साहित्य में भक्ति के कारण पोतन्ना को जो स्थान प्राप्त है वह अन्य कवि को प्राप्त नहीं हो सका। काव्य में भक्ति को स्वतंत्र-रस के रूप में ग्रहण नहीं किया गया, किन्तु पोतन्ना ने भक्ति का जिस सजीवता से वर्णन किया है, उसके कारण भक्ति ने दसवें रस का रूप धारण कर लिया। पोतन्ना में हम सूर और तुलसीदास की विशेषताओं का समन्वय पाते हैं। सूरदास और तुलसीदास की रचनाओं के मिलाने पर जो चीज़ तैयार हो सकती है वह हमें पोतन्ना की रचनाओं में देखने को मिलती है। सूर ने अपनी कविता का आधार भागवत को बनाया था, पोतन्ना ने भी अपनी कविता के लिए भागवत का सहारा लिया, किन्तु वे सूरदास की तरह कृष्ण के आराधक न हो कर तुलसीदास की तरह राम के उपासक थे। भावुकता में पोतन्ना सूरदास से मेल रखते हैं तो पाण्डित्य और भक्ति में उनका मेल तुलसीदास से बैठता है। पोतन्ना की कविता के सम्बन्ध में यहाँ वसुराय का एक पद्य देना पर्याप्त होगा—

तेटगीति : **वेरगु पडनेल वारि कवित्वमुनकु**
ब्रदुकु पै यास कूडनु बाडु सेयु
घोर दारिद्र्य दुःखंबु गुडुचुचकट
ये गतिनि बल्के पोतन्न भागवतमु ?

"पोतन्ना की कविता पर आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं। उनकी कविता पढ़ने से माया-मोह समाप्त हो जाते हैं। पोतन्ना घोर दरिद्रता का विष पीते हुए भी भागवत की रचना किस प्रकार कर सके ?"

यदि तिक्कन्ना की रचना को हम तेलुगु-साहित्य के कल्पित शरीर में मस्तक मान लें तो पोतन्ना की रचना हृदय का स्थान ग्रहण करेगी। यदि तिक्कन्ना तेलुगु-वाङ्मय के आकाश में सूर्य हैं तो पोतन्ना चन्द्रमा हैं।

पोतन्ना सांसारिक विषय-वासनाओं से बहुत ऊँचे उठ चुके थे। उन्हें यह पसन्द नहीं कि वे अन्य कवियों की तरह राजाओं के दरबार में कविता-पाठ करके उदर-पोषण करें। उन्होंने दरिद्रता का विष-पान किया किन्तु कभी वैभव की इच्छा नहीं की यद्यपि वे उसे आसानी से प्राप्त कर सकते थे।

जिस समय कवि पोतन्ना भागवत की रचना कर रहे थे उनकी कीर्त्ति दूर-दूर तक फैल चुकी थी। कुछ राजा इन्हें अपना आश्रय प्रदान करना चाहते थे, किन्तु उन्होंने आश्रय ग्रहण नहीं किया। यहाँ एक दो घटनाओं का उल्लेख करना आवश्यक है जिनसे पोतन्ना के चरित्र को समझने में सहायता मिल सकती है।

तेलुगु के शृंगारी कवि श्रीनाथ की बहिन का विवाह पोतन्ना के साथ हुआ। श्रीनाथ तेलुगु, संस्कृत और कन्नड़ के विद्वान् थे। इन्होंने अनेक राजाओं का

आतिथ्य स्वीकार किया था। श्रीनाथ में अभिमान की मात्रा भी कम नहीं थी। श्रीनाथ एक समय राचकोंडा के राजा सर्वज्ञ सिंगमनायुडु के दरबार में गये। शीघ्र ही राजा और कवि में घनिष्टता उत्पन्न हो गई। राजा ने श्रीनाथ से आग्रह किया कि वे किसी तरह पोतन्ना की भागवत उन्हें समर्पित करायें। इस समर्पण के बदले राजा सर्वज्ञ सिंगमनायुडु कवि को पर्याप्त धन देना चाहता था।

श्रीनाथ अपने बहनोई को मनाने के लिए पोतन्ना के गाँव पहुँचे। उस समय पोतन्ना अपने खेत में काम कर रहे थे।

श्रीनाथ ने परिहास करते हुए पोतन्ना से पूछा—"कृषक महाशय, कुशल तो हो?"

पोतन्ना ने इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया—

उत्पलमाला : **बाल रसाल साल नव पल्लव कोमल काव्य कन्यकन्**
गूळल किच्चि यप्पडुपु कूडु भुजिंचुट कंटे सत्कवुल्
हालिकुलैन नेमि गहनांतर सीमल गंदमूल कौ
हालिकुलैन नेमि निजदार सुतोदर पोषणार्थ मै ॥

"बाल आम्र के नये किसलय के समान कोमल काव्य-कन्या को दुष्टों के हाथ में समर्पित करके उनके टुकड़ों पर जीवित रहने की अपेक्षा सत्कवि का किसान होना अच्छा। वन्य प्रदेश को जोत कर कन्द-मूल-फल से अपना, पत्नी का और पुत्रों का भरण-पोषण करना अच्छा है।"

यह सुन कर श्रीनाथ कवि बहुत लज्जित हुए। वे अपने विचार भी प्रकट नहीं कर सके। उस समय खेत में पोतन्ना और उनके पुत्र मल्लन्ना दोनों काम कर रहे थे। घर में सालेजी आये हों और खाने के लिए चावल का दाना न हो। मल्लन्ना अपने मामा के लिए चावल जुटाने गाँव में गया, किन्तु सफलता नहीं मिली। कहा जाता है इसी समय श्रीराम पोतन्ना का वेश बना कर घर में आये और तरह तरह के भोजन का प्रबन्ध कर गये।

अवसर पा कर श्रीनाथ ने प्रस्ताव रखा—जीजाजी इस तरह और कितने दिन बिताएँगे? अपनी रचना किसी राजा को समर्पित करके मुँहमाँगा पैसा प्राप्त कीजिए। आपका परिवार भी सुखी हो जाएगा।

पोतन्ना के मुँह से उत्तर नहीं निकला। उनके इस मौन को श्रीनाथ ने स्वीकृति का लक्षण समझा।

श्रीनाथ ने राजा से आकर कहा कि पोतन्ना ने आपको भागवत समर्पित करना स्वीकार कर लिया है। राजा बहुत प्रसन्न हुए। जब यह समाचार पोतन्ना को मालूम हुआ तो वे अपनी भूल पर पछताने लगे। पोतन्ना दुविधा में पड़ गये। इसी समय

सरस्वती देवी वहाँ उपस्थित हुई। सरस्वती की आँखों से आँसू टपक रहे थे। वीणा-पाणि सरस्वती की आँखों में आँसू! पोतन्ना विचलित हो गये। पोतन्ना ने सरस्वती से कहा—

उत्पलमाला : **काटुक कंटि नीरु चनुकट्टु पयिंबड नेलयेड्चे दो**
कैटभ दैत्य मर्दनुनि गादिलि कोडल! यो मदंब यो
हाटक गर्भुराणि निनु नाकटिकिन् गोनिपोयि यल्लक
नॉट किराट कीचकुल कम्म द्रिशुद्धिग नम्मु भारती ॥

"हे भारती, तुम कज्जलपूर्ण नेत्रों की अश्रुधारा कुचद्वय पर गिराती हुई विलाप क्यों कर रही हो? तुम विश्वास रखो, मैं तुम्हें उन निर्दय कर्णाटकी किरात राजाओं को अर्पित नहीं करूँगा।"

इस पद में कर्णाटकी राजाओं के उल्लेख को देख कर कुछ विद्वानों ने अनुमान लगाया है कि श्रीनाथ ने अपने बहनोई की रचनाओं को लोभवश धनिकों के हाथ बेच दिया था। उन धनिकों और राजाओं के प्रति उपेक्षा प्रकट करने के लिए कवि ने कर्णाटकी और किरात शब्द का प्रयोग किया है। कुछ पण्डितों का कथन है, प्राचीन काल में आन्ध्र-राजा कर्णाटक के राजा भी कहलाते थे। सम्भवतः इसीलिए श्रीनाथ ने भी कई स्थलों पर कर्णाकट शब्द का प्रयोग किया है। यह भी हो सकता है कि श्रीनाथ अनेक कर्णाटकी राजाओं के दरबार में गये हों। तेलुगु तथा कन्नड़ भाषा की मूल-भाषा एक ही थी। इन दोनों भाषाओं की लिपियों में भी बहुत कुछ समानता है।

ऊपर जिस घटना का वर्णन किया गया है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि पोतन्ना दरिद्रता के अभिशाप को सह कर भी कभी विचलित नहीं हुए। धनिकों के प्रति उनके क्या भाव थे इसका परिचय निम्न पद्य से चलता है—

उत्पलमाला : **इम्मनुजेश्वराधमुल किच्चि पुरंबुलु वाहनंबुलुन्**
सोम्मुलु गोन्नि पुच्चुकोनि सोक्कि शरीरमु वासि कालुचे
सम्मेट ब्रेटुलन् बडक सम्मति श्रीहरि किच्चि चेप्पे नी
बम्मेर पोतराजोकडु भागवतंबु जगद्धितंबुगन् ॥

"बम्मेर पोतन्ना ने अपनी काव्य-कन्या को इन नराधमों को समर्पित करके उनसे नगर, ग्राम, वाहन, धन आदि प्राप्त करने की अपेक्षा उसे भगवान की सेवा में समर्पित करना कहीं श्रेयस्कर समझा।

जब राजा को ज्ञात हुआ कि पोतन्ना अपनी भागवत उन्हें समर्पित नहीं कर रहे हैं तो उसने पशुबल का आश्रय लेना चाहा, उसने पुस्तक छीनने के लिए अपने

सैनिकों को भेजा। जिस समय सेना ने भागवत लेने की कोशिश की भगवान रामचन्द्र ग्रन्थ की रक्षा करने लगे। भगवान राम ने राजा की सेना को उचित दण्ड दिया।

राजा को अपनी मूर्खता समझ आई।

पोतन्ना के जीवन के साथ ऐसी अनेक अलौकिक घटनाएँ संलग्न हैं।

योगी वेमन्ना (१४१२-१४८०)

कुछ लोग वेमन्ना को कड़पा जिले के **कटासपल्ले** का निवासी बताते हैं और कुछ लोग कर्नूल जिले के एक ग्राम का। वेमन्ना आन्ध्र के विभिन्न स्थानों पर गये थे। उन्होंने कुछ समय **गंडीकोटा** में भी बिताया था अतः निवास-स्थान के सम्बन्ध में निश्चय के साथ कुछ कह सकना संभव नहीं है। इनकी रचनाओं के अन्तःप्रमाणों और शिष्यों की रचनाओं से यह पता चलता है कि इनका जन्म कोंडवीडु में हुआ था, गंडीकोटा में जीवन का बहुत सा समय बीता और कटासपल्ले में देहान्त हुआ। कटासपल्ले इस समय अनन्तपुर जिले में है।

आटवेलदिगीतम् : **ऊरु कोंडवीडु नुनिकि पश्चिम वीथि**
मूगचिंतपल्ले मोदटि इल्लु
एड्डे रेड्डि कुल मदेमनि तेल्पुदु
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"कोंडवीडु नगर के मूगचिन्तपल्ले में जो पश्चिमी गली है उसका पहला घर ही मेरा जन्मस्थान है। मैं रेड्डी जाति में उत्पन्न हुआ।"

वेमन्ना के इस पद के आधार पर यदि हम जन्मस्थान के सम्बन्ध में कुछ निश्चय कर लेते हैं तो यह ठीक नहीं हो जाता किन्तु इस प्रमाण के सिवाय हमारे पास कोई अन्य साधन भी नहीं है।

जन्म स्थान की तरह इनका जन्म-संवत् भी अभी तक सन्दिग्ध बना हुआ है। ब्रौन ने इनका जन्म सत्रहवीं शती में बताया है जब कि क्याम्बेल ने सोलहवीं शती को प्रमाणित किया है। जिन लोगों ने भी वेमन्ना के काल-निर्धारण का उद्योग किया है उन्होंने जनपदों में प्रचलित कथाओं और किम्वदन्तियों का आश्रय अधिक लिया है।

'वेमन्ना योगी चरित्र' के लेखक ने वेमन्ना को कोंडवीडु के राजा राचवेमारेड्डी का भाई बताया है। इस में जो वंशावली दी गई है वह अधिक प्रामाणिक प्रतीत नहीं होती। इस पुस्तक में कोमरगिरिरेड्डी के तीन पुत्रों का उल्लेख है—कोमट वेंकारेड्डी, राचवेमारेड्डी और वेमारेड्डी (योगी वेमन्ना)। शिलालेखों से पता चलता है कुमारगिरिरेड्डी का राज्य काल १३८०—१४०० के मध्य में रहा। ये अनपोता-

रेड्डी के पुत्र थे। इन्हें सन्तान नहीं थी अतः वेमारेड्डी ने १४००–१४२० तक राज्य किया। इनके पुत्र ही राचवेमारेड्डी थे जिन्होंने १४२० से १४२४ तक राज्य किया। ये वेमारेड्डी ही कोंडवीडु राज्य के अन्तिम राजा थे। यदि इन्हें वेमन्ना का भाई मान लिया जाये तो वेमन्ना का काल पन्द्रहवीं सदी में निश्चित होगा। यदि योगी वेमन्ना को राच वेमारेड्डी का भाई माना जाता है तो पेद कोमटि वेमारेड्डी इनके पिता होंगे। इनकी सभा में तेलुगु के शृंगारी कवि श्रीनाथ शिक्षा-विभाग के अधिकारी थे। यह मत ही अधिक समीचीन प्रतीत होता है। वेमन्ना और श्रीनाथ समकालीन कवि माने जाते हैं।

वेमन्ना के कुछ पद्यों में मुसलमानों का उल्लेख मिलता है। इससे यह प्रमाणित होता है कि दक्षिण में मुसलमानों के आगमन से पहले वेमन्ना का जन्म नहीं हुआ।

आटवेलदिगीतम् : तिरुमलकुनु¶ बोच तुरक दासरि गाडु
काशि बोव लंज गरित कादु
कुक्क सिंह मगुने गोदावरिकि बोव
विश्वदाभिराम विनुरवेम ॥

"हे वेमन्ना, तिरुमल तीर्थ (आन्ध्र प्रान्त का एक तीर्थ-स्थल) के सेवन से मुसलमान विष्णु भगवान का दास नहीं बन सकता। काशी-यात्रा से ही कोई वैश्या पतिव्रता नहीं बन सकती। इसी तरह दक्षिण-गंगा गोदावरी के निकट आने या उसके जल के सेवन करने से कुत्ता नृसिंह नहीं बन सकता।"

वेमन्ना ने अपनी रचनाओं में गुल्लाम (गुलाम) मुस्तावु, तुरक आदि शब्दों का प्रयोग कई स्थानों पर किया है। इन बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि उनका जन्म चौदहवीं शताब्दी के बाद ही हुआ होगा।

वेमन्ना की रचनाओं में इनके पूर्ववर्त्ती समकालीन और परवर्त्ती कवियों का उल्लेख पाते हैं। एडपाटी एर्राप्रगड नामक कवि ने अपने 'मल्हण चरित्र' में बहुत-से स्वर्गीय कवियों का स्मरण किया है। इस पुस्तक के 'विनुतु लोनर्त्तु·········' नामक पद्य में वेमन्ना का वर्णन भी किया गया है। इस ग्रन्थ के आधार पर कहा जा सकता है कि वेमन्ना का जन्म कृष्णदेवराय से पहले ही हुआ। एर्राप्रगड कृष्णदेवराय के समकालीन थे। इससे यह पता चलता है कि वेमन्ना कृष्णदेवराय से पहले ही हुए होंगे।

लक्ष्मण कवि ने अपने लिंग शतक में वेमन्ना की प्रशंसा की है। उदाहरण के लिए कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जा रही हैं—

¶ आन्ध्र का प्रसिद्ध तीर्थ है।

सीसपद्यमु : "व्यास वाल्मीकुल वर्णिचि या कालि
दासुल नेम्मदि दलचि नन्न
पार्य तिक्कन मंत्रि यधिपुल गोनियाडि
भीम वेमानंत बिरुदु कवुल.........''

व्यास-वाल्मीकि का वर्णन और नन्नय तथा तिक्कन्ना मन्त्री की स्तुति और भीम-कवि, वेमन्नायोगी आदि महात्माओं और सत्कवियों का अभिनन्दन करके यह ग्रन्थ लिखने जा रहा हूँ।"

पिंगलि येल्ल नार्युडु ने अपने सर्वेश्वर चरित्र में वेमन्ना की स्तुति की है। शिवयोगीन्द्र ने अपने 'अल्पवाद कोलहलमु' में और तुरग रामकवि ने 'नागरखण्ड' में वेमन्ना का गुण-वर्णन किया। सारांश यह कि १५ वीं, १६ वीं और १७ वीं शती में जो काव्य लिखे गए उनमें से कुछ में पोतन्ना का जिक्र किया गया है। वेमन्ना ने एक पद्य में अपने सम्बन्ध में कुछ जानकारी दी है। यह पद्य 'ओरिएण्टल लाइब्रेरी' में ताड़-पत्र पर अंकित है :—

कंदपद्यमु : "नंदन संवत्सरमुन पोंदुग कार्तीक शुद्ध पुन्नम नाडुन्
विंध्याद्रि खेतु बंधन संदुन नोक वीरुडेलु सरगुनवेमा"

यदि यह पद्य वेमन्ना ने अपने ही जन्म के बारे में लिखा है तो पन्द्रहवीं शती में नन्दन संवत्सर १४१२ तथा १४७२ में आया था। १४७२ से पहले जो पुस्तकें लिखी गईं उनमें वेमन्ना की प्रशंसा मिलती है अतः इनका जन्म १४१२ में ही हुआ होगा। उपर्युक्त पद्य के अनुसार वेमन्ना का जन्म कार्तिकी पूर्णिमा शक १३३४ में हुआ।

कुछ लोगों ने यह प्रमाणित करने की कोशिश की है कि वेमन्ना ब्राह्मण-कुल में पैदा हुए थे, किन्तु वेमन्ना ने कई स्थानों पर अपनी जाति रेड्डी बताई है। इस सम्बन्ध में पहले ही प्रकाश डाला गया है।

वेमन्ना का बचपन बहुत ही सुखमय था। इन्होंने घर पर ही तेलुगु का ज्ञान प्राप्त किया। इनके पिता तथा भाई विद्वानों का आदर करते थे तथा कविता-प्रेमी थे, अतः घर पर सदैव कवियों और पण्डितों का आगमन हुआ करता था। घर के वातावरण का प्रभाव वेमन्ना पर भी हुआ। वे बचपन से ही कविता में विशेष रुचि लेने लगे। भाई और भाभी इन्हें बेहद प्यार करते थे।

युवावस्था में ये एक वेश्या पर आसक्त हो गए। इस वेश्या के लिए वेमन्ना ने अपना पैसा और समय दोनों बर्बाद किए। जो हाथ लगता उस वेश्या को दे देते। एक बार इनके भाई अनवेमारेड्डी ने प्रजा से राजस्व प्राप्त किया। वेमन्ना ने

राजस्व का सारा रुपया वेश्या को दे दिया। जब घर में पैसा नहीं रहा तो वेश्या ने इन से आग्रह किया कि वे अपनी भाभी का चन्द्रहार ला कर दें। वेमन्ना उस वेश्या के लिए क्या नहीं कर सकता था? उसने भाभी से हार माँगा। भाभी भी वेमन्ना को बहुत प्यार करती थी। वह शक्ति भर इस बात का प्रयत्न करती थी कि वेमन्ना किसी प्रकार दुःखी न हो। चन्द्रहार की क्या बिसात थी। लेकिन भाभी ने चन्द्रहार देते समय वेमन्ना से कहा था कि वह चन्द्रहार देने से पहले उस वेश्या को नग्न करा के देख ले।

वेमन्ना के कहने पर जब वेश्या ने अपने को नग्न करके दिखाया तो वेमन्ना के मन से सारी वासनाएँ समाप्त हो गईं। जो वेश्या वस्त्राभूषण से सुसज्जित हो कर उसे आकर्षित करती थी। उसका वास्तविक रूप देख कर वेमन्ना का मन विषय वासनाओं से हमेशा के लिए मुक्त हो गया। वेमन्ना ने वेश्या को खूब खरी खोटी सुनाई और फिर वे तप करने के लिए चले गए। भोगी वेमन्ना योगी बन गया। कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था कि वेमन्ना इस तरह बदल जाएगा।

अब तो वेमन्ना का सारा समय अध्ययन, मनन और ध्यान में व्यतीत होने लगा। इस चिन्तन से वेमन्ना को ज्ञान की प्राप्ति हुई। इसी ज्ञान को इन्होंने अपनी कविताओं में व्यक्त किया है।

उन दिनों धर्म के नाम पर बाह्य कर्मकाण्डों की ही प्रधानता थी। सामान्य जनता ही नहीं पढ़े लिखे लोग भी धर्म के रहस्य को नहीं जानते थे। देवी-देवताओं के नाम पर पूजा-पाठ और दान-दक्षिणा तथा भेंट-बलि का बोल बाला था। ब्राह्मणों की कर्मकाण्ड प्रधान मान्यता के विरोध में शैव और वैष्णव विचारों को बल मिल रहा था। वीरशैव मत के प्रवर्त्तक बसवेश्वर और विशिष्टाद्वैत के प्रचारक रामानुजाचार्य ने धर्म के नाम पर चलनेवाली रूढ़ियों का विरोध किया। इन दोनों सम्प्रदायों ने जनता को अपनी ओर आकर्षित किया। रामानुजाचार्य और बसवेश्वर के अनुयायियों ने देशी भाषाओं में अनेक ग्रन्थों की रचना करके अपने गुरुओं के विचारों से साधारण जनता को परिचित कराया। इस प्रकार के तेलुगु ग्रन्थों में पालकुरिकि सोमनाथ की रचनाओं का विशेष महत्व है। श्रीनाथ कवि ने शिवरात्रि माहात्म्य आदि ग्रन्थों की रचना की। वेमुलवाड़ भीमकवि ने भी इस प्रकार की बहुत-सी कविताएँ लिखीं, परम्परागत रूढ़ियों के विरोध में इन कवियों, विचारकों और प्रचारकों के कारण जो वातावरण उत्पन्न हुआ उससे वेमन्ना अपरिचित नहीं थे। वेमन्ना ने शैव कवियों की प्रशंसा करते हुए अपने आप को शिव-भक्त और शैव कवि लिखा है।

शैव होने के साथ-साथ वेमन्ना अद्वैतवादी थे, ऐसा अद्वैतवादी जो कर्मकाण्ड और वर्णाश्रम धर्म के पालन का प्रतिपादन नहीं करता। वेमन्ना के पद्यों में हमें बहुत-सी परस्पर विरोधी बातें दिखाई देती हैं। इसका एक कारण यह हो सकता है कि शुरू-शुरू में वेमन्ना का ज्ञान अनुभवजन्य न रहा हो। जैसे-जैसे समय बीतता

गया उनके अनुभव में वृद्धि होती गई। उनकी आरंभिक रचनाओं में उत्पन्न सुलभ हुआ दृष्टिकोण नहीं मिलता जो प्रौढ़ावस्था की रचनाओं में मिलता है। वेमन्ना ने एक स्थान पर लिखा है—वेदमुलु प्रमाणमु कावु (वेद प्रमाणिक नहीं है,) दूसरी जगह लिखा—वेमन्ना वाक्यमुलु वेदमुलु सुंडी (वेमन्ना के वाक्य वेद के समान हैं,) एक स्थान पर इन्होंने लिखा है ब्रह्म, विष्णु, विश्व का अस्तित्व नहीं है तो दूसरी जगह लिखा है—गानमुललो सामगानमु, ध्यानमुललो शिव ध्यानमु श्रेष्ठमु (गानों में सामगान और ध्यानों में शिव ध्यान श्रेष्ठ है।)

वेमन्ना ने अपना ज्ञान केवल पुस्तकों से प्राप्त नहीं किया था। वे निरन्तर भ्रमण किया करते थे। इस भ्रमण में उन्होंने तरह-तरह के व्यक्ति देखे, विद्वानों का सम्पर्क मिला, समाज के प्रत्येक अङ्ग का अध्ययन कर सके। इन्हीं सब साधनों से वे अपनी रचनाओं में समाज की बुराइओं पर कस कर प्रहार कर सके हैं। उन दिनों जातियों और वर्गों में भेद विद्यमान थे। शैव और वैष्णवों के बीच भी कलह रहता था। वेमन्ना ने इस प्रकार के भेद भावों और वैमनस्य का विरोध किया। इन्होंने आचरण पर जोर दिया। ये स्वयं शैव थे, किन्तु इन्होंने एक स्थान पर लिखा है—चित्तशुद्धिलेनि शिव पूजा लेलरा (चित्त शुद्धि के बिना शिव की पूजा करने से कोई लाभ नहीं)। इन्होंने समाज को सुधारने के लिए कुरीतियों पर ऐसा कठोर प्रहार किया है कि व्यक्ति और समाज दोनों तिलमिला उठे। योगी होने के कारण इन्हें किसी निन्दा या प्रशंसा से मतलब नहीं था। इन्होंने समाज का गहराई से अध्ययन किया था अतः मर्म स्थल पर चोट करने में सफल हो सके।

वेमन्ना ने केवल बुराइयों का खण्डन करके ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं समझी, अपितु जनता के हित के लिए अच्छाइयों का समर्थन किया।

वेमन्ना भक्त, प्रचारक, चिन्तक और कवि साथ-साथ थे। इनके किसी भी रूप को पृथक् रख कर हम इनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन नहीं कर सकते। इन्होंने पण्डित समाज का ध्यान आकर्षित करने के बजाए सामान्य जनता के पथ प्रदर्शन का प्रयत्न किया है। सामान्य जनता के पथ प्रदर्शन के लिए ही इन्होंने कविता का आश्रय लिया था। इसीलिए इनकी कविता में जनता की भाषा का उपयोग हुआ है। इन्होंने कन्द, आटवेलदी जैसे छन्द और तेरगीतों की शैली अपनाई जिससे इनकी रचना जनता के कण्ठों में बस गई। हिन्दी के दोहे की तरह तेलुगु में द्विपद छन्द है द्विपद के बाद सरलता की दृष्टि से कन्द तथा उससे मिलते-जुलते छन्द आते हैं इन छन्दों के चार चरण होते हैं। वेमन्ना ने अधिकतर चार चरण के छन्दों में लिखा है। प्रत्येक पद्य के चौथे चरण में "विश्वदाभिराम विनुर वेम" रहता है। कुछ छन्दों में केवल 'वेमा' रहता है। कुछ लोग अभिराम को वेमन्ना का अभिन्न मित्र बतलाते हैं। वेमन्ना का जो चित्र छपता है उसमें अभिराम और वेमन्ना साथ-साथ बताए गए हैं। चित्र में अभिराम को सुनार वेमन्ना का मित्र बताया गया है। कहते हैं अभिराम

और वेमन्ना में अभिन्न मैत्री थी। वेमन्ना अभिराम के घर जाया करते थे। यह प्रतीत होता है कि वेमन्ना अभिराम से बहुत प्रभावित हुए थे। प्रश्न यह है कि वेमन्ना अपने पद्य अपने मित्र को सुना रहे हैं या गुरु होने के नाते कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिए वे अपने गुरु का उल्लेख कर रहे हैं, अथवा अभिराम से वे उपदेश ग्रहण कर रहे हैं।

वेमन्ना बहुत सहिष्णु और उदार थे। इन्होंने साधना पर जोर दिया है और गुरु के महत्व को स्वीकार किया है।

आटवेलदि गीतम् : **गुरुवु लेक विद्य गुरुतुगा दोरकदु**
नृपति लेक भूमि तृप्तिगादु;
गुरुवु विद्य लेक गुरुतर-द्विजुडौने ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"गुरु के बिना पूरी शिक्षा नहीं मिलती। राजा के बिना शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। गुरु-विद्या के बिना क्या कोई ब्राह्मण बन सकता है?"

अपने कुछ पद्यों में इन्होंने परमात्मा को अपना गुरु बताया है :

कंदपद्यमु : **गुरुडनगा परमात्मुडु**
परगंगा शिष्युडनग बट्टु जीवुडगुन्
गुरु शिष्य जीव संपद
गुरुतरमुग गूर्चुनतडु गुरुवगु वेमा ॥

"गुरु परमात्मा है और शिष्य आत्मा है। सद्गुरु ही इन दोनों में सम्बन्ध जोड़ता है।"

वेमन्ना ने कुछ स्थलों पर आत्मा-परमात्मा का पति-पत्नी के रूप में भी वर्णन किया है। इस सम्बन्ध में वेमन्ना का एक पद्य दिया जा रहा है :

आटवेलदि गीतम् : **रतियोनर्पबूनि सतिनि वेडिन यट्लु**
मतिनिवेडि परमु मरुगु देलिसि
गतिनिगोरुचुंद्रु वनयोगुलिललोन
विश्वदाभिराम विनुर वेमा ॥

"वेमा, सुनो; रति की इच्छा से जैसे पुरुष अपनी पत्नी को मनाता है उसी प्रकार योगी और मुनि मोक्ष के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।"

वेमन्ना अपनी अन्तिम अवस्था में योगियों की उच्च-अवस्था को प्राप्त हो गए थे। उन्होंने उस समय जो कविताएँ लिखी हैं, उनसे इस बात को प्रमाणित किया जा सकता है।

वेमन्ना ने कुल कितने पदों की रचना की, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता किन्तु इस सम्बन्ध में वेमन्ना का ही एक पद यहाँ दिया जाता है :

गीतपद्यमु : **वेयि नेनूरु पद्यमुल् वेड्कमीर**
पठनजेसिन मनुजुडु प्राभवमुग
मोक्षमार्गंबु नोंदुनु मोनसिवेग
सकल संस्कृति नेडबासि सरगवेम ॥

"जो मनुष्य वेमन्ना के १५ हज़ार पद्यों का भक्ति सहित पठन करता है वह भव-बन्धन से मुक्त हो कर मोक्ष का भागी बनता है।"

किन्तु अब तक वेमन्ना के ५ हज़ार पद्य ही उपलब्ध हुए हैं। बन्दर (मछली-पट्टणम्) की प्रति में ४०३५ पद्य हैं। इस संकलन में आटवेलदि, कंदमु, तेरगीत, सीसमु, चम्पकमाला, उत्पलमाल, मत्तकोकिल, गीतम्, चित्रपदम्, उत्साहम् आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। इन छन्दों के लक्षण अन्त में दिए गए हैं।

वेमन्ना कविता के सम्बन्ध में जो दृष्टिकोण रखते थे वह इस पद्य से ज्ञात हो सकता है :

आटवेलदि गीतम् : **निक्कमैन मंचि नील मोक्कटि चालु**
तलुकु बेलुकु राल्लु तट्टेडेल ?
चदुव पद्य मरय जालदा योकटैन
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"एक मूल्यवान मणि भी पर्याप्त है। चमकदार किन्तु मूल्यहीन पत्थरों के ढेर से क्या लाभ ? इसी तरह भावपूर्ण और ज्ञानदायक एक पद्य भी पर्याप्त है।"

वेमन्ना ने उन लोगों की निन्दा की है जो पेट भरने के लिए दूसरों की प्रशंसा में कविता बनाते थे।

वेमन्ना के पदों से यह ज्ञात होता है कि उन्होंने महाभारत, भागवत, रामायण, कई पुराण, पञ्चतंत्र और शैवमत के अनेक ग्रन्थों तथा काव्यों से सहायता ली है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर जो ज्ञान प्राप्त किया है उसका उपयोग भी किया है। इन्होंने जिन उपमाओं का उपयोग किया है, उनमें से बहुत-सी उपमाएँ बिल्कुल नई हैं। नीचे के पद्य में उपमा का प्रयोग देखिए :

आटवेलदि गीतम् : **उप्पु कप्पुरंबु नोक्क पोलिक नुंडु**
चूड जूड रुचुल जाडवेरु
पुरुषु लंदु पुण्य पुरुषुलु वेरया
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"नमक और कपूर देखने में समान दिखाई देते हैं, किन्तु दोनों का स्वाद भिन्न-भिन्न है। इसी तरह देखने में सारे मनुष्य एक जैसे दिखाई देते हैं किन्तु पुण्यवान पुरुष बिरले ही होंगे।"

वेमन्ना ने अपने अनुभव को व्यक्त करने के लिए अधिकांश पदों की रचना की है। यहाँ कुछ उदाहरण दिए जाते हैं जिनसे इनके अनुभव का ज्ञान मिल सकता है :

आटवेलदि गीतम् : **वित्तंबु गलवानि वीपु पुंडैननु**
वसुध लोन जाल वार्त केक्कु
पेद्वानि यिंट बेंड्लैन नेरुगरु
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"धनी व्यक्ति की पीठ पर छोटी-सी फुन्सी भी निकले, सारी दुनिया को उसका पता चल जाएगा; किन्तु गरीब के घर में विवाह हो जाए तब भी किसी को पता नहीं चलेगा।"

आटवेलदि गीतम् : **पुस्तकमुलु जडलु पुलितोलु वेत्तंबु**
कक्षपाललु पदि लक्ष लैन
मोत चेटे गानि मोक्षंबु निच्चुना
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"ढोंगी साधुओं द्वारा धारण की जानेवाली पोथी, जटा, वाघ-चर्म, छड़ी, कमंडलु आदि चीज़ें लाखों की संख्या में क्यों न जमा कर ली जाएँ उनसे बोझ ही बढ़ेगा, मुक्ति नहीं मिल सकती।"

वेमन्ना के नाम से कुछ गीत और त्रिपद भी प्रचलित हैं। इन्होंने वेदान्त के भावों को लेकर कुछ कूट-पद भी लिखे हैं। इन कूट-पदों में प्रयुक्त होनेवाले शब्द तो हमारे परिचित होते हैं किन्तु उनके अर्थ का पता चलाना सरल कार्य नहीं। यहाँ इनका एक पद्य दिया जा रहा है :

आटवेलदि गीतम् : **कृष्णपर्वमंदु कृत्तिक लैदुंडु**
कृत्तुलैदु पट्टि कृष्ण भ्रिंगे

वेलयु कृष्णलैदु वेमन्न म्रिंगेरा
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

वेमन्न सम्प्रदाय के अनुयायी इस पद का अर्थ इस प्रकार बतलाते हैं :

"अन्धकारमय गुफा में पंचतत्व हैं। उन पंचतत्वों को माया ने निगल लिया है और उस माया को वेमन्ना ने निगला है।"

हमने ऊपर लिखा है कि वेमन्ना ने सामान्य जनता के लिए लिखा है अतः सामान्य जनता के छन्दों, कहावत और मुहावरों तथा भाषा का प्रयोग इन्होंने अपनी कविता में किया है। इन्होंने मूर्ति पूजा तथा अन्य रूढ़िगत विश्वासों के विरुद्ध बहुत स्पष्ट रूप से अपना विरोध व्यक्त किया है :

आटवेलदि गीतम् हृदयमुन नुन्न ईशुनि तेलियक
शिलल केल्लम्रोक्कु जीवुलार !
शिललनेमियुंडु जीवुलंदे काक
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"पागल मनुष्य हृदयस्थ ईश्वर को न पहचान कर पत्थरों की पूजा करते हैं। उन पत्थरों में क्या रखा है ? परमेश्वर तो प्राणियों में निवास करता है।"

वेमन्ना ने स्त्रियों के सम्बन्ध में लिखा है :

आटवेलदि गीतम् : स्त्रीलु गलगुचोट चेल्लाटमुलु कलगु
स्त्रीलु लेनिचोट चिन्नबोवु
स्त्रीलचेत नरुलु चिक्कु चुन्नारया
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"जहाँ स्त्रियाँ होंगी वहीं हँसी-खुशी रहेगी। स्त्रियों के अभाव में संसार सूना मालूम देगा, किन्तु इन स्त्रियों के कारण ही मनुष्य प्रपञ्च में फँसता है।"

वेदान्त के सम्बन्ध में :

आटवेलदि गीतम् : टिप्पणमुलु चेसि चप्पनी माटलु
जेप्पुचुंदुरन्नि श्रुतुलु स्मृतुलु
विप्पि चेप्परेल ! वेदांत सारंबु
विश्वदाभिराम विनुर वेम ॥

"वेदान्त का अर्थ यह नहीं है कि वेदों और स्मृतियों पर टिप्पणियाँ लिखी जाएँ। होना यह चाहिए कि वेदान्त के रहस्यों को खोल कर सरल भाषा में जनता को समझाया जाए।"

वेमन्ना के धार्मिक और सामाजिक विचारों को ले कर आन्ध्र में एक सम्प्रदाय ही चल निकला। आज भी इस सम्प्रदाय के लोग पाए जाते हैं।

वेमन्ना के पद्यों का आन्ध्र में बहुत प्रचार हुआ है। आन्ध्र के छोटे-से-छोटे गाँव में एक बालक भी वेमन्ना के दो-चार पद सुना देगा। इनके पदों से समाज में अनेक सुधार हुए और भोले-भाले ग्राम वासियों को प्रकाश (ज्ञान) प्राप्त हुआ। इनके अधिकांश पदों का अर्थ सरलता से लगाया जा सकता है। इस दृष्टि से वेमन्ना ने आन्ध्र प्रदेश और तेलुगु भाषा की महान सेवा की है।

सर ब्राउन ने वेमन्ना के पदों का गम्भीर अध्ययन किया। इस अध्ययन के सिलसिले में उन्होंने कई स्थानों की यात्रा भी की थी। इन्होंने वेमन्ना के निवास-स्थान तथा जीवन-चरित्र जानने का भी बहुत प्रयत्न किया। सर ब्राउन ने वेमन्ना के अनेक पदों का अनुवाद अँग्रेज़ी में किया। अँग्रेज़ी में लगभग आठ सौ पदों का अनुवाद सर ब्राउन ने प्रकाशित किया। वेमन्ना के पदों में पाठभेद बहुत है, फिर भी ब्राउन ने उपलब्ध पाठभेदों का उल्लेख करते हुए प्रामाणिक संकलन प्रकाशित किया है, जिससे वेमन्ना के अध्ययन में बहुत सहायता मिली है।

साहित्य रसिक इस बात का प्रयत्न कर रहे हैं कि इनके समस्त पदों का प्रामाणिक संकलन करके तेलुगु में प्रकाशित किया जाए।

१४८० में श्रीरामनवमी के दिन इन्होंने ध्यानावस्थित हो कर प्राण छोड़े।

अल्लसानि पेद्दन्ना (१६ वीं शती)

कुछ विद्वानों का कथन है, अल्लसानि पेद्दन्ना का जन्म बल्लारी जिले के दूपाडु मण्डल के दोराल नामक ग्राम में हुआ। किन्तु इस कथन की पुष्टि के लिए पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। कवि ने प्रसंगवश अपने जन्म स्थान की ओर जो संकेत किया है, उससे इस कथन को बल नहीं मिलता। कवि ने मनुचरित्र में स्वयं लिखा है—कोकट गामाद्यनेका ग्रहारंबु लडिगिन सीमलनंदु निच्चे (मैंने राजा से कोकट गांव के पास जो प्रदेश माँगा था वह मुझे मिल गया।) इस कथन से कुछ लोगों ने अनुमान लगाया है कि कवि का जन्म कोकट ग्राम के आस-पास रहा होगा।

कडपा जिले के कमलापुरम् तालुके के पास कोकट ग्राम है। कोकट से कुछ दूर 'पेद्दन्नापाडु' नामक गाँव है। इस गाँव के पास 'पेद्दन्ना तालाब' बना है। इस गाँव में आज भी विवाहादि मांगलिक अवसरों पर 'अल्लसानि वालों का' ताम्बूल देने की प्रथा है। इस ग्राम में अल्लसानि परिवार को प्रथम ताम्बूल प्राप्त करने की

प्रथा क्यों है ? पेद्दन्ना के कारण इस परिवार को जो ख्याति मिली उसी के कारण ऐसा किया जाता होगा। कोकट ग्राम के पास ही पेद्दन्ना के गुरु शठकोपस्वामी रहते थे। प्राचीन कवियों की वंश परम्परा का निर्णय करना सरल कार्य नहीं है। ये लोग अपना परिचय अपने काव्य में अंकित नहीं करते थे। पेद्दन्ना ने अपने को चुक्कनामात्य का पुत्र बतलाया है।

पेद्दन्ना के गुरु का नाम शठकोपाचार्य था। पेद्दन्ना ने इन्हीं से संस्कृत और तेलुगु का अध्ययन किया। इन दोनों भाषाओं पर आपने शीघ्र ही अधिकार प्राप्त कर लिया। इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी अतः भरण-पोषण में कठिनाई होती थी। इस कठिनाई से छुटकारा पाने के लिए इन्होंने किसी राजा का आश्रय प्राप्त करना चाहा। ये कृष्णदेवराय के पाण्डित्य से परिचित थे। कृष्णदेवराय के दरबार में संस्कृत, तेलुगु और कन्नड़ के अनेक प्रकाण्ड पण्डित रहते थे।

कृष्णदेवराय के यहाँ पद्धति थी कि जब वे स्नानादि से निवृत्त हो भगवान की पूजा के लिए जाते तो पुरोहित लोग उनसे भेंट कर सकते थे। राजा ब्राह्मण का उचित सत्कार करते और ब्राह्मण राजा को आशीर्वाद देते। राजा से मिलने के इच्छुक कवि और पण्डित पुरोहितों के द्वारा राजा से मिलने की अनुमति प्राप्त करते थे। राजा की अनुमति मिलने पर वे लोग अपने कवित्व या पाण्डित्य का प्रदर्शन करते थे। पेद्दन्ना ने इस पद्धति को नहीं अपनाया और वे सीधे महामन्त्री श्री सालू निम्मरुसू के पास गए। वहाँ इन्होंने अपनी कविता सुनाई। जिससे महामन्त्री प्रसन्न हो गए। पेद्दन्ना ने महामन्त्री से कृष्णदेवराय से मिलने की इच्छा प्रकट की। महामन्त्री अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। एक दिन राजा ने महामन्त्री तिम्मरुसू से इच्छा व्यक्त की कि उनके अभियान के वृत्तान्त को इतिहास का रूप दिया जाए। इस कार्य के लिए महामन्त्री ने पेद्दन्ना का नाम लिया। कृष्णदेवराय ने पेद्दन्ना को अपना दरबारी बनाया।

पेद्दन्ना राजा को तत्काल कविता बना कर सुनाते। इनके आशुकवित्व और पाण्डित्य के कारण राजा शीघ्र ही इन पर कृपालु हो गए। दोनों मित्र की तरह काल-यापन करने लगे। पेद्दन्ना कवि ही नहीं थे किन्तु तलवार चलाने में भी दक्ष थे। इसलिए राजा के ये विशेष कृपा-पात्र बन सके। एक दिन राजा के बुलावे पर पेद्दन्ना राजा के साथ शिकार खेलने गए। जङ्गल में मूसलाधार-पानी बरसने लगा। दोनों निकट के गांव में गए। राजा एक किसान के घर में ठहरे और पेद्दन्ना एक ब्राह्मण के घर में चले गए। प्रातः काल होते ही सेना राजा को खोजती हुई आई। राजा सेना के साथ विजयनगर पहुँचे। दूसरे दिन पेद्दन्ना से राजा ने पूछा—'रात कैसे कटी ?' पेद्दन्ना ने उस घर की दरिद्रता का वर्णन किया जिसमें वह रात में ठहरा था। राजा को इस बात पर बहुत दुःख हुआ कि पेद्दन्ना को कष्ट के साथ रात बितानी पड़ी। इस प्रकार की अनेक कथाएँ प्रचलित हैं जो राजा और कवि की घनिष्ठता को प्रकट करती हैं।

कृष्णदेवराय के दरबार में आठ कवि थे जो अष्ट दिग्गज के नाम से प्रसिद्ध थे। कृष्णदेवराय का समय तेलुगु-साहित्य के लिए स्वर्ण युग था। इस समय अनेक प्रबन्ध काव्य लिखे गए। अल्लसानि पेद्दन्ना का मनुचरित्र, मुक्कु तिम्मन्ना का पारिजातापहरण, मल्लन्ना का राजशेखर चरित्र, धूर्जटि का कालहस्ती माहात्म्य, रामलिंग कवि का पाण्डुरंग माहात्म्य, रामचन्द्र कवि का सकल कथासार संग्रहण, रामराज भूषण का वसु चरित्र, पिंगली सूरन्ना का कला पूर्णोदय, प्रभावती प्रद्युम्न और राघव पाण्डवीय तथा कृष्णदेवराय का आमुक माल्यद मुख्य हैं। कृष्णदेवराय कला-प्रेमी, कवि और साहित्य के मर्मज्ञ थे। वे प्रति वर्ष नए कवियों का स्वागत-सत्कार किया करते थे।

पेद्दन्ना की कीर्त्ति का आधार मनुचरित्र है। कवि ने मनुचरित्र कृष्णदेवराय के आश्रय में रह कर आरंभ किया। मनुचरित्र की रचना का कारण बताते हुए कवि ने लिखा है, दरबार में बहुत से कवि उपस्थित थे। राजा ने कवि से कहा:

गीतपद्यमु: **"सप्त संतानमुललो प्रशस्ति गांचि**
खिलमु गाकुंडुनदि घात्रि कृतिय गान;
गृति रचिंपुमु माकु शिरीष कुसुम
पेशल सुधामयोक्तुल पेद्दनार्य!"

"इस पृथ्वी पर काव्य बहुत ही श्रेष्ठ वस्तु है। कवि, एक कृति हमारे लिए तैयार करो जिसमें शिरीष कुसुम जैसी कोमल उक्तियों का समावेश हो।"

कंदपद्यमु: **"हितुडवु चतुर वचो निधि**
वतुल पुराणाग मेतिहास कथार्थ
स्मृति युतुड वांघ्र कविता
पितामहुड वेव्वरीडु पेर्कोन नीकुन्"

"हे आन्ध्र कविता पितामह, तुम दूसरों का हित सम्पादन करनेवाले, सुयोग्य और वेद, स्मृति, पुराण आदि के ज्ञाता हो। तुम्हारी समता कौन कर सकता है?"

कंदपद्यमु: **"मनुवुललो स्वारोचिष**
मनुसंभव मरय रस समंचित कथलन्
विन िंपु कलि ध्वंसक
मनघ! भवच्चतुर रचन कनुकूलंबुन्"

"कविवर, स्वारोचिष मनु का जन्म तथा जीवन-चरित्र बहुत रसपूर्ण है। तुम अपनी चतुराई का उपयोग कर उसका वर्णन करो।"

गद्य : "कावुन मार्कंडेय पुराणोक्त प्रकारंबुन जेप्पु मनि
कर्पूर तांबूलंबु वेट्टिनन् बट्टि महा प्रसादंबनि मोदंबुन नम्महा प्रबंध
निबंधनंबुनकुन् आरंभिंचिति"

"मार्कण्डेय पुराण की शैली का अनुसरण करते हुए मनु-चरित्र लिखने के लिए राजा ने प्रेरणा दी और कर्पूरताम्बूलादि से सम्मान किया। इसे महाप्रसाद मान कर मैंने इस महाप्रबन्ध काव्य की रचना की।"

मनु चरित्र लिखने से पहले एक घटना और घटित हुई जब पहले पहल ये दरबार में पहुँचे, राजा ने इनसे एक सुन्दर काव्य लिखने का अनुरोध किया। इस पर कवि ने कहा :

चम्पकमाला : "निरूपहति स्थलंबु रमणी प्रिय दूतिक तेच्चि इच्चु क
प्पुर विडे मात्म किंपैन भोजन मुय्यल मंच मेप्पु त
प्परयु रसज्ञलूः तेलियंगल लेखल पाठकोत्तमुल्
दोरकिन गाक यूरक कृतुल् रचियुंपु मटन्न शक्यमें ?"

"सुन्दर भवन, इच्छित भोजन, सुख के समस्त साधन, सुन्दर परिचारिकाओं द्वारा लाया गया कर्पूरयुक्त ताम्बूल तथा अपनी गल्तियों को समझने के लिए विद्वानों के उत्तमोत्तम ग्रन्थों के बिना क्या काव्य लिखा जा सकता है ?"

कहना न होगा राजा ने इन्हें उपरोक्त सभी सुविधाएँ प्रदान कर दी थीं। इन्हीं सब सुविधाओं के कारण वे निश्चिन्त हो कर सुन्दर काव्य रचना कर सके।

मनुचरित्र के आधार पर यह बताया जाता है कि यह रचना उस समय शुरू की गई जब कृष्णदेवराय ने अपने विशाल साम्राज्य की स्थापना कर ली थी।

पेद्दन्ना ने राजा के द्वारा अपने लिए आन्ध्र-कविता पितामह कहलवाया है। यह प्रसिद्ध है कि राजा ने पेद्दन्ना को 'आन्ध्र कविता पितामह' की उपाधि से सुशोभित किया था। कृष्णदेवराय जैसे पण्डित और कवि राजा से इतनी बड़ी उपाधि प्राप्त करना पेद्दन्ना की महत्ता को प्रदर्शित करता है। कुछ लोगों ने इस सम्बन्ध में आपत्ति उठाई है कि कवि का पहला काव्य मनुचरित्र है, ऐसी अवस्था में उन्हें इतनी बड़ी उपाधि इस काव्य की रचना से पहले ही कैसे मिल सकी ? इस आशंका का निराकरण करते हुए उत्तर दिया जाता है कि जब आधा काव्य तैयार हो गया तो कवि ने उसे दरबार में पढ़ कर सुनाया। कवि की प्रतिभा पर मुग्ध हो कर उसी समय राजा ने यह उपाधि प्रदान की थी।

कृष्णदेवराय तेलुगु के भक्त थे। वे तेलुगु को सर्वोत्तम भाषा मानते थे। इस सम्बन्ध में उनका यह पद्य उल्लेखनीय है :

आटवेलदि गीतम् : "तेलुगदेल यन्न देशंबु तेलुगेनु
देलुगु वल्लभुंड देलुगोकंड
येल्ल भाषलंदु नेरूगमे बासाडि
देश भाष लंदु तेलुगु लेस्स"

"तेलुगु में कविता इसलिए होती है कि यह तेलुगु भाषी प्रदेश है, यहाँ सर्वत्र तेलुगु बोली जाती है। मैं तेलुगु-भाषी हूँ और तेलुगु-भाषियों का राजा हूँ यदि तुम अन्य भाषाओं में भाषण या वार्त्तालाप कर के देखो तो सभी देशी भाषाओं में तेलुगु ही सर्वोत्तम प्रतीत होगी।"

कृष्णदेवराय विजयनगर के आदर्श नरेश थे। इनके शासन में विजयनगर ने अभूतपूर्व उन्नति की। व्यापार और उत्पादन के कारण पूरा प्रदेश धन-धान्य से भरा-पूरा था। उस समय अनेक विदेशी यात्रियों ने विजयनगर की यात्रा की और अपने विवरणों में विजयनगर की प्रशंसा की। इस सुख-शान्ति और कला-प्रेम का प्रभाव पेद्दन्ना पर भी पड़ा। इस वातावरण के कारण ही वे मनुचरित्र जैसा अद्भुत काव्य लिख सके। पेद्दन्ना ने कृष्णदेवराय के राज्य को राम-राज्य बताया है।

एक दिन की घटना है—दरबार में सभी कवि अपने-अपने आसन पर विराजमान थे। प्रसंगवश राजा ने प्रश्न किया—"इस समय कालिदास जैसा कवि नहीं है।" राजा के इतना कहते ही महाकवि पेद्दन्ना ने कहा—"भोज जैसा राजा भी तो नहीं है।"

राजा ने अभिमानपूर्वक प्रश्न किया—"हे कवि, क्या मैं राजा भोज नहीं हूँ?"

कवि ने इतनी ही दृढ़ता से प्रश्न किया—"यदि आप राजा भोज हैं तो क्या मैं कालिदास नहीं हूँ?"

राजा के प्रश्नों का उत्तर कवि तत्काल दे देते थे। कवि अपने इष्टदेव हयग्रीव से यही प्रार्थना करते थे कि उनकी तत्काल उत्तर देने की प्रतिभा कभी कलंकित न हो।

एक दिन राजा दरबार में आते-आते रास्ते में उस वेश्या के घर में चले गये जिसके घर वे पहले दिन गये थे। वेश्या ने सोचा न जाने राजा फिर कब आये अतः वह अपने साज-सिंगार में तल्लीन रही। जब वह रेशमी साड़ी पहन रही थी राजा ने पीछे से जा कर आँचल पकड़ लिया जिससे साड़ी स्थान से हट गई। उस तरुणी ने लज्जावश अपना कंकण-शोभित हाथ उस स्थान पर रखा जहाँ से आँचल सरका था। राजा ने हँस कर कहा—घबराओ मत सुन्दरी! मैंने मज़ाक के लिए तुम्हारा आँचल सरकाया था।

राजा वेश्या के घर से दरबार में आए। उनका मुँह प्रफुल्लित हो रहा था। उन्होंने आन्ध्र कवि पितामह कह कर पेद्दन्ना को सम्बोधित करते हुए समस्या-पूर्ति के

लिए समस्या दी "नागकुमार डो यनन्"। पेद्दन्ना ने अनुनय के साथ कहा कि मैं इस समस्या की पूर्ति आपको एकान्त में सुनाऊँगा। किन्तु राजा नहीं माने और पेद्दन्ना को सब के सामने समस्या-पूर्ति सुनानी पड़ी। समस्या इस प्रकार पूर्ण की गई :

चम्पकमाला : "**वरुडु चेरंगु पट्टुकोन वल्व दोलंगिन लेम सिग्गुतो**
गुरुतर रत्न धीचितुल नोप्पेडु डापलि चेयिमूयगा
गरमुकुरंबुगा नमरेगा......मु व्रालियुन्नवि
स्फुरित फणामणि प्रभल बोल्चेडु नागकुमारुडोयनन्"

"प्रियतम ने जब प्रेयसी के आँचल को पकड़ा तो आँचल हट गया। उस युवती ने अमूल्य रत्नों से जटित अलंकारों से शोभित हाथ से अपने वक्षस्थल को छिपा लिया। उस समय वह हाथ मुकुर जैसा बन गया। वह हाथ उस समय ऐसा प्रकाशमान हो रहा था जैसे प्रकाशमान मणि से नाग कुमार शोभित हो रहा हो। उस युवती की अंगुली में जो अंगूठी थी वह नागमणि के सदृश थी।"

राजा मारे आनन्द के उछल पड़ा। उसने दौड़ कर कवि को गले से लगा लिया और कहा—"कवि, तुम सचमुच कालिदास हो, किन्तु मैं भोज नहीं हूँ।"

इस दृश्य को देख कर दरबार के सारे कवि कृष्णदेवराय की सरलता पर मुग्ध हो गए।

पेद्दन्ना कविता बोलते जाते थे और उनकी कविता लिखने के लिए राजा ने अपने दरबार के एक अन्य कवि तेनालि रामलिंगम् को नियुक्त कर दिया था। तेनालि रामलिंगम् हास्य के लिए आन्ध्र में बहुत प्रसिद्ध हैं।

राजा ने बाहर से आनेवाले कवियों और पण्डितों के जाँचने का काम पेद्दन्ना को सौंपा था। प्रायः यह देखा जाता है कि कवि दूसरे कवि का और विद्वान् दूसरे विद्वान् का ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं कर सकते किन्तु पेद्दन्ना बहुत ही उदार और निष्पक्ष व्यक्ति थे। उन्होंने अपना काम बहुत अच्छे ढंग से निभाया।

पेद्दन्ना त्यागी भी थे। कृष्णदेवराय ने पेद्दन्ना को कोकट ग्राम दिया था। इस गाँव का नाम कवि ने अपने गुरु के प्रति श्रद्धा प्रकट करने के लिए शठकोपपुर रखा। जब पेद्दन्ना वैष्णव धर्म में दीक्षित हुए तो उन्होंने यह ग्राम वैष्णवों को दान में दे दिया। इसी तरह एक ताम्रपत्र मिला है, जिसमें इस बात का उल्लेख है कि पेद्दन्ना ने शक १४४० (१५१७ ई.) में बहुत-सी ज़मीन सकलेश्वर स्वामी के निर्वाह के लिए प्रदान की।

कवि अपने पूर्ववर्ती कवियों का बहुत आदर करते थे। इन्होंने अपने काव्य के आरम्भ में सरस्वती, गणेश और गुरु की स्तुति के बाद वाल्मीकि, व्यास, नन्नय, तिक्कन्ना आदि की प्रशंसा की है।

कहा जाता है तिक्कन्ना ने मनुचरित्र के अतिरिक्त 'गुरुस्तुति' और 'हरिकथा सारमु' नामक दो ग्रन्थ और लिखे थे। पेद्दन्ना का 'मनुचरित्र' तेलुगु-साहित्य का शृंगार है। इस काव्य का सारांश निम्न प्रकार है—

आर्यावर्त में वरुणा नदी के तट पर अरुणास्पद नामक नगर था, जहाँ प्रवर नामक ब्राह्मण निवास करता था। ब्राह्मण सुन्दर और शिक्षित था। वह ब्राह्मणोचित नित्य-कर्मों को सम्पादित करता था, एकपत्नीव्रत का पालन करता था और पत्नी के साथ माता-पिता की सेवा किया करता था। अपनी भूमि से प्राप्त अन्न पर निर्वाह करता था।

एक दिन एक तपस्वी प्रवर के घर पहुँचे। प्रवर ने विधिपूर्वक अतिथि का सत्कार करके तपस्वी से निवेदन किया कि वे अपने देखे हुए सुरम्य प्रदेशों का वर्णन करें। मुनि ने वर्णन करते हुए हिमालय की शोभा और महिमा बताई। वर्णन सुन कर प्रवर को इन सुन्दर प्रदेशों की यात्रा करने की इच्छा हुई। किन्तु हिमालय के सुन्दर दृश्यों को देखने के लिए बहुत समय अपेक्षित था। प्रवर ने तपस्वी से प्रार्थना की कि वे कोई ऐसा साधन बताएँ जिससे अल्प समय में सभी सुन्दर-स्थल देखे जा सकें। तपस्वी ने प्रवर के पाँवों में एक रस का लेप करते हुए कहा वे अब थोड़े ही समय में इच्छित प्रदेशों की यात्रा कर सकेंगे।

प्रवर उस लेप के प्रभाव से शीघ्र ही हिमालय पहुँच गए। जब उन्होंने हिमालय के सुन्दर प्रदेशों की यात्रा करके घर लौटने का विचार किया तो उनकी गति शिथिल हो गई। ताप और हिमजल के कारण प्रवर के पाँवों का लेप धुल गया था। अब तो वे हिम-प्रदेशों में इधर-उधर भटकने लगे। इसी समय वरूथिनी नामक गन्धर्व स्त्री दिखाई दी। प्रवर ने उस स्त्री से शीघ्र ही घर लौटने का उपाय पूछा। इधर उस स्त्री ने कामदेव को पराजित करनेवाली प्रवर की सुन्दर आकृति देखी तो वह मोहित हो गई। वरूथिनी ने प्रवर से प्रार्थना की कि वह उसके साथ रह कर सुख-भोग करे। जितेन्द्रिय प्रवर ने वरूथिनी की प्रार्थना अस्वीकार कर दी। जब वरूथिनी धृष्टता करने लगी तो प्रवर ने उसे ढकेल दिया और अग्निदेव के मन्त्र-बल से घर पहुँचे। इस संकलन में यही अंश दिया गया है।

प्रवर घर पहुँच गए। वरूथिनी अपमानित होने पर भी प्रवर से प्रेम करती रही। उसका प्रेम-भाव दिन-दिन बढ़ता ही गया। वियोग के कारण उसकी बुरी दशा थी। इससे पूर्व एक गन्धर्व कुमार ने वरूथिनी से प्रणय-याचना की थी। वरूथिनी ने कुमार की यह याचना ठुकरा दी थी। उस गन्धर्व कुमार ने योग-बल से जान लिया कि वरूथिनी प्रवर पर अनुरक्त है। वह प्रवर का वेश धारण कर वरूथिनी के पास पहुँचा। वरूथिनी इस भेद को न समझ सकी। वह गर्भवती हो गई। गन्धर्व-कुमार ने सोचा उसका भेद किसी न किसी दिन खुल जाएगा अतः वह बहाना बना कर वहाँ से चला गया।

वरूथिनी ने स्वरोची नामक पुत्र को जन्म दिया। स्वरोची ने महर्षियों से राजोचित विद्याएँ प्राप्त कीं और मन्थर पर्वत पर राज्य करने लगा। एक दिन स्वरोची शिकार खेल रहा था। उसे कहीं से करुण क्रन्दन सुनाई दिया। एक स्त्री 'त्राहिमाम्, त्राहिमाम्' कहती हुई उसके पास आई। अभय प्राप्त करके उस स्त्री ने कहा—मैं इन्दीवराक्ष नामक गन्धर्वराज की पुत्री हूँ। मनोरमा मेरा नाम है। एक दिन मैं अपनी सखी कलावती और विभावरी के साथ वन में विहार कर रही थी। बालसुलभ चपलता से मैंने एक मुनि के केश पकड़ कर खींचे जो मकड़ी के जाले की तरह लटक रहे थे। मुनि का ध्यान भंग हुआ। उसने शाप दिया—तुम राक्षस का भक्ष्य बनोगी। मेरी सखियों ने ऋषि को भला-बुरा कहा। तब ऋषि ने उन सखियों को शाप दिया—तुम दोनो क्षय से पीड़ित होगी। मनोरमा ने स्वरोची को असहृदय नामक विद्या दी। उसने स्वरोची से प्रार्थना की कि वह राक्षस से उसकी रक्षा करे।

इसी समय वहाँ भयानक राक्षस आया। स्वरोची ने उस राक्षस का संहार किया। मरने के बाद उस राक्षस ने अपना वास्तविक रूप धारण करके स्वरोची को आत्म-कथा सुनाई—"मैंने गुप्त रूप से एक मुनि के पास आयुर्वेद सीखा था। जब मुनि को मेरी वास्तविकता का ज्ञान हुआ तो उन्होंने शाप दिया—दुष्ट, राक्षस बन। मेरा नाम इन्दीवराक्ष है और मैं इस मनोरमा का पिता हूँ।"

मनोरमा ने पिता को पहचान कर नमस्कार किया। इन्दीवराक्ष ने स्वरोची को आयुर्वेद सिखा कर मनोरमा का विवाह उसके साथ कर दिया। स्वरोची ने मनोरमा की दोनों सखियों की चिकित्सा करके उनके साथ भी विवाह कर लिया।

स्वरोची को तीनों रानियों से तीन पुत्र हुए। उसने अपना राज्य तीनों लड़कों में बाँट दिया।

किसी समय हंस और चक्रवाक ने स्वरोची की कामुकता का परिहास किया। स्वरोची ने अपनी पत्नी विभावरी से पशु-पक्षियों की भाषा जान ली थी। उसने हंस और चक्रवाक के परिहास से लज्जा अनुभव की। एक दिन मृग-मृगी ने भी स्वरोची पर व्यंग कसा। इसी समय वनदेवी मृगी का रूप धारण कर राजा के सामने आई और उससे प्रार्थना की मुझे अपना स्पर्श-सुख प्रदान कीजिए।

राजा ने जब उस मृगी को स्पर्श किया तो वह एक सुन्दरी बन गई। उसने अपना पूर्व वृत्तान्त सुनाया—मैं वनदेवी हूँ। देवताओं की इच्छा के अनुसार मैं आपको पति रूप में ग्रहण कर मनु को जन्म देने के लिए आई हूँ। आप मुझे ग्रहण कर देवताओं की इच्छा पूरी कीजिए।

स्वरोची ने वनदेवी की इच्छा पूरी की। वनदेवी ने जिस पुत्र को जन्म दिया। उस पुत्र का नाम रखा गया स्वारोचिष मनु। स्वारोचिष मनु ने विष्णु से अनेक वर प्राप्त किए। बहुत समय तक उन्होंने राज्य किया और उनकी गिनती मनुओं में हुई।

अल्लसानि पेद्दन्ना को परवर्ती कवियों ने बहुत आदर के साथ स्मरण किया है। तेलुगु की यह उक्ति पेद्दन्ना के महत्व को भली भाँति प्रकट करती है :

कंदपद्यमु : "पेद्दनवले कृति सेप्पिन
बेद्दनवले लेकयुन्न बेद्दनवलेना ?
येद्दनवले मोद्दनवले
प्रद्दनवले गुंदवरपु कवि चौडप्पा ?"

"जो व्यक्ति पेद्दन्ना की तरह कविता करता है वह बड़ा आदमी है जो पेद्दन्ना की तरह कविता नहीं कर सकता उसे बैल कहना चाहिए, चील कहना चाहिए, मूर्ख कहना चाहिए।"

चेमकूर वेंकटकवि (१७ वीं शती)

विजयनगर साम्राज्य के पतन के बाद आन्ध्र प्रान्त कई खण्डों में विभक्त हो गया। आन्ध्र में अनेक सामन्तों ने अपने-अपने राज्यों की स्थापना की। ये सामन्त या राजा तेलुगु के कवियों का आदर करते थे। इन राज्यों में मदुरा और तंजौर के राज्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। दोनों राज्यों के नरेश तेलुगु-भाषी थे। कृष्ण-देवराय के पश्चात् अच्युतदेवराय विजयनगर के शासक बने। इन्होंने अपनी साली का विवाह चेव्वप्पा नायक से किया और दहेज में तंजौर का राज्य दिया। चेव्वप्पा को एक लड़का हुआ जिसका नाम था अच्युतनायक। इसने १५६१ में तंजौर का राज्य अपने हाथ में लिया। इसने ४० वर्ष तक शासन किया। इसके पुत्र रघुनाथराय ने पिता की वृद्धावस्था में शासन-कार्य अपने अधिकार में लिया। विजयनगर के सामन्तों में तंजौर के शासक ही अधिक विश्वसनीय थे। तंजौर के नायक राजाओं ने चोल प्रदेश पर अपना आदेश चलाया और पाण्ड्य देश पर भी अधिकार जमाया। तंजौर नरेशों ने आन्ध्र से पुरोहितों, ज्योतिषियों, कवियों और पण्डितों को अपने यहाँ निमन्त्रित किया। तंजौर में जो साहित्यिक वातावरण उत्पन्न हुआ उसके कारण तेलुगु को बड़ा लाभ पहुँचा। इस समय जो पुस्तकें लिखी गईं उनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—विजयविलासमु, सारंगधर चरित्र, वाल्मीकि चरित्र, रामायण, मन्नारुदास विलासमु, रघुनाथाभ्युदयमु, राजगोपाल विलासमु, उषा परिणयमु, विप्रनारायण चरित्रमु, सत्यभामा स्वान्तनमु, शशांक विजयमु, आन्ध्र भाषार्णवमु (तेलुगु-कोष)। इनमें विजयविलासमु का प्रबन्ध-काव्य के नाते विशेष स्थान है। इस काव्य के लेखक हैं श्री चेमकूर वेंकटकवि।

चेमकूर वेंकटकवि का जीवन-वृत्तान्त भी पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं है। तंजौर के

राजा रघुनाथ नायक के दरबार में बहुत से संस्कृत और तेलुगु के कवि रहते थे। चेमकूर वेंकटकवि को भी इनका आश्रय प्राप्त हुआ था। राजा रघुनाथ नायक स्वयं कवि और विद्वान् थे। साहित्य और संगीत में उनकी समान गति थी। इन्होंने तेलुगु में रामाभ्युदयमु, वाल्मीकि-चरित्र और रामायण की रचना की। तंजौर के नायक राजाओं में इन्होंने सबसे अधिक कीर्ति अर्जन की। रघुनाथ नायक ने उसी शासन पद्धति पर आचरण किया जो कृष्णदेवराय तथा चालूक्य नरेशों ने निर्धारित की थी। इन्होंने अनेक देवालयों का निर्माण किया। संगीत, नृत्य, काव्य आदि ललितकलाओं की वृद्धि में योग दिया। साहित्य तथा कला-प्रेम के कारण रघुनाथ नायक को आन्ध्र भोज भी कहा जाता है। इनकी दो पत्नियाँ थीं। एक का नाम था रामभद्रांबा जो स्वयं कवि थीं। इन्होंने श्री रघुनाथाभ्युदय नामक काव्य लिखा जिसमें रघुनाथराय की जीवनी को पद्य-बद्ध किया गया है। संस्कृत और तेलुगु के विद्वान् कृष्णाध्वरी ने रघुनाथ को पाँच काव्य समर्पित किए, जिनमें नैषध पारिजात, श्री रघुनाथ भूपालीय और कौमुदी कन्दर्प उल्लेखनीय हैं। वरदराज कवि ने द्विपद रामायण, श्री रंग माहात्म्य और परम भागवत चरित्र इन्हीं के दरबार में रहते हुए लिखे थे। श्री गोविन्द दीक्षितुलु और कवयित्री मधुरवाणी को इनका आश्रय प्राप्त था। इनके दरबारी कवियों में कवि चौडप्पा भी एक थे।

रघुनाथराय भी अपने बाप-दादा की तरह दीर्घजीवी नहीं हुए और थोड़ी आयु में ही १६३३ में अपने पुत्र विजय राघव नायक को राज्य सौंप कर स्वर्गवासी हुए। तंजौर में इस समय भी 'सरस्वती महल' नामक पुस्तकालय है जहाँ तेलुगु की बहुत-सी पुस्तकें हैं। यह पुस्तकालय रघुनाथराय के कारण ही अस्तित्व में आ सका। चेमकूर वेंकटकवि ने रघुनाथ के लिए उचित ही लिखा है :

उत्पलमाला : **"तारसपुष्टिमै अति प**
दंबुनु जातियु वार्तयु जम
त्कारमु नर्थ गौरवमु
गल्ग ननेक कृतुल् प्रसन्न गं
भीरगतिन् रचिंचि सहि मिंचिनचो
निकनन्यु लेव्व र
य्या ! रघुनाथभूप रसि
कप्रणिकिं जेविसोक जेप्पगान् ।"

"हे रघुनाथ भूप, आप स्वयं रसिक शिरोमणि हैं, आपको कविता सुनाने की शक्ति किस में है ? आपकी कविता में रसों का ठीक-ठीक उपयोग होता है। प्रत्येक पद में चमत्कार है। प्रवाहपूर्ण गम्भीर भावनाएँ हैं। आपने अनेक अनुपम कृतियों

की रचना करके आपने संसार में अनूठा स्थान प्राप्त कर लिया है। आप को कविता द्वारा प्रसन्न करनेवाला कवि कौन है ?"

रघुनाथराय जैसे विद्वान् और गुणग्राही राजा के यहाँ चेमकूर वेंकटकवि को विशेष आदर प्राप्त था। इसी से कवि के महत्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

वेंकटकवि तेलुगु और संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। इनकी सब से बड़ी विशेषता थी इनका नम्र स्वभाव। इन्होंने विजयविलासमु और सारंगधर चरित्र नामक दो काव्य लिखे। यहाँ विजयविलासमु के सम्बन्ध में कुछ परिचय दिया जाता है।

विजयविलासमु एक प्रबन्ध काव्य है जिसमें तीन आश्वास हैं। अर्जुन ने उलूपी, चित्रांगदा और सुभद्रा से विवाह किया था। इस काव्य में इन तीनों विवाहों की कथा बहुत ही रोचक ढंग से दी गई है। श्लेष के लिए तेलुगु के दो काव्य प्रसिद्ध हैं—वसुचरित्र और विजयविलासमु। वसुचरित्र में संस्कृत के शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है किन्तु विजयविलासमु में जहाँ तक हो सकता है भाषा को अधिक से अधिक स्वाभाविक रखा गया है और फिर भी उसमें श्लेष का चमत्कार देखने योग्य है।

काव्य की कथा छोटी-सी है। धर्मराज युधिष्ठिर केलिगृह में थे, इसी समय अर्जुन को किसी ब्राह्मण की गाय की रक्षा के लिए जाना पड़ा। अर्जुन जब शस्त्र लेने के लिए शस्त्रागार में जा रहे थे तो उन्हें केलिगृह से गुजरना पड़ा। इस अपराध में उन्हें एक वर्ष तक भ्रमण करना पड़ा। अर्जुन ने सुभद्रा के सौन्दर्य का वर्णन सुना था। इस यात्रा में अर्जुन ने सुभद्रा को प्राप्त करने का प्रयत्न किया। जब वे भागीरथी के किनारे आराम कर रहे थे, नाग कन्या उलूपी अर्जुन के सौन्दर्य पर मुग्ध हो कर उन्हें तन्त्र बल से पाताल-लोक में ले गई। जब अर्जुन की आँखें खुलीं तो उन्होंने अपने को अकेला पाया, संगी-साथी दिखाई नहीं दिए। अर्जुन ने उलूपी को अपने पास देख कर उससे पूरा हाल पूछा। उलूपी ने अर्जुन से विवाह करने के लिए प्रार्थना की, किन्तु अर्जुन तैयार नहीं हुए। अर्जुन अपनी बात के लिए तर्क देते थे और उलूपी अपनी बात का समर्थन करती थी, किन्तु अर्जुन के तर्कों को सुन कर उलूपी निरुत्तर हो गई। अन्त में उलूपी ने तर्क का सहारा छोड़ दिया, उलूपी की आँखों से आँसू बहने लगे। ये आँसू उलूपी के प्रेम को प्रकट कर रहे थे तब अर्जुन ने उसके साथ विवाह करने का निश्चय किया। उलूपी को अर्जुन से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। एक बार अर्जुन ने अपने संगी-साथियों से मिलने की इच्छा प्रकट की तो उलूपी ने उन्हें पृथ्वी लोक पर पहुँचा दिया। अर्जुन अपने साथियों के साथ हिमालय के रम्य दृश्यों को देखने के लिए गए। इस संकलन में इतना अंश दिया गया है। शेष दो आश्वासों में चित्रांगदा और सुभद्रा के विवाह का वर्णन है।

कहा जाता है चेमकूर वेंकट कवि ने यह प्रतिज्ञा की थी कि वे प्रत्येक पद में श्लेष का प्रयोग करेंगे। विजयविलासमु में इस प्रतिज्ञा का पालन पूरी तरह किया गया है। तेलुगु की कहावतों का प्रयोग भी उचित रूप से हुआ है। बीच बीच में कुछ विचित्र प्रसंगों का वर्णन करके काव्य को चमत्कार पूर्ण बनाया है।

अर्जुन और सुभद्रा के प्रेम का वर्णन बहुत अच्छा हुआ है। कृष्ण की चतुराई और बलराम का भोलापन बहुत ही उचित रूप से चित्रित हुआ है। सुभद्रा जब पीहर छोड़ कर ससुराल जाती है तो उसका विलाप मन में करुणा उत्पन्न करता है।

आन्ध्र प्रान्त के आचार-व्यवहार और तत्कालीन परिस्थितियों का चित्रण इस काव्य में बहुत अच्छी तरह हुआ है। इस काव्य में शृंगार रस की प्रधानता है। नख-शिख वर्णन और ऋतु वर्णन भी अच्छा हुआ है। काव्य में कुछ स्थानों पर शृंगार का ऐसा वर्णन हुआ है कि उसे सहज ही में अश्लीलता की संज्ञा दी जा सकती है, किन्तु यह अश्लीलता इस सीमा को नहीं पहुँचती है, जिसे त्याज्य समझा जा सके।

चेमकूर वेंकट कवि अपने पद-लालित्य और प्रसाद गुण के कारण पाठक का मन मोहित कर लेता है।

व्याकरण छन्द

दक्षिण के एक बहुत बड़े प्रदेश में तेलुगु बोली जाती है। इसकी विशेषता यह है कि इसकी संज्ञाएँ स्वरान्त होती हैं। इस लिए संज्ञाओं के स्वरान्त होने के कारण तेलुगु बहुत ही मधुर भाषा है। मधुरता के कारण तेलुगु भारत की भाषाओं में विशेष स्थान रखती है। तेलुगु द्राविड परिवार की भाषा मानी जाती है फिर भी इस पर संस्कृत का बहुत प्रभाव पड़ा है। यहाँ तक कि तेलुगु का व्याकरण भी पाणिनि के व्याकरण के अनुकरण पर बनाया गया है। साहित्यिक तेलुगु में ६० प्रतिशत संस्कृत शब्दों का प्रयोग हुआ है। इस से संस्कृत की समान शब्दावली के कारण हिन्दी और तेलुगु में बहुत समानता है।

हिन्दी में जितने स्वर होते हैं, तेलुगु में उनके अतिरिक्त उतने ही स्वर और व्यंजन हैं, ए (ह्रस्व) और ओ (ह्रस्व) स्वर अधिक हैं। व्यंजनों में 'च' और 'ज' मूर्धन्य 'र' (शकटरेफ) और ळ अधिक हैं, परन्तु उर्दू के कारण हिन्दी में क़, ख़ आदि जो ध्वनियाँ आई हैं वे तेलुगु में नहीं हैं। हम यहाँ तेलुगु का पूरा व्याकरण न लिख कर संक्षेप में उन नियमों का उल्लेख करेंगे जो हिन्दी में नहीं हैं।

तेलुगु के शब्द-भण्डार को हम चार भागों में विभक्त कर सकते हैं। तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी। संस्कृत के जिन शब्दों को तेलुगु में उसी रूप में अपनाया गया वे तत्सम शब्द हैं। संस्कृत और प्राकृत के जिन शब्दों का विकृत प्रयोग तेलुगु में होता है वे तद्भव कहलाते हैं, जैसे—अप्सर=अच्चर, वर्ति=वन्ति, गर्दभ=गाडिद, काचमु=जाजु, स्थिर=तिर, स्वामी=सामी, संस्कृत के तत्सम शब्दों को अपनाते समय तेलुगु के कुछ प्रत्यय भी लगा देते हैं जैसे—राम=रामुडु, वृक्ष=वृक्षमु, विष्णु=विष्णुवु। कुछ शब्दों में तेलुगु प्रत्यय नहीं जोड़े जाते।

देशज शब्द वे हैं जो तेलुगु में प्राचीन काल से व्यवहृत होते हैं और जिनका सम्बन्ध संस्कृत या किसी अन्य भाषा से नहीं है—आलु=मगडु आदि विदेशी शब्द हैं जो अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी या देश की अन्य भाषाओं से तेलुगु में आ गए हैं जैसे—कचहरी, स्टेशन, दस्तावेज, नक़द, कोर्ट, पोस्टाफीस आदि मुसलमानों के शासन काल में अरबी, फ़ारसी के अनेक शब्द आ गए। ज़िला, जेब, झण्डा, आफ़त, झगड़ा, क़ायम, ग़लीज़, तर्जुमा, तारीख़, दगा, दूकान, दफ़ा, तमाशा, तकरार, जमाबन्दी, आदि शब्द तेलुगु के अपने हो गए हैं। कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो तेलुगु में मूल भाषा के अर्थ में नहीं दूसरे अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। तेलुगु में दावा का अर्थ मुकदमा होता है; चिन्ता का दुख, अवसर का जरूरत और तरुण का समय। इनके अलावा वाक्य-रचना, लिंग-निर्णय, विभक्तियों के प्रयोग में भी विशेष

अन्तर है । वाक्य रचना के दो-तीन उदाहरण देखिए :

हिन्दी	तेलुगु
उसके देखते ही	वह देखते ही
आपको बोलना चाहिए	हम बोलना चाहिए

लिंग-भेद : हिन्दी में दो ही लिंग हैं, परन्तु तेलुगु में तीन हैं । नपुंसक लिंग अप्राणिवाचक वस्तुओं के लिए प्रयोग किया जाता है, अतः तेलुगु में लिंग-निर्णय में कठिनाई नहीं होती । हिन्दी में लिंग-निर्णय करना बहुत कठिन समस्या है । विशेषणों, विभक्तियों, प्रत्ययों और वाक्य-रचना में बहुत से अन्तर हैं । यहाँ उल्लेख योग्य अनेक विषय हैं जिन्हें हम विस्तार के भय से छोड़ रहे हैं ।

सन्धि : तेलुगु में सन्धि का प्रयोग बहुत अधिक होता है जब कि हिन्दी में सन्धि का प्रयोग नहीं के बराबर है । तेलुगु की सन्धियों का निदर्शन करने के लिए एक पृथक् पुस्तक ही लिखी जा सकती है, तेलुगु में दो प्रकार की सन्धियाँ हैं, संस्कृत के नियमानुसार की जानेवाली सन्धियाँ और तेलुगु के नियमानुसार की जानेवाली सन्धियाँ । संस्कृत-सन्धियों का प्रयोग हिन्दी में भी होता है अतः यहाँ केवल तेलुगु की सन्धियाँ दी जाती हैं—

तेलुगु की सन्धियों के सम्बन्ध में लिखने से पहले कुछ पारिभाषिक शब्दों का परिचय देना आवश्यक है, किन्तु उससे यह अध्याय बड़ा बन सकता है । अतः यहाँ हम अनेक छोटी-मोटी सन्धियों तथा सूत्रों को छोड़ कुछ प्रधान एवं सरल सन्धियों का उल्लेख करेंगे ।

द्रुत सन्धि, आम्रेडित सन्धि, आगम सन्धि, त्रिकसन्धि और समास सन्धि की अनेक शाखा प्रशाखाएँ हैं ।

तेलुगु-छन्द

तेलुगु में छन्द वृत्तमुलु, जातुलु और उपजातुलु नामक तीन प्रकार के हैं । उदाहरण के लिए उत्पलमाल, चम्पकमाल, शार्दूल विक्रीडितमु, मत्तेभविक्रीडितमु, आदि वृत्त हैं । जो संस्कृत से लिए गए हैं । तेलुगु के अपने छन्द भी हैं; उन्हें देशी छन्द कह सकते हैं । वृत्त छन्द संस्कृत से प्रभावित हैं । इन छन्दों में चारों चरणों में मात्राएँ समान होती हैं ।

तेलुगु के पद्यों में अक्षरों को मात्रा के अनुसार लघु-गुरु में विभक्त करते हैं और लघु-गुरु के आधार पर छन्दों का निर्णय होता है । ह्रस्वाक्षर (एक मात्रावाले) लघु कहे जाते हैं और दीर्घ (द्विमात्रिक) अक्षर गुरु । तेलुगु के छन्दशास्त्र में लघु के लिए '।' चिह्न है और गुरु के लिए 'U' चिह्न प्रयुक्त होता है । द्विमात्रिक अक्षरों के अलावा बिन्दु और विसर्ग से युक्त अक्षर तथा संयुक्ताक्षरों के पूर्व आनेवाली

लघु मात्रा गुरु मानी जाती है। उदाहरण के लिए—कं, टः, मां, तथा लक्ष, पक्ष, गड्ढ आदि में 'ल' 'प' और 'ग' गुरु हैं। बिन्दीवाले अक्षर व विसर्ग वाले अक्षर भी गुरु हैं। परन्तु के, कृ लघु हैं। बिन्दी, विसर्ग तथा संयुक्ताक्षरों के आ मिलने पर लघु गुरु हो जाते हैं।

साधारणतः तीन लघु अथवा गुरुओं के समूह को गण कहने की परिपाटी है, परन्तु दो और चार गुरु-लघुओं के भी गण हैं। तीन लघु और गुरुवाले गण वार्णिक छन्द माने जाते हैं और बाकी मात्रिक। यहाँ हम उन गणों का उदाहरण दे रहे हैं:

श्लोक: आदि मध्यावसानेषु भजसायांति गौरवम्
यरता लाघवम् यांति मनौतु गुरु लाघवौ॥

अर्थात् आदि, मध्य और अन्तों में भ (भगण) ज (जगण) और स (सगण) के गुरु होंगे। य (यगण) र (रगण) और त (तगण) के लघु होंगे। मगण सर्वगुरु है और नगण सर्व लघु है। इसे इस प्रकार दिखाया जा सकता है।

सर्वगुरु	U U U	श्रीरामा	मगण
सर्व लघु	| | |	परम	नगण
आदिगुरु	U | |	श्रीपति	भगण
मध्यगुरु	| U |	कराल	जगण
अंत्यगुरु	| | U	सहसा	सगण
आदिलघु	| U U	सहारा	यगण
मध्यलघु	U | U	माधवा	रगण
अंत्यलघु	U U |	गोपाल	तगण

इन गणों के गुरु-लघुओं का स्मरण रखने के लिए अनेक पद्य रचे गए हैं, जिनके कण्ठाग्र करने पर आसानी से पद्यों का गण-निर्णय किया जा सकता है।

इसके उपरान्त हमें मात्रिक छन्दों का विवरण जानना है। इसमें गणों का क्रम निम्न प्रकार रहता है। लघु (लगण) है U गुरु (गगण) है। इसके अलावा बाकी गणों की मात्राएँ यों हैं, || ललमु, UU गगमु, |U लगमु या वगणमु, U| गलमु या हगणमु, |||| नलमु, |||U नगमु, ||U| सलमु, U||| भलमु, UU|| तगमु। इनमें न, ह, सूर्यगण कहलाते हैं। भ, र, त, नल, नग और सल इन्द्रगण और अन्य सभी चन्द्रगण माने जाते हैं।

यहाँ हम उदाहरणार्थ तेलुगु के वृत्त, जाति और उपजाति छन्दों के गणों का परिचय दे रहे हैं।—**वृत्त**

उत्पलमाल: भ र न भ भ र व गण होंगे और दसवें अक्षर में यति मैत्री होगी।

भ	र	न	भ	भ	र	व
UII	UIU	III	UII	UII	UIU	IU
भानुस	मानवि	न्भरन	भारल	गंबुलु	कूडिवि	श्रम
स्थानमु	नंदुप	म्रजयु	तंबुग	नुत्पल	मालयै	चनुन्

चारों चरणों के गण समान हैं।

चम्पकमाल : न ज भ ज ज ज र गण होंगे और ग्यारहवें अक्षर में यति मैत्री होगी।

न	ज	भ	ज	ज	ज	र
III	IUI	UII	IUI	IUI	IUI	UIU
नजभ	जजल्ज	रेफलु	पेनंगि	दिशाय	तितोड	गूडिनन्

शार्दूल विक्रीडितमु : म स ज स त त ग गण होंगे और यति मैत्री तेरहवें अक्षर में होगी।

म	स	ज	स	त	त	ग
UIU	IIU	IUI	IIU	UUI	UUI	U
साराचा	रविशा	रदायि	नयतिन्	शार्दूल	विक्रीडि	ता

मत्तेभ विक्रीडितमु : स भ र न म य व गण होंगे। चौदहवें अक्षर में यति मैत्री होगी।

स	भ	र	न	म	य	व
IIU	UII	UIU	III	UUU	IUU	IU
नलुवों	दन्सभ	रलनम	ल्ववल	तोनंगू	डिमत्ते	भमिं

जाति और उपजाति छन्द (मात्रिक)

उपर्युक्त गणों के अलावा सूर्य और इन्द्रगणों का भी प्रयोग करते हैं।

द्विपद : यह तेलुगु का अत्यन्त सरल छन्द है। हिन्दी के दोहे और सोरठे की तरह इसके भी दो चरण होते हैं। प्राचीन तेलुगु साहित्य में इस छन्द का अधिक उपयोग हुआ है। आजकल इसका उपयोग नहीं होता है।

नग	भ	नग	न	
IIIU	UII	IIIU	III	
द्विपदमू	डिंद्रुलु	दिनकरुं	ड्रोकडु	(डो ह्रस्व है)
द्रिपदमू	डवगण	दिग यति	युंड	

इस द्विपद छन्द में नग, भ, नग इन्द्रगण हैं और न सूर्यगण हैं। छन्द का अभिप्राय भी यही है। इसके दो ही पद होने के कारण द्विपद नाम पड़ा है। इसमें प्रास की प्रधानता है। वह चरण के द्वितीयाक्षर में रहेगा। प्रास के अभाव में

वह 'मंजरी द्विपद' कहलाएगा।

तेटगीति :

न	भ	भ	ह	ह
III	UII	UII	UUI	UII
इनुनि	मीदनु	निंद्रुलु	निद्द	रुंड

इसमें क्रमशः एक सूर्यगण, ये इन्द्र और फिर दो सूर्यगण अर्थात् प्रत्येक चरण में कुल पाँच गण होंगे। इस प्रकार पाँच गणवाले चार चरण होंगे। चरण के चौथे गण के प्रथमाक्षर में यति होगी। प्रास यति भी हो सकती है परन्तु प्रास आवश्यक नहीं है।

आटवेलदि :

न	ह	ह	त	भ
III	UI	UI	UUI	UII
इनग	णत्र	यंबु	निंद्रद्व	यंबुनु
ह	ह	ह	ह	स
UI	UI	UI	UI	III
हंस	पंच	कंबु	नाद	वेलदि

इसके चार चरण हैं। प्रत्येक चरण में पाँच गण होते हैं। विषम चरणों में तीन सूर्यगण और दो इन्द्रगण होते हैं। सम चरणों में पाँच सूर्यगण होते हैं। चौथे गण का प्रथमाक्षर यति होता है। प्रास और यति रह सकते हैं।

सीसमु :

भ	सल	नग	सल
UII	IIUI	IIIU	IIUI
इंद्रग	णमुलारु	निनगणं	बुलुरेंडु
नग	नल	ह	ह
IIIU	IIII	UI	UI
कलसिस	समनग	ग्रालु	चुंडु

इसमें क्रमशः छः इन्द्रगण और दो सूर्यगण होते हैं। प्रत्येक चरण को चार चार गणों में, खण्ड चरणों के रूप में विभक्त करके प्रत्येक खण्ड में अलग रूप से तीसरे गण के प्रथम अक्षर में यति देना चाहिए। यदि इन प्रथमाक्षरों में यति न आई तो द्वितीयाक्षर में यति होती है। उस स्थिति में वह प्रास यति कहलाती है। इस प्रकार चार चरणों (आठ खण्ड चरण) के उपरान्त आटवेलदि अथवा तेटगीत्ति छन्द रहेगा तब कुल इसके १२ चरण होंगे। खण्ड चरणों को नहीं मानते हैं तो आठ पाद रहते हैं।

कंदमु :

भ	नल	
UII	IIII	UII
कंदमु	त्रिशरग	णंबुल

Hindi Semin... OSMANIA UNI...

भ	भ	नल	भ	न
U I I	U I I	I I I I	U I I	I I U
नंदुमु	गाभज	सनलमु	लैदुने	गणमुल्

इस छन्द में चार चरण होते हैं। विषम चरणों में तीन गण और सम चरणों में पाँच गण होते हैं। गग, भ, ज, स, नल, इन गणों में से किन्हीं गणों का भी प्रयोग किया जा सकता है। सम चरणों का तीसरा गण ज और नल, गणों में से कोई एक अवश्य रहेगा। समचरणों के अन्त में गुरु होना चाहिए। विषम चरणों में जगण नहीं होना चाहिए। प्रथम चरण में चारमात्र वाले तीन गण होते हैं अर्थात् १२ मात्राएँ होती हैं। द्वितीय चरण में पाँच गण होते हैं अतः बीस मात्राएँ होती हैं। इस पद्य में ६४ मात्राएँ होती हैं गण-विभाजन करते समय प्रत्येक चार मात्राओं को अलग किया जाता है। क्योंकि मात्रिक छन्दों में मात्राओं के आधार पर ही गणों को गिना जाता है।

यति : प्रत्येक चरण का प्रथम अक्षर यति है। इसके सवर्ण अक्षर को विराम स्थान में रखना चाहिए। साधारणतः समान उत्पत्ति स्थान वाले अक्षर सवर्ण कहलाते हैं। जैसे क, ख, ग, घ आदि व्यंग्य हैं। इसलिए ये सवर्ण हैं। इसी प्रकार अन्य सवर्णों को समझना चाहिए।

प्रास : प्रत्येक चरण का द्वितीयाक्षर समान रहना चाहिए। कुछ लोग प्रास की परिभाषा यों बताते हैं। चरणों के प्रथम स्वर तथा द्वितीय स्वर के मध्य में रहने-वाला अक्षर समुदाय प्रास है। यह चारों चरणों में समान रहता है। इसमें एक ही स्वर के समान रहने की आवश्यकता नहीं। यदि एक में पूर्ण बिंदु है तो सब में रहनी चाहिए। द्वित्व अथवा दो तीन व्यंजन हों तो उसी प्रकार सब में होने चाहिएँ। प्रासाक्षर का पूर्वाक्षर गुरु हो तो सब में गुरु तथा लघु हो तो सब में लघु ही होना चाहिए।

महाकवि तिक्कन्ना

(महाभारत)

आन्ध्र महाभारतमु

(राजधर्ममु)

मत्तेभ विक्रीडितम् : १ धरणीशा ! नृप धर्म-मुत्तममु सद्धर्मंबु लंदेल्ल ने
तेरवुन् राजरयंग गादे तग सिद्धिंबोंदु गामंबु ग्रो
धरयंबुन् मगुडिंचि दंडमु समत्व व्याप्ति जेल्लिंचुचुन्
धरब्रालिंचिन राजु वोंदु गति बोंदन् शक्य मे ! येरिकिन्

कंदपद्यमु : २ नररूपंबुन बरगेडु
परदेवत गान नृपुडु ब्रालुंडौ न
प्पुरुषु नेड नेमि पोम्मनि
तिरिगिन दुर्मतुल बोंद दे कीडधिपा !

गीतपद्यमु : ३ चारचक्षुडै तगनेल्ल जगमु नडुपु
सूर्युडड्ड नरेन्द्रुनि नार्यवरुलु
दुनुमु नेय्यड जमुडु ना जनुनतंडु
देवतात्मकुडगुट संदियमे यधिप !

कंदपद्यमु : ४ विनु नृप ! साम्रट्टु विरा
ट्टनियेडु शब्दमुल बोगडु नागममुलु ने
ट्टन भूपालुनि ननिन न
तनि दग नर्चिचकुंड दगुने योरुलकुन्

गीतपद्यमु : ५ लोकमुलु लोक धर्मंबु लुनु नृपाल !
राज मूलमुल् राजविरहितमैन
पुडमि जनुलकु निंकिन मडुवुलोनि
जलचरंबुलु बडु पाटु संभविल्लु

गीतपद्यमु : ६ विभुडु लेकुन्न जनमुलु सभय हृदयु
लगुचु हाहा निनदंबु लडर दल्ल
डिल्लुदुरु राजु लेमिय येल्लवारु
लेमि, कल्मिय कल्मि निर्लेप रहित !

कंदपद्यमु : ७ तन धन मिदि यनि यूरडि
मन ब्ररिणय मादियैन महितोत्सवमुल्

महाभारत

(राजधर्म)

१ हे पृथ्वीपति, सभी धर्मों में राजधर्म उत्तम है। किसी भी दृष्टि से यदि राजधर्म का ठीक-ठीक पालन और काम, क्रोध आदि को दबा कर निष्पक्ष दृष्टि से प्रजा का पालन किया जाए तो धर्मात्मा राजा को जो सद्गति प्राप्त होती है वैसी सद्गति और किसी को प्राप्त नहीं हो सकती।

२ हे राजा, नृप तो नर रूपधारी देवता है चाहे वह बालक भी क्यों न हो यदि उसके प्रति भक्ति न रख कर कोई व्यक्ति उसका तिरस्कार करता है, उसकी सदा हानि होती है।

३ हे नृप, महात्माओं का कहना है कि जो राजा सारे संसार को समदृष्टि से देखता है, उसे सूर्य भगवान् कहते हैं। यम भी ऐसे सज्जन राजाओं का कुछ नहीं कर पाता इस लिए उन्हें देवता अंश से पूर्ण व्यक्ति कहने में कोई संदेह नहीं है।

४ हे राजा, वेदादि ग्रन्थ सम्राट्-विराट् आदि शब्दों से राजाओं की प्रशंसा करते हैं, क्या ऐसा राजा जनता द्वारा पूज्य नहीं होगा?

५ हे नरेश, लोक तथा लोकधर्म ये सभी राजा के अस्तित्व पर निर्भर हैं। राजा के अभाव में जनता की स्थिति सूखे तालाब के जलचरों की भांति हो जायगी अर्थात् जनता को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा।

६ राजा के अभाव में जनता भयभीत हो कर करुण-क्रन्दन करेगी। राजा के न होने से जनता के लिए सम्पत्ति का रहना या न रहना दोनों बराबर हैं, क्यों कि सम्पत्ति की रक्षा का उचित प्रबन्ध न होने से वह नष्ट हो जायगी।

७ हे नृप, मनुष्य राजा के अभाव में अमुक धन अपना है कह कर संतोष नहीं कर सकेगा। राजा के न रहने पर इस पृथ्वी पर विवाह तथा अन्य उत्सव निर्भयता-

गोनियाड नेव्वरिकि व
च्चुने जनपालुंडु लेनि चो निर्भयतन्

सीसपद्यमु : ८ एनुंगुनंजलो नेल्लसत्वंबुल
यंजलु नडगिन यट्लु वोले
राजित क्षत्र धर्ममुनकु लोनयि
सर्व धर्मबुलु जनु मखमुलु
वेदंबुलुनु शुभ वृत्तंबुलुनु दंड
नीति मानिन जेडु भूतलंबु
संस्कार रहितमै चाल हीनत बोंदु
नट्लैन ब्रतुकु जे टावहिल्लु
राजु लरसिन नेम्मदि ब्रतुकु गान
राजु सर्वोत्तमुडु धर्म राजियंदु
राज धर्मंब येक्कुडु राजनंग
धर्म देवत यन वेरे धर्म तनय !

सीसपद्यमु : ९ राजु नुत्तम गुण भ्राजिष्णु नभिषिक्तु
गाविंचुकोनि येल्ल कार्यमुलुनु
दन्मुखंबुन जेल्ल दद्दयु सुखमुंड
बडयुदु रोकडु भू पालनंबु
सेतलेकुन्न दुश्चेष्टितुलै जनु
लन्योन्य दार धनापहरण
माचरिंतुरु मील यद्दुल बलवंतु
लल्पुल दमकु नाहारमुलुग
गोंड्रु भूपति लेकुन्न मंड्रे जनमु
लधिप ! कृषि सेयुटयुनु बेहार माडु
टयुनु गोरक्ष गाविंचुटयुनु मोदलु
गाग ब्रतिकेडु तेरुवुलु गासिगावे !

कंदपद्यमु : १० तरणि वोडिचि तममु चेरुचु
करणिनि लोकमुन गलगु कल्मष मेल्लन्
धरणिपति यात्मधर्म
स्फुरणंबुन जेरुचु विमल बोधनचरिता !

पूर्वक मनाना किसी के लिए संभव न होगा।

८ जैसे हाथी के पाँव में सभी के पाँव समाते हैं, वैसे ही राजधर्म के अन्तर्गत सभी धर्मों का समावेश होता है। इस पृथ्वी में जब तक दण्डनीति का विधान उचित रूप से चलता रहेगा तब तक वेद आदि श्रेष्ठ ग्रन्थों और पुण्य कार्यों का मान रहेगा। अथवा पृथ्वीतल में यदि राजा संस्कारहीन और दुश्चरित्र होता है तो प्रजा की हानि होती है। राजा का अस्तित्व जब तक रहेगा तब तक जनता में शान्ति कायम रहेगी। पृथ्वी में राजा सर्वोत्तम है। राजधर्म ही सबसे श्रेष्ठ धर्म है। धर्मदेवता और कहीं नहीं है, राजधर्म में ही है।

९ हे नृपेश! उत्तम गुण वाले राजा को अपने राज्य का शासक बना कर जो लोग अपने कार्यों को शान्तिपूर्वक करना चाहते हैं और सुखी बनना चाहते हैं उनके लिए राजा के चुनाव में बहुत ही ध्यान देने की आवश्यकता है। ऐसा करने से ही उन्हें सच्चा सुख मिलेगा। यदि ऐसा राजा नहीं मिले तो लोग दुष्ट बन कर एक दूसरे की पत्नी, संपत्ति आदि का अपहरण करेंगे और बलवान् लोग निर्बलों पर अत्याचार करेंगे। यदि राजा न रहे तो प्रजा कृषि, व्यापार, गोरक्षा आदि कार्य कुशलता पूर्वक नहीं कर पाएगी और जनता की जीविका के सभी साधन व मार्ग बन्द हो जाएँगे।

१० जैसे सूर्य के उदय से सारा अन्धकार नष्ट हो जाता है उसी तरह संसार में कल्मषरूपी जो अन्धकार है वह राजा के आत्मधर्म पद्धति रूपी प्रकाश से लुप्त हो जाता है।

कंदपद्यमु : ११ कानिचेयदमुलु सेयक
नूनबु धर्ममुन नडुचु नुर्वीशुडु सं
तानमु बंधुलु व्रजयुनु
दानुनु सेनयुनु शुभमु दलकोन नेर्चुन्

गीतपद्यमु : १२ तानु मुन्नु विनीतुडै तनदु मंत्रि
वरुल बुत्रुल भृत्युल वरुसतोड
विनयवंतुल जेसि भू विभुडु प्रजकु
रक्षणमु सेय निहमु बरमुनु गलुगु

कंदपद्यमु : १३ तनुदान तोलुत गेलुव
न्मनुजपतिकि वलयु बिदप मार्तुर गेलुवन्
मनमुन दलंचुनदि मुनु
तनुगेलुवनि पतिकि गेलुव दरमे पगरन्

आटवेलदिगीतम् १४ विनुमु तन्नु गेलुचु टनग वेरोकडे पं
चेन्द्रियमुलबार नीक कोलदि
नागुट्यु जितेन्द्रियत्वंबु गलराजु
रिपुल जेरुपजालु नृपवरेण्य!

कंदपद्यमु : १५ कडुनम्मि युनिकियुनु ने
क्कुडु नम्ममियुनु सुशील! कुशलतगा दे
य्येडलनु बुद्धि सोलिपि
तडवि कनुगोनंग वलयु दगवु तगमियुन्

उत्पलमाला १६ तालिमि जेर्चुवारलुनु धर्मविधिज्ञुलु सत्यवंतुलुन्
लोलतलेनिवारु मदलोभ निरर्थक कोपहीनुलुन्
शील समेतुलुन् बलुक नेर्चुट कार्यमु गानपेंपुमै
जालुट गलगु भृत्युलुनु संपद जेयुदुरात्म भर्तकुन्

कंदपद्यमु : १७ शौर्यमु सत्यंबुनु स
त्कार्यमु भक्ति तात्पर्यमुगां
भीर्यमु गलिगिन गुरुकुल
वर्य! कुलंबेल सिरिकि वा डुत्कुडगुन्

११ जो भूपति अकार्यों को न करते हुए धर्म-पथ पर चलता है ऐसा राजा अपने भाई-बन्धु, प्रजा, सेना आदि सब का शुभ चाहने वाला सिद्ध होता है। अर्थात् जो राजा ठीक तरह से अपने कर्तव्यों का पालन करता है उससे उसके देश का हित होता है।

१२ जो पृथ्वीपति, सर्व-प्रथम अपने को सुधारता है और उसके उपरान्त अपने मन्त्री, पुत्र तथा सेवकों को क्रमशः विनयी एवं सन्मार्गी बनाता है, ऐसा राजा प्रजा की भलाई और रक्षा के कार्य में सर्वदा दत्तचित्त हो तो दोनों लोकों में उसका कल्याण होता है।

१३ राजा को चाहिये कि वह सबसे पहले अपने ऊपर विजय प्राप्त करे। अर्थात् अपने को पूर्णरूप से पहचान कर नियन्त्रण रखने की शक्ति प्राप्त करे। उसके बाद अपने मन में दूसरों पर विजय पाने की बात सोचे, किन्तु जो राजा अपने आप को जीत नहीं पाया वह दूसरों पर कैसे विजय प्राप्त कर सकता है।

१४ हे नृपवर, अपने पर विजय पाने का मतलब और कुछ नहीं अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण रख कर जितेन्द्रिय बनना है। जो राजा इस कार्य में सफल होता है, वह अपने शत्रुओं को नाश करने में समर्थ होता है।

१५ हे राजा, अपने ऊपर विजय प्राप्त करने का अभिप्राय और कुछ नहीं है। पंचेन्द्रियों को नियन्त्रण में रख कर जो राजा जितेन्द्रियत्व प्राप्त करते हैं वे शत्रुओं को नाश करने में सफल हो जाते हैं।

१६ ढाढस बँधाने वाले, कर्तव्य परायण, सत्यवान्, निष्काम, सच्चरित्र, जितेन्द्रिय, शीलवान, आज्ञापालक सेवक राजा के सहायक होते हैं।

१७ हे धरणीश! शौर्य, सत्यवचन, सत्कार्यों का ज्ञान, भक्ति, गंभीरता इत्यादि गुणों से युक्त, सम्पन्न उत्तम पुरुष के लिए उच्चवर्ण के होने की आवश्यकता ही क्या है, जब कि वह उन गुणों से विभूषित है, जो वर्ण आदि से श्रेष्ठ हैं।

चंपकमाला : १८ कुलमनि पट्टि चित्तमुन गूरिन कीडरयंग लेक य
ग्गलपु विभूति दुष्टुनकु गल्गग जेयुट कर्जमेट्लु भू
त्युल मदियुन्न रूपरसि युत्तम मध्यम हीन रूप मा
त्रलकु दगंग नय्ययि पदंबुल निल्पुट नीति भर्तकुन्

गीतपद्यमु : १६ तनकु मेलोनरिंचु नातंडु मित्रु
डतडु नडुपंग नेल्ल कार्यमुलु शुभमु
नोंदुनेमिट नेमर कुनिकि तोड
नृपुडु मित्रु पै गार्यंबु निलुप वलयु

उत्पलमाला : २० मन्ननकुन्मदिंप कवमानमु वच्चिन सृक्क कोक्क भं
गिन्नेरि गार्यमुल्विगतकिल्बिषुडै तगजेयुनट्टि मि
त्रुन्नरनायकुंडु तन रूपुग नग्गलमैन श्रीयु न
त्युन्नतियुन् घटिंचि महि मोज्जवलु जेत सुखावहंबगुन्

आटवेलदिगीतम् : २१ धर्मरतुलु नर्थनिर्माण चतुरुलु
लौल्य रहितुलुनु नलंघितत्मु
लुनु सुनीति निपुणुलुनु गुलजुलु नगु
परिजनमुल बेनुपु पतिकि हितमु

उत्पलमाला : २२ क्रूरुलु लोभुलुन् शठुलु गोंडियलुन् जडुलुन् गृतघ्नुलुन्
नेरनिवारु बोंकुनकु निंदकु नोर्चिन दुष्टबुद्धुलुन्
धीरतलेनि दुर्नयु लति व्यसनत्वमु गल्गुवारलुन्
जेरुवनुन्कि भूपतिकि जेट्टयोनर्चु नरेश्वरोत्तमा !

कंदपद्यमु : २३ अवलेपंबुन गर्त
व्यविवेकमु लेक वलसिनट्टुल येव्वं
डविनीति सेयु धरणी
धवुडु विडुव वलयु दन कतडु गुरुडैनन्

सीसपद्यमु : २४ दत्तुडै भूपति दंडनीति नडंप
कुन्न सन्युसुलु नुत्पथ प्र
वर्तनुलगुदुरु वाविरि नन्योन्य
धनधान्य पशुभूमि दारहरण
माचरिन्तुरु जनु लप्पाप मव्विभु
नोंदु दंडमु हिंसयुग दलंप

१८ हे राजन! स्वकुल पर अधिक प्रेम के कारण जो राजा उत्तम, मध्यम और हीन मनुष्य के स्वभाव और चरित्र से अपरिचित हो कर उनसे होनेवाली बुराइयों का ख्याल न करके दुष्ट व्यक्ति को अच्छे पद देता है वह अपने कर्तव्य से गिर जाता है। अतः राजा को चाहिए कि मनुष्यों की योग्यता और चरित्र से परिचित हो कर योग्य पद प्रदान करे, यही राजनीति है।

१६ जो मनुष्य अपने लिए उपकार करता है वही मित्र है। उस मित्र के द्वारा सभी कार्य सफल होते हैं परन्तु राजा को चाहिए जब वह अपने कार्य-भार को दूसरों पर डालना चाहता है तो उस व्यक्ति का स्वभाव आदि पहले से जान ले।

२० जो मनुष्य अपनी प्रशंसा से फूलता नहीं है और अपमान से विचलित नहीं होता है अर्थात् सभी स्थितियो में सदा प्रसन्न व सहनशील रहता है और अपने कार्यों को सफल बनाने में लगा रहता है, ऐसे मित्र को यदि राजा पाता है तो उसे यश, सम्पत्ति और सुख प्राप्त होते हैं।

२१ हे राजा! जो व्यक्ति अपनी प्रशंसा सुन कर फूलता नहीं और अपमान से कुढ़ता नहीं तथा जो व्यक्ति पापरहित हो कर अपने कार्यों को उचितरूप से निभाता है, ऐसे मित्र के प्रति राजा को चाहिए कि वह उसे अपने समान देखते हुए धन, उन्नति, यश आदि से सन्तुष्ट करे।

२२ हे नृपोत्तम! दुष्ट, लोभी, हठी, सुस्त, झूठे, मूर्ख, भीरु और खुशामदी कृतघ्न व्यक्तियों को अपने पास फटकने नही देना चाहिए क्योंकि उनसे राजा को हानि ही होती है।

२३ अविवेकी पुरुष अपने कर्तव्य एवं उत्तरदायित्वों का ध्यान न रख कर यदि अविनयपूर्ण कार्य करता है तो हे राजा; उसे तुरन्त त्याग देना चाहिए, चाहे वह अपना गुरु ही क्यों न हो।

२४ हे नरनाथ! यदि राजा दक्ष व्यक्ति न हो कर दण्डनीति का क्रम से पालन नहीं करता है तो उसके राज्य में सन्यासी भी दुष्ट आचरण वाले होते हैं। यदि दण्ड का उपयोग न होगा तो वे इस पृथ्वी में परस्पर धन, धान्य, पशु, भूमि तथा पत्नी आदि हरण करेंगे और इन सब कुकर्मों को नियन्त्रण में रखने के लिए दण्ड-विधान का उपयोग होना ही चाहिए, वह हिंसा नहीं कहलाएगी। दुर्वृत्तियों को दबाने में शिव, कृष्ण आदि कितने कठोर हैं। इस प्रकार महात्माओं के दुष्टों को दण्डित करने के

वलदु दुर्वृत्तुल वधियिंचु रुद्रुनि
गोविन्दु वासवु गुहुनि जूड्डु
मग्महात्मुलु तक्कु दुर्मार्ग चरुल
दंडितुल जेत विनमे यधर्म मडगु
धर्म मेसगु दंडमुन नर्थमुनु गाम
मुनु नदृश्यंबुलै सिद्धि बोंदु नधिप !

कंदपद्यमु : २५ पेद मनसगुट धर्मुवु
गादु नरेन्द्रुनकु जगमु गावं ब्रोवं
गादे नृपलोक पालां
शोदितुड्डुग जेसे पद्म योनि चतुरतन्

सीसपद्यमु : २६ मेदिनीपति यति मृदुवैन मावन्तु
डेनुंगु नेट्लट्ल येक्कियाड
जूचु देकुवसेडि नीच्पु ब्रज क्रूरु
डगुनेनि लोकंबु बेगड्डु गुड्डुचु
गान वसंतंबु भानुनि जाड्पुन
दगियेड्डु वाडितो धरणि प्रजल
नुच्चित वर्तनमुल नोंदिंचुनदि यिदि
राज धर्ममुलकु राजुसुम्मु
कौरवेन्द्र ! यदियु गाक दंडमु परि
च्चा विशुद्धि पूर्वकमुग वलयु
दन तलंपु वेंट दमकिंचि प्रजकु नो
प्पिग जरिंचुट्युनु दगदु पतीकि

कंदपद्यमु : २७ दंडार्हुलैन वारलु
दंडिंपक युन्न जुव्वे धात्रिविभु ना
खंडल सन्निभुनैन ब्र
चंडपु किल्बिषमु पोंदु जगतीनाथा !

कंदपद्यमु : २८ पेदलकुनु साधुलकुनु
वेदमुलकु दापसुलकु वेयेल सम
स्तादित्युलकुनु दंडम
कादे ब्रतुकुजेयु राजु गाविंपंगन्

कारण ही अधर्म जाता रहा। दण्ड-विधान से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति भी होती है। वह विधान सच्चा व न्याय-संगत होना चाहिए।

२५ लोक-रक्षा तथा अपने शासन कार्य में राजाओं को अत्यन्त भीरु एवं अयोग्य बने रहना उचित नहीं है क्योंकि ब्रह्मा ने बड़ी चतुरता के साथ लोक-पालन कार्य की जिम्मेदारी राजाओं के हाथों में सौंप दी है।

२६ जैसे कोमल हृदयवाला महावत हाथी पर अनावश्यक अंकुश चलाये बिना हाथी को ठीक तरह से संभालता है वैसे ही राजा को चाहिए कि वह जनता को चलाए। यदि जनता निर्भय हो कर नीच हो या राजा क्रूर हो तो राज की व्यवस्था बिगड़ जाती है। इसलिए वसंत ऋतु के सूर्य की भाँति उचित तीक्ष्णता के साथ जनता को उचित प्रणालियों पर चलाना और राज्य में शान्ति को फैलाये रखना राज-धर्मों में श्रेष्ठ माना जाता है। हे कौरवेन्द्र, दण्ड-विधान में चतुराई से अपराध का निर्णय होना चाहिए। केवल अपने मन के आधार पर जनता पर क्रुद्ध हो कर उन्हें कष्ट देना राजा के लिए उचित नहीं है। राजा को सदा न्याय-अन्याय का ठीक तरह से विचार करके ही दण्ड देना चाहिए। इसमें धर्म-शास्त्रों का पालन अवश्य होना चाहिए।

२७ हे नरेश! जो लोग दण्ड-योग्य हैं उन्हें दण्ड न दिया जाए तो चाहे राजा कितना ही शक्तिशाली और पराक्रमी क्यों न हो, उसे प्रचण्ड पाप का फल भोगना ही पड़ेगा। ऐसे राजा स्वयं अपराधी हो जाएँगे।

२८ निर्धनी, साधु, संत, तपस्वी, वेद और समस्त देवताओं के हित के लिए दण्ड ही दुष्टों को नियन्त्रण में रखता है और दण्ड ही राजा को बनाये रखता है।

कंदपद्यमु :

२९ गरदुनि गृहदाहकु मं
त्र रहस्य विभेदि वधविधायि बरसती
हरुबन्धुघाति बरधन
हरण परुनि जंपि पुण्युडगु नृपुडनघा

कंदपधमु :

३० चोरुलचे जेडकुंडं
ग्रूरुलचे जावकुंड गुवलय जनुलन्
जारुलचे वडकूंड ध
रा रमणुडु नेर्पु गलिगि रक्षिंपदगुन्

कंदपद्यमु :

३१ धर्म मधर्ममु भंगि न
धर्ममु धर्मबु माड्कि दनया ! तोचुन्
निर्मल मति नरयवलयु
धार्मिकतनु गोरुवाडु दनकेर्पडगन्

कंदपद्यमु :

३२ धर्म मधर्ममु बोलु न
धर्ममु दा धर्ममगु विधंबुन दोचुन्
गर्म समिति नोकोक येड
धर्मगति ऎरुंगवलयु दच्छास्त्रमुलन्

कंदपद्यमु :

३३ अनघ ! यधर्ममु धर्म
बनुमति बुट्टिंचु दृण समावृतमै प्र
ऋनि तलमु चंदमुन दो
च्निन नूर्युंग्रोले सूक्ष्म चित्ततलेमिन्

कंदपद्यमु :

३४ कामार्थबुलु महो
द्दामत गृत्यंबुलनि येदंगनि धर्म
स्तोममुन दगुलु जनमुल
चे मेलुग नेरिगिकोनुमु सिद्धविवेका !

कंदपद्यमु :

३५ श्रुतमु बरित्यागमु गल
मतिमंतुल नड्डुगु लोभ मदमोहसमा
वृतबुद्धुलु कानि सर्म
चित चरितुल वलन देलियु शीलनिरूढा !

२९ विष देनेवाले, गृह जलानेवाले, वेदमंत्रों का रहस्य ब्राह्मणों को छोड़ अन्य वर्णवालों को देनेवाले, दूसरों की हत्या करनेवाले, दूसरों की पत्नियों को हरने वाले, बन्धु-घातक, दूसरों के धन का अपहरण करनेवाले दुष्टों का संहार करके राजा पुण्यवान बनता है।

३० राजा को चाहिए कि वह अपनी समस्त प्रजा को चोर व लुटेरों से बचाने, दुष्ट व्यक्तियों से मुक्त करने, व्यभिचार आदि से बचाने में अधिक दक्षता के साथ अपने उत्तरदायित्व का पालन करे।

३१ हे पुत्र, धर्म अधर्म की तरह और अधर्म धर्म की तरह मालूम होता है, परन्तु जो आदमी धार्मिक बनना चाहता है उसे चाहिए कि अत्यन्त शुद्ध हृदय के साथ दोनों का भेद समझ कर धर्म को ही ग्रहण करे।

३२ कभी कभी कर्मों का समूह जब राजाओं के सामने उपस्थित होता है तो उस समय वे धर्म-कार्य अधर्म जैसे और अधर्म से युक्त पाप पूर्ण-कार्य धर्म की भाँति दिखाई देते हैं। उस समय राजा को चाहिए कि वह सच्चे धर्म को शास्त्रों में खोज कर देखे। अर्थात् राजा को धर्म-शास्त्रों के आधार पर चलना चाहिए।

३३ हे राजन्! सूक्ष्म चित्त के अभाव में अधर्म धर्म जैसी बुद्धि पैदा करता है जैसे तृण से समावृत्त अदृश्य स्थान में कुआ दिखाई नहीं देता। इसी तरह अधर्म धर्म जैसा दिखाई देता है। इसलिए बड़ी सूक्ष्मता के साथ धर्म और अधर्म का भेद समझना चाहिए।

३४ हे विवेकी राजा, चतुर्विध पुरुषार्थों में काम और अर्थ मोह को और भी बढ़ानेवाले हैं; यह समझ कर जो धर्म-पथ में चलनेवाले सज्जन हैं उनसे सम्पर्क स्थापित करो।

३५ हे शीलवान पुरुष, जो व्यक्ति लोभ, मोह, मद, असत्य आदि को परित्याग कर चुका है और सच्चा तथा सच्चरित्र है, उससे धर्म और अधर्म का ज्ञान प्राप्त करो।

कंदपद्यमु : ३६ वाविरि माटल देलक
भावंबुन गीड्डु मेलु बरिकिंचि य स
द्भावुनि सद्भावुनि धर
णीवर ! येर्परुप नेरुग नेरगवलयुन्

कंदपद्यमु : ३७ मित्रत्वमु शत्रुत्वमु
भात्रतयु नपात्रतयुनु बरिकिंचु सुचा
रित्रुडु चिरतर गणना
सूत्रितमुग दाननेल्ल शुभमुलु पोंदुन्

कंदपद्यमु : ३८ कार्य विचारमु चिरमुग
धैर्यमुतो नडुप वलयु दत्तत्क्रियलं
दार्यु डनार्युडु वीडनि
यार्युलु सेयुदुरु निश्चयंबु चिरमुगन्

कंदपद्यमु : ३९ विनु मचिर वृत्ति जेसिन
पनिकर्तकु नावहिंचु बश्चात्तापं
बनघा ! चिरभावित शु
द्धि निरूपण कृतमु शुभमु देजमु देच्चुन

आटवेलदिगीतम् : ४० इव्विधंबु गाक कोंवि काम क्रोध
कलित चित्त वृत्ति गलुग नडचु
पतिकि नगु जतुर्थ भागंबु प्रज सेयु
पापमुल गुलप्रदीप चरित !

कंदपद्यमु : ४१ रक्ष प्रज गोरु निज यो
ग क्षेमार्थमुग जनसुखस्थिति नडुपन्
दक्षुडगु राजु नडुप कु
पेक्षिंचिन बापमोंद दे कुरुमुख्या ?

कंदपद्यमु : ४२ दोषमरसि कार्मबुनु
रोषंबुनु लेक तगिन रूपुन जेयन्
बोषकमगु धर्ममुनकु
वैषम्य विहीन मैन वधमु कुमारा !

३६ हे नृप, राजा को चाहिए कि उसके सामने यदि कोई फ़ैसले के लिए आता है तो अच्छाई और बुराई को खूब समझ कर सच्चा व्यक्ति कौन है और दोषी कौन है, इसका निर्णय निपुणता के साथ करे।

३७ जो चरित्रवान व्यक्ति मित्रता और शत्रुता, पात्र और अपात्र का विचार परम्परागत धर्म-दृष्टि से करता है और सूक्ष्म बुद्धि से दोनों का निर्णय करता है वह व्यक्ति सदा कल्याण ही प्राप्त करता है।

३८ राजा को चाहिए कि वह कार्य का विचार सदा धीरता के साथ करे क्योंकि उन-उन क्रियाओं के लिए आर्य अनार्य का निर्णय शाश्वत रूप से आर्य ही करेंगे।

३९ हे पृथ्वी पति ! जो व्यक्ति बिना सोचे कार्य करता है उसे बाद को पश्चात्ताप करना पड़ता है। जो व्यक्ति सोच समझ कर एक निश्चय पर आकर कार्य की पूर्ति करता है उसे कल्याण और यश दोनों प्राप्त होते हैं।

४० हे राजन्, उपर्युक्त बताये मार्ग से न चल कर जो राजा घमण्ड के कारण काम-क्रोध आदि से मलिन चित्त हो कर कुमार्ग पर जनता को चलाता है, वह प्रजा द्वारा किये गये पापों का चतुर्थांश फल भोगता है।

४१ हे कौरवेन्द्र, जनता तो अपनी रक्षा चाहती है। राजा का कर्तव्य है कि जनता को सुखी एवं प्रसन्न रखते हुए शासन करे। इस उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य को योग्य सम्राट् यदि दक्षता के साथ नहीं चलाता है, और उपेक्षा भाव रखता है तो उस राजा को अवश्य पाप लगता है।

४२ हे पुत्र, राजा को चाहिए कि वह दोष को पहचान कर पक्षपात रहित हो कर गलती का निर्णय करे और धर्म-शास्त्रों में बताये गये मार्ग का अनुसरण करे।

कंदपद्यमु :

४३ नरुकुट यर्थमु गोनुट्यु
जेरनुनुचुट कट्टि यडचि चेट्पाटोंद्न
बरचुट मोदलुग गल पलु
देरगुल दगवुमेयिनडपु धीर विचारा !

सीसपद्यमु :

४४ व्यवहारशुद्धि सर्वप्रजा प्रियकारि
यदिय भूपतिकि धर्मातिशयमु
गीर्तियु जेयु नत्त्वीणसत्वुलु धर्म
परुलु नैन भूसुरुलु नीवु
त्रासुलु वोनि चित्तंबुल तोडनु
प्रज विवादंबुलु पत्त मुडिगि
विनि धन वांछमै धनिकुल देस त्रालि
तीर्पक धर्मंबु तेरूवु दप्प
कुंड वाडितीर्चि दंडिंप दगु नेड
ननुगुणंपु दंड माचरिंपु
मोरुग बलिकितेनि नुंडदु प्रज ; डेग
गनिन पुलुगु पिंडु करणि जेदरु

कंदपद्यमु :

४५ राजुनकु प्रज शरीरमु
राजु प्रजकु नात्म गान राजुनु प्रजयुन्
राजोत्तम ! यन्योन्य वि
राजितुलै युंडवलयु रत्तार्चनलन्

चंपकमाला :

४६ कमटमु लेक वैभवमु गप्पक योंडोरु मीद राजु पै
नपरिमित प्रियंबेसग नल्गक युंडु मुदंबु पोंदि ये
नृपु विपर्यंबुनन् प्रज विनिर्मल वृत्तत बुत्रुभंगि ना
नृपु नृपुंडडुरुगा कितरुर्नि दगुवारेद नियकोंदुरे ?

गीतपद्यमु :

४७ भूत वृद्धुलु धन लाभ-मुलुनु गलुगु
धर्ममुननु राजनुवाडु धर्म रत्त
कै जनिंचेनु गावुन नत डरोष
कामुडै धर्म निरंतुडु गाग वलयु

कंदपद्यमु :

४८ धनमुनकै धर्ममु देस
ननादरमु चेसेनेनि ना नृपतिकि न

४३ हे राजा, इस पृथ्वी के दण्ड-विधान में, फाँसी देना, अर्थ-दण्ड, क़ैद करना, रस्सियों से बाँध कर शहर भर में घुमाना आदि अनेक प्रकार के दण्ड हैं। इन्हें उचित रूप से प्रदान करो।

४४ राजा के लिए व्यवहार कुशलता और समस्त प्रजा पर समान प्रेम उत्तम गुण माने जाते हैं और ये ही गुण उसकी कीर्ति के केतु हैं। शक्तिमान तथा धार्मिक पुरोहितों की सहायता से राजा को चाहिए कि वह प्रजा के विवादों का निष्पक्ष हो कर तराजू की तरह न्याय करे और धन की लालसा से धनिकों का पक्ष न ले। इस प्रकार जो राजा धर्माधर्म जान कर दण्ड-विधान को संभालता है उसके राज्य में अन्यायी और दुष्टों का अन्त हो जाएगा जैसे कि बाज़ को देख कर कबूतरों का समूह उड़ जाता है।

४५ हे नृपवर, राजा के लिए तो प्रजा शरीर के समान है और राजा प्रजा की आत्मा है। इस राजा और प्रजा को एक दूसरे की रक्षा करने और पाने में परस्पर शुद्ध हृदय से उद्यत रहना चाहिए।

४६ कपट चित्त तथा घमंडी न हो कर जो राजा प्रजा के शासन कार्य में लगा रहता है उस राजा पर प्रजा अत्यधिक अनुरक्त रहती है और उसकी आज्ञा का पालन करते हुए विनयशील बनी रहती है। जिस राजा के शासन से तृप्त हो कर जिस राज्य की जनता राजा के प्रति शुद्ध व्यवहार करती है तथा सन्तान की तरह सभी कार्यों में राजा को पूज्य मानती है वही राजा सच्चे अर्थों में राजा माना जाता है अन्य नहीं।

४७ राजा का जन्म धर्म की रक्षा के लिए होता है। इसलिए उसको चाहिए कि विषय-वासना और क्रोध आदि से दूर रह कर धर्म के पथ पर चले। जो राजा इस प्रकार प्रजा के प्रति व्यवहार करता है उसके राज्य का विस्तार होगा। राज्य, और धन, यश तथा धर्म की वृद्धि होगी।

४८ हे राजा, जो राजा धन की प्राप्ति में धर्म की उपेक्षा करता है उस राजा

: ద్దనముని జెడ్డు దుర్యశమున్
బనుగోను దుదిి దుర్గతియును ఆటిలు ననఘా

కందపద్యము : ४९ లాభంబు ధర్మముఖ్యము
గా భరపడి మార్గ శుద్ధి గనుగోని కైకో
లా భూవరునకు నిహ పర
శోభనములు సేల చెప్పు శ్రుతివాక్యంబుల్

కందపద్యము : ५० ఆయతి కిమ్మేయి గలుగు ను
పాయంబుల ధర్మమార్గఫలితంబులు గా
జేయుట్యు మేలు నృపతికి
మాయాకృతి నిపుణుడగుట మతి గాదు సుమీ

కందపద్యము : ५१ విను కర్షకులును వణిజులు
ననఘా ! గో రక్షకులు ధరాధీశునకున్
ధన మొడగూడెడు చోట్ల
ననేక విధములకున వెల్ల నాద్యస్థలముల్

గీతపద్యము : ५२ ధనములకు ధాన్యములకు నుత్పత్తి తలము
లయినవాని కించుకయును హానిగాక
యుండదనకును భండార మొదవ దగు ను
పార్జనము సేయవలయు భూ పాలకుండు

కందపద్యము : ५३ అవు బెహారము గృషియున్
సవరణలును బనులసొంపు సరియట్లగుటన్
భువిబనులు గలుగు కాపుల
నవనీశుడు కన్న ప్రజల యట్లరయ దగున్

కందపద్యము : ५४ అరయుట వ్రజ వర్ధిల్లగ
నరిఏటేట ప్రమవృద్ధి యౌనట్టులు గా
నరపతికి గోనగ వచ్చున్
వెరవున బెపంగ జాల వెలయు ధనంబుల్

ఆటవెలదిగీతమ్ : ५५ కోరితోట్వాడు కుసుమ ఫలంబులు
గోయునట్లు రాజు గోనగ వలయు
నవ్వనంబు నరికి యంగారములు సేయు
భంగియైనభూమి పాడుగాదె ?

को धन के कारण अनेक दुर्गुण आ घेरते हैं और अन्त में उन दुर्गुणों से राजा की दुर्गति होती है।

४६ हे नृपवर, वेद इस बात की घोषणा कर रहे हैं कि राजा के लिए धर्म-लाभ ही मुख्य है। जो राजा इस मार्ग को पहचान कर इस पर चलता है उसे इस संसार और परलोक में सुख मिलता है।

५० किन उपयों से धर्म-पथ पर चलने से अधिक लाभ होगा यह जान कर राजा को अधिक धर्म लाभ करना चाहिए। प्रपञ्च के कार्यों में प्रवीण होने और उनसे धनार्जन करना ठीक नहीं। वह बुद्धिमत्ता का कार्य भी नहीं कहलाएगा।

५१ हे नरेश, राजा के लिए कृषक, व्यापारी और गोरक्षक अनेक प्रकार से लाभ पहुँचाते हैं, अर्थात् इन लोगों के द्वारा राजा को कर के रूप में अधिक धन मिलता है।

५२ राजा को चाहिए धन और धान्य की उत्पत्ति करनेवालों को किसी प्रकार की हानि न होने दे। क्योंकि इन्हीं लोगों के कारण राज्य का खजाना भरता है और तभी राज्य के प्रबन्ध के लिए धन का संग्रह हो सकता है।

५३ राजा का कर्तव्य है कि वह व्यापारी, किसान तथा गो-रक्षकों को अपनी संतान की तरह देखे। पृथ्वी के सभी कार्यों का मूल पशु (गाय-भैंस) ही हैं। राज्य की संपत्ति का भी अच्छा स्थान है क्योंकि इन्हीं से देश समृद्ध बन सकता है। इसलिए इनकी सुरक्षा का प्रबन्ध राजा को अच्छी तरह से करना चाहिए।

५४ जनता जब सुख संपत्ति से आनंदमय जीवन व्यतीत करेगी और उनकी संपत्ति से प्रति वर्ष बढ़ती जाएगी तो राजा के पास भी धन का संग्रह अधिक होता जाएगा तभी राज्य में सुख और शांति का साम्राज्य फैलेगा।

५५ जैसे माली बगीचे से फूल और फल चुनता है वैसे ही राजा को चाहिए वह जनता की आय के अनुसार कर वसूल करे। यदि जनता की शक्ति से अधिक कर वसूल किया जाता है तो उस राज्य की स्थिति ऐसी हो जाएगी जैसे कि फल-फूलों से युक्त वन के सभी वृक्षों को जड़ से काट कर उनका कोयला बनाया गया हो। ऐसी

चंपकमाला : ५६ जनकुडु वोले नर्मिलि ब्रजंब्ररिकिंपुचु षष्ठभागमुं
गोनुनदि, वारिचेत नरिकोटि विधंबुल नाश दत्तुलन्
घनवन गोकुलाकर नगप्रमुखार्थकरंबु लारयन्
ब्रनुचुचु नन्निटन् धरणिपालुडु कन्निडि युंडगा दगुन्

कंदपद्यमु : ५७ अरि यारव पाल्कोनुचुन्
गरुण गलिगि प्रजल दंड्रि गति मध्यस्था
चरणंबुन बालिंचुट
परमपदमु जेर्चु विडुवु भयसंशयमुल्

कंदपद्यमु : ५८ अरि मिगुल गोनुट गोवुल
बोरिमालग बिदिकि नट्लु भूवर ! कदुपुन्
वेरवुन बेनिचिन यट्लगु
नरपति प्रजचेत नप्पनमु दग गोनिनन्

कंदपद्यमु : ५९ परुसदनमु मेइ नरिगोन
जोरदग, दुदि पोदुगु गोयु चोप्पगु विनु पा
ल्गुरियिंचुकोनग दलचिन
नरय वलदे गोवु, ब्रजयु नट्टिद यधिपा !

कंदपद्यमु : ६० पुलि कूनल दिनुचन्दमु
गलिगिन नंतटने निलुचु गाक धनंबुल्
गलुगुने मीदं गावुन
जलगदिगिचिनट्लु गोनग जनुनिल सोम्मुल्

कंदपद्यमु : ६१ धनमु सवरिंचिन ब्रयो
जनमेमि यपात्रमुलकु जल्लि जेरचु ने
नि नरेंद्र ! मुख्य व्ययमुलु
विनु रक्षय सिरिकि बात्र विषयमुलैनन्

कंदपद्यमु : ६२ विनु गर्भिणि प्रजब्रतुकुन
कनुरूपमुलैन यट्टि याहारंबुल्
गोनुगति ब्रति धरणी प्रज
मनिकिकि दग नडुचुनदि तमकिगा केपुडुन्

५६ पिता की भाँति जनता का शासन करते हुए और उनके सुख दुःख का ख्याल रखते हुए राजा को चाहिए कि जनता की आय का षष्ठांश कर के रूप में ग्रहण करे। उस धन से अपने आश्रितों, कर्मचारियों और समस्त जनता की रक्षा तथा अनेक प्रकार की सुविधाओं के लिए प्रबन्ध करें। इसके अतिरिक्त जंगल, मैदान, पर्वत, उद्यान, वन आदि का प्रबन्ध और सुरक्षा करते हुए जो आय हो उस से राज्य का प्रबन्ध करना चाहिए।

५७ जो राजा भय और संशय को छोड़ कर मर्यादा एवं दया के साथ पिता की तरह जनता पर शासन करता है वह निश्चय ही मोक्ष प्राप्त करता है।

५८ राजा का जनता से अधिक कर वसूल करना, गाय का दूध दुह दुह कर उसे दूधहीन बना देने के सदृश है। इसलिए हे राजा, प्रजा से उचित मात्रा में ही कर वसूल करना चाहिए। गाय का दूध थोड़ा-सा दुह कर बाकी बछड़े के लिए छोड़ा जाता है जिससे वह बलिष्ठ हो जाता है वैसे ही जनता से थोड़ा-सा कर वसूल करने से जनता सुखी और समृद्ध रहेगी।

५९ हे राजा, जनता के साथ कभी भी कठोर व्यवहार नहीं करना चहिए। यदि उसके साथ कठोर व्यवहार किया गया तो जैसे गाय के थन काटने पर दूध का मिलना दुर्लभ है वैसे ही जनता के प्रति कठोर व्यवहार करने से कोई लाभ नहीं।

६० जैसे शेरनी उत्पन्न होते ही अपने शिशुओं का भक्षण कर लेती है, वैसे ही धन के प्राप्त होते ही वह नहीं रहता। यदि धन का संग्रह करना ही है तो जोंक की तरह चूस-चूस कर ही धीरे धीरे लोगों का धन संग्रह किया जा सकता है।

६१ हे नरेन्द्र, धन का संग्रह करके व्यर्थ ही खर्च करना ठीक नहीं है। यदि धन खर्च करना ही है तो उसे ऐसे कार्यों में खर्च किया जाए जिससे अक्षय सम्पत्ति प्राप्त हो।

६२ हे राजन, जैसे पति गर्भवती स्त्रियों के लिए अपूर्व एवं विचित्र आहार ला कर देते हैं वैसे ही राजा को भी चाहिए कि धन का व्यय अपने लिए ही न करके जनता को प्रदान करे।

गीतपद्यमु ६३ वर्णमुलु नाश्रमंबुलु वसुमतीशु
डुक्तपथमुन नडिपिंप नुभयलोक
सिद्धिगनु दप्प द्रोकनि शिष्ट जनुलु
गलनरेंद्रुन किंद्रुडु दलप सरिये ?

मत्तेभविक्रीडितम् : ६४ अरयं दप्पु कृतंबेरुंगु, मदलोभावेशमुन् लेदु, मु
ष्करुडात्म स्तुतिलेदु, सेयु नियतिं कार्यंबु लीगुन् घन
स्थिरमुल्, शूरुडु गर्विगा डशठुडुन स्त्रीलोलुड क्रोधनुं
डरिनोव्वंगनडन् ब्रोगड्तगनु रा जत्यंत दीप्तुंडगुन्

चंपकमाला : ६५ अतडुनु मंदहास सहितालपनंबुनु, सत्यभाषण
व्रतमु, सुसंविभागनिरवद्यतयुन्, समभावमुन्, गृत
ज्ञतयु, जितेन्द्रियत्वमु, प्रसादफलंबुनु गलिग भूमिकिं
बित्रु समुडै विरोधिजनभीषण सारत नोप्पु बेंपगुन्

कंदपद्यमु : ६६ मृदु मधुर वाक्यमुल निं
पोदवेडु चिरुनव्वु तोड नुर्वीशुडु स
म्मदमु सच्चिवुलकु प्रजलकु
नोदविंपग वलयु; नदि महोन्नति जेयुन्

कंदपद्यमु : ६७ यागमुलुनु भोगमुलुनु
त्यागंबुलु बहुविधमुल धर्ममुलु महा
भागा ! नरपति रक्षा
योगंबुन जेल्लु प्रजकु नुल्लासमुगन्

आटवेलदिगीतम् : ६८ सकल वर्ण धर्म संकर रक्षयु
संधि विग्रहादि षड्गुणमुलु
नलय करयुटयुनु नर्थसम्यगुपार्ज
नमुनु नृपति येपुडु नडुप वलयु

सीसपद्यमु : ६९ धर्म मर्गबुन धरणि बालिंचिन
नैहिक सुखमुलु नग्गलंपु
ब्रोगडुनु बरलोक भूरि सौख्यमुलुनु
सिद्धिंचु; विपुल दक्षिणलु बेट्टि

६३ जो राजा वर्णों और आश्रमों को उचित पथ पर चलाते हैं उनको उभय लोक की प्राप्ति होती है। जिस राज्य में चरित्रवान् तथा धर्मात्मा व्यक्ति रहेंगे उस राज्य के नरेश के सामने इन्द्र भी तुच्छ हैं।

६४ यदि राजा अपने किए हुए कार्यों की जाँच सावधानी के साथ करे तो अपनी बुराइयों को जान सकता है। जो राजा अपनी ग़लती को जानता है, जिसमें क्रोध, लोभ, मोह नहीं है, जो आत्मस्तुति नहीं चाहता, जो नियम पूर्वक अपना कार्य उत्साह के साथ करता है, जो पुण्य कार्यों के सम्पादन में लगा रहता है, जो शूर और निरभिमानी है, जो क्रोधी और व्यभिचारी नहीं है, जो जनता से उचित मात्रा में कर वसूल करके जनता की भलाई करता है, वह जनता के प्रेम का पात्र हो कर अत्यन्त यशस्वी हो जाता है।

६५ जो राजा सदा प्रसन्नचित्त रहे, दूसरों की भलाई चाहे, सत्य भाषण करे, व्रती, समदृष्टि, कृतज्ञ, जितेन्द्रिय हो, पृथ्वी के लिए पिता के समान तथा शत्रुओं के लिए भयंकर हो वह अवश्य ही उन्नति करेगा।

६६ राजा सर्वदा प्रसन्नचित्त रहे। जो राजा मधुर वाक्यों एवं अपने सद्व्यवहारों से अपने मन्त्री, और प्रजादि को प्रसन्न रखता है उसकी उन्नति होती है। वह यश प्राप्त करता है।

६७ राजा के लिए यज्ञ, याग, भोग, उद्योग आदि अनेक प्रकार के धर्म रक्षायोग बन कर प्रजा को अधिक आनन्द प्राप्त कराते हैं अर्थात् जो राजा उपर्युक्त धर्मों में लगे रहते हैं, उनकी प्रजा राजा से सन्तुष्ट रहती है।

६८ समस्त वर्णाश्रम धर्मों की रक्षा करना, संधि, विग्रह आदि षड्गुणों के पालन का ध्यान रखते हुए समुचित धन का उपार्जन कर राजा को राज्य चलाना चाहिए।

६९ हे नृप, धर्म के अनुसार पृथ्वी का शासन करने से राजा को सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं और उसकी प्रशंसा होती है। जो राजा प्रजा को अत्यन्त आदर एवं सहानुभूति के साथ अपनी संतान समझ कर, उसकी भलाई में अपनी भलाई समझ कर सदैव उसकी रक्षा में तत्पर रहता है, जो अपने को उसका सेवक मानता

यश्वमेघ प्रमुखाध्वरंबुलु पेक्कु
लाचरिंचुट कंटे नधिकमंडृ
मेदिनी प्रजलन त्यादरंबुनु गरु
णति शयंबु मध्यस्थतयुनु
कलिगि विड्डुल नरसिन करणि गाढ
रक्षणं बोनरिंचुट राजवर्य
विनुमु तम्मूल नीगि मन्ननल ननुदि
नंबु गोनियाड्डु मा नंदनंबु गाग

गीतपद्यमु : ७० अधिप नाना प्रकार चराचरंबु
लिंद वेर्वेर जनियिंचु निंद पेरुगु
बिदप निंद यडंगु नी पृथ्वि दान
सकलमुनकु बरायण स्थान मरय

कंदपद्यमु : ७१ दांतियु ब्रियवादित्वमु
शान्तियु शीलंबु गलुगु जगदीशुड्डु श्री
मंतुड्डु यशस्वियुनु नै
येंतयु सौख्यंबु नोंदु निभपुरनाथा !

आटवेलदिगीतम् : ७२ अर्थसिद्धिकंटे नरय नेक्कुड्डु धर्म
सिद्धि दान सकल सिद्धुलुनु ब्र
शस्त भंगि जेरु शाश्वत कीर्तियु
संभविंचु गलुगु सद्गतियुनु

गीतपद्यमु : ७३ शस्त्र जीविकयु नरि षष्ठ भाग
माहरिंचुटयुनु भृत्यु नरयुटयुनु
ब्रज विवादंबु विनुचोट बक्षपाति
गामियुनु राजुलकु गृत्यकर्मकोटि

आटवेलदिगीतत् : ७४ न्याय शास्त्र वेदियै यिंगिताकार
चेष्टलेरिगि जनुल शिष्ट दुष्ट
ता विशेष्र मरसि दंडनीति योनर्चु
पतिकि नेल्ल मेलु पडयवच्चु

कंदपद्यमु : ७५ व्याकुलत बोंदि रूपरु
लोक स्थिति तोंटिराजलोकमुचे नं

है उसे इस लोक और परलोक में वह सुख प्राप्त होता है जो विपुल दान-दक्षिणा के साथ अश्वमेधादि यज्ञों के करने से नहीं होता। हे नरपति, जनता की भलाई के लिए अपने अनुजों को त्याग कर सदैव प्रजा की प्रशंसा प्राप्त करते हुए आनन्द पूर्वक समय बिताइए।

७० हे राजा, नाना प्रकार के चराचर इस पृथ्वी पर जन्म लेते हैं, यहीं विकास पाते हैं, तदनन्तर यहीं पर नाश हो जाते हैं। समस्त जीवों के लिए जन्म, विकास और लय की क्रीड़ास्थली यह पृथ्वी समस्त पुण्यों का केन्द्र मानी जाती है।

७१ हे धरणीश, तुम इन्द्रिय-निग्रही, प्रियभाषी, शान्त और सुशील होने के कारण अपार संपत्ति एवं यश प्राप्त करके अनंत सुख प्राप्त कर सकोगे।

७२ हे नृपवर, विचार करने पर मालूम होता है, अर्थ-सिद्धि से भी अधिक महत्वपूर्ण वस्तु धर्म-सिद्धि है! धर्म के पालन करने से समस्त सिद्धियाँ, शाश्वतकीर्ति और मुक्ति अपने आप प्राप्त हो जाती हैं।

७३ शस्त्रों के बल पर राज्य में शान्ति और रक्षा कायम रखते हुए उचित न्याय विधान के साथ जनता की आय में से छठवाँ हिस्सा वसूल करना, सेना एवं कर्मचारियों का प्रबन्ध और देखभाल करना, जनता की शिकायतों को सुनते समय पक्षपात-रहित होना, ये गुण राजाओं के कर्तव्य माने जाते हैं।

७४ जो राजा न्याय-शास्त्र का पारंगत हो कर जनता के अभिप्रायों एवं कार्यों से परिचित हो कर उनकी बुराई-भलाई को परख कर उचित दंडनीति का सहारा लेता है, उसे सभी पुण्य प्राप्त होते हैं।

७५ प्राचीन काल के राजाओं ने पहले जिन धर्मों को अंगीकृत किया आज के राजा यदि उन धर्मों का बहिष्कार करें तो लोक-स्थिति डाँवाडोल हो जाएगी और

गीकृत मगु धर्म मनंगी
कृतमगुनेनि; वीतकिल्बिषचरिता !

कंदपद्यमु : ७६ तरणि शशांकुल तेज
स्फुरणमु लेकुन्नयट्लु भूजनमुलु नि
र्भर दुरितत जेड्पडुदुरु
नरपालक ! विहितपालनमु लेकुन्नन्

कंदपद्यमु : ७७ विनिकि गलिगि रक्षिंचुचु
ननुवुन दयतोडि पाडि नायतुलेल्लन्
गोनुचुदग नेलि पोगडों
दिन नृपुलकु नुर्वि गामधेनुवु गादे ?

कंदपद्यमु : ७८ कोपंबुलेमि सत्या
लापमु निजदार पर विलासमु शुचिता
गोपन मद्रोहं बव
नी पालक ! सर्ववर्ण नियत गुणंबुल्

कंदपद्यमु : ७९ दय व्रज रक्षिंचुटकु ने
नये तपमुलु नध्वरमुलु नरवर ! दानन्
जयमुनु लक्ष्मियुनुं गी
र्तियु सुगतियु गलुगु वसुमती नाथुनकुन्

सेवा धर्ममु

उत्पलमाला : ८० एंडकु वानकोर्चि तन इल्लु प्रवासपु चोटु नाक या
कोंडु नलंगुदुन्निदुर कुं दरि दप्पेनु डप्पि पुट्टे नो
कंडन येट्लोको यनक कार्यमु मुट्टिन चोट नेलि ना
तंडोक चाय चूपिननु दत्परतन् बनि सेयु टोप्पगुन्

चंपकमाला : ८१ धरणिपु चक्क गट्टेदुरु दक्कि पिरुंदुनु गानियट्लुगा
निरुगेलनन् दगं गोलिचि येमनुनो येट्टुचूचु नोक्को ये
व्वरिदेस नेप्पुडे तलपु वच्चुनो ईतनि कंचु जूड्कि सु
स्थिरमुग दन्मुखंबुनन चेरिचि युंडुट नीति कोल्वुनन्

प्रजा व्याकुल हो कर कष्ट भोगेगी। इसलिए हे नृप, प्राचीन समय में स्वीकृत धर्मों का आज लोप नहीं होने देना चाहिए।

७६ हे नरपति, जैसे सूर्य और चन्द्रमा के अभाव में पृथ्वी की जनता असंख्य प्रकार की कठिनाइयों में पड़ जाती है और उनका जीवन निर्वाह दूभर हो जाता है, वैसे ही राजा के अच्छे शासन के अभाव में जनता विपत्ति में पड़ कर दुःखी जीवन व्यतीत करती है।

७७ हे राजा, लोगों की शिकायतों को सुन कर उनकी कठिनाइयों की ओर ध्यान देते हुए जो नृप जनता की रक्षा करते हैं और उचित रूप से दया और न्याय के साथ लोगों से कर लेते हुए जनता की भलाई में लगे रहते हैं उन्हें जनता की प्रशंसा भी प्राप्त होती है। ऐसे राजाओं के लिए यह पृथ्वी कामधेनु नहीं तो क्या है!

७८ क्रोध-रहित होना, सत्यवचन बोलना, एक पत्नीव्रत होना, पवित्र हृदयी, निर्मल चरित्र और सहृदयता द्रोह की भावना न रहना, ये सब गुण समस्त वर्णों के लिए नियत हैं अर्थात् उपर्युक्त गुण मानव मात्र के लिए आवश्यक हैं। अक्रोध, सत्यवादिता, एक पत्नीव्रत, हृदय की पवित्रता, सच्चरित्रता, सहृदयता, अद्रोह, सभी वर्णों के लिए आवश्यक हैं।

७६ हे भूपति, यदि राजा दया के साथ जनता की रक्षा करना चाहता है तो उसे तप और यज्ञादि भी करना चाहिए जिनसे उसको विजय, संपत्ति कीर्ति और मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

सेवा धर्म

८० गर्मी और वर्षा को सहन करना चाहिए और घर या प्रवास का ख़्याल नहीं करना चाहिए। पहाड़ी प्रदेश को जोतते हुए मनुष्य को निद्रा, प्यास और भूख की ओर ध्यान न दे कर कार्य में तत्पर रहना चाहिए।

८१ राज सभा में राजा के सामने खड़ा नहीं होना चाहिए। राजा के पीछे या पार्श्व में खड़ा होना शिष्टाचार है। राज कर्मचारियों को चाहिए कि वे सदा राजा की तरफ़ मुँह किए हुए सदैव इस बात की प्रतीक्षा में रहें कि राजा किस समय क्या आज्ञा देते हैं। यही राज कर्मचारियों का उत्तम धर्म माना जाता है।

कंदपद्यमु : ८२ तग जोच्चि तनकु नहे
बगु नेड गूर्चुडि रूप मविकृतवेषं
बुग समय मेरिगि कोलचिन
जगतीवल्लभुन कतडु सम्मान्यु डगुन्

कंद्पद्यमु : ८३ ऊरक युंडक पलुवुर
तो रवमेसगंग बलुक दोडरकयु मदिं
जेरुव गल नागरकुलु
दारु गलिसि पलुक वलयु धरणीशु कडन्

आटवेलदि : ८४ राजुनोद्द बलुवु रकु संकटंबुगा
दिरुगु पनुल नेत तेजमैन
वानि बुद्धिगलुगु वारोल्ल रदु मीद
जेट्टु देच्चु टेट्लु सिद्ध मगुट

कंदपद्यमु : ८५ चनुवानि चेयु कार्य
बुन कड्डमु सोचि नेरुपुन मेलगुचु दा
नुनु बयि बूसि कोनिन दन
मुनु मेलगेड्डु मेलकुवकुनु मुप्पगु बिद्पन्

आटवेलदि : ८६ वसुमतीशुपाल वर्त्तिचु नेनुंगु
तोडनैन दोमतोडनैन
वैरमगु तेरंगु वलवदु तानेंत
पूज्युडैन जनुल पोंदु लेस्स

कंदपद्यमु : ८७ वेरोक तेरगुन नोरुलकु
माराडक युनिकि लेस्स मनुजेंद्रनकुन्
तीरमि गल चोट्टुल दा
मीरि कडगिवच्चि पंपु मेयिकोनवलयुन्

आटवेलदि : ८८ आवुलिंत तुम्मु हासंबु निष्ठीव
नंबु गुप्त वर्तनमुलु गाग
सलुप वलयु नृपति कोलुवुन्न येड्ल ब्रा
हिरमुलैन गेलनि केग्गु लगुट

८२ जो व्यक्ति उचित समय व कार्य पर राजा के पास जाकर अपने लिए योग्य आसन पर बैठता है और जिस व्यक्ति की वेश भूषा तथा रूप विकृत नहीं होता तथा जो अच्छे मौके पर जाकर राजा से प्रार्थना करता है, वह राजा से अवश्य सम्मानित होगा।

८३ राजदरबार में अन्य लोगों से बातें करते हुए अनावश्यक शोरगुल नहीं करना चाहिए। राजदरबार के लोगों को केवल राजा से ही संभाषण करना चाहिए। अर्थात् राजसभा में अनावश्यक बाहरी बातों की चर्चा छेड़ कर कार्यों में बाधा नहीं डालनी चाहिए।

८४ राजा के दरबार में अनेक लोगों को संकट में डालने वाले कार्यों को नहीं करना चाहिए। यदि इस नियम का पालन नहीं किया गया तो बुद्धिमान व्यक्ति भी हानि उठाएगा। इसलिए सदैव दूसरों को लाभ पहुँचाने का कार्य ही करना चाहिए।

८५ जो व्यक्ति योग्य है उसे उचित कार्य सौंपना चाहिए। उसके कार्य करते समय बीच-बीच में रोड़े अटकाना और दखल देना अच्छा नहीं है। इस से कार्य के बिगड़ जाने व हानि होने की संभावना है।

८६ हे भूपाल, चाहे राजा कितना ही बलवान् क्यों न हो उसको छोटे या बड़े लोगों के साथ विरोध नहीं मोल लेना चाहिए इस से उनके बड़प्पन के कम होने की संभावना रहती है राजा के लिए तो जनता का प्रेम ही सबसे बड़ा सहारा है।

८७ दूसरों को दुःख देने वाली बातें नहीं करनी चाहिएँ। राजा से कोई काम हो तो जब राजा कार्यों समाप्त करके अवकाश में हो तब आगे बढ़ कर उनकी आज्ञा जाननी चाहिए अन्यथा राजा के पास नहीं जाना चाहिये। राज-दर्बार में शिष्टाचार की कुछ खास बातें होती हैं उनका पालन करना आवश्यक और हितकर है।

८८ जंभाई लेना, छींकना, हँसना, थूकना आदि कार्य राजा के दरबार में निषिद्ध हैं। पास बैठे हुए लोगों को ये चीजें असह्य मालूम होती हैं, इसलिए इन कार्यों को प्रकट रूप से नहीं करना चाहिए।

कंदपद्यमु : ८९ पुत्रुलु बौत्रुलु भ्रातलु
मित्रु लनरु राजु लाज्ञ मीरिन चोटन्
शत्रुलका दम यलुककु
बातमु चेयुदुरु निजशुभस्थितिपोंटेन्

कंदपद्यमु : ९० नरनाथु गोलिच्चि यलवड
दिरिगिति नाकेमि यनुचु देकुव लेक
म्मरियाद द्प्प मेलगिन
बुरुषार्थंबुनकु हानि पुट्टुकयुन्ने ?

कंदपद्यमु : ९१ तानेंत याप्तुडैन म
हीनायकु सोम्मु पामु नेम्मुलुगा लो
नूनिन भयमुन बोरयक
मानिन गाकेल गलुगु मानमु, ब्रदुकुन्

कंदपद्यमु : ९२ जनपति येव्वरि नैननु
मनुप जेरुप बूनियुनिकि मदि देलिय नेरिं
गिन नैन दानु वेलिपु
च्चुने मुनुमुन्नेट्टि पालसुंड्डनु दानिन्

कंदपद्यमु : ९३ ग्रंति पुरमु चुट्टरिकं
बेंतयु गीडंतकंटे नेग्गु तदीयो
पांत च्चर कुब्ज वामन
कांतादुल तोडि पोंदुकलिमि भट्टुनकुन्

कंदपद्यमु : ९४ नगळुल लोपलि माटलु
तगुने वेलि नुग्गडिंप दन केपंड नों
डुगडं बुट्टिन ब्रति विन
नगुपनि चेप्पेडिदि गाक यातनि तोडन्

उत्पलमाला : ९५ राजगृहंबु कंटे नभिराममुगा निलु गट्ट कूड दे
योज नृपालु डाकृतिकि नोप्पगु वेषमु लाचरिंचु ने
योज विहारमुल् सलुप नुल्लमुनन् गड्डु वेड्क चेयु ने
योज विदग्धुडै पलुकु नोड्डलकुनं दग दट्लु चेयगन्

८९ राजा को चाहिए कि आज्ञा के उल्लंघन करने वाले को दण्ड दे चाहे वह पुत्र, पौत्र, भ्राता, मित्र ही क्यों न हो। क्योंकि ये लोग बुराई करके राजा के क्रोध के पात्र हो जाते हैं उनके दमन से ही राजा का कल्याण होता है।

९० जो व्यक्ति इस बात का घमण्ड करता है कि मैंने राजा की सेवा की है, राजा के साथ बहुत दिन बिताए हैं, मुझे किसी की परवाह ही क्या? जो लोग इस तरह सीमा का उल्लंघन करते हैं, क्या वे राज्य के उद्देश्यों को हानि नहीं पहुँचाते?

९१ कोई व्यक्ति राजा का कितना ही घनिष्ठ मित्र क्यों न हो उसे राजा के पैसे से बचना चाहिए। जैसे सर्प को देख कर लोग डरते हैं। तभी उसकी इज़्ज़त बच सकती है, अन्यथा उसकी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाती है।

९२ यदि राजा किसी की रक्षा करना चाहे, किसी को तकलीफ़ देना चाहे या किसी का संहार करना चाहे तो अपने निश्चयों को गुप्त रखना चाहिए और सामन्त तथा पार्षदों को भी इसमें सहायता करनी चाहिए।

९३ किसी राजसेवक को अंतःपुर की स्त्रियों के साथ सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। कुब्जा, वामना आदि कांताओं से जो धन लिया जाता है वह अधिक हानि कारक है। इसलिए राजसेवक को चाहिए वह इन लोगों के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखे और निस्स्वार्थ सेवा करें।

९४ अंतःपुर की बातों को अन्यत्र कहना सेवक के लिए उचित नहीं मालिक या मालिकिन से जो आज्ञा मिले उसका पालन करना ही सेवक का कर्तव्य है।

९५ किसी को राज-भवन से सुन्दर भवन नहीं बनवाना चहिए। किसी को राजोचित वेष-भूषा धारण नहीं करनी चाहिए। मन को अत्यंत आह्लाद पहुँचाने वाला राजोचित विहार नहीं करना चाहिए न राजाओं की तरह बोलना चाहिए। अर्थात् अपनी स्थिति एवं योग्यता का विचार रख कर उसके अनुकूल वेष-भूषा और निवास का प्रबन्ध करना चाहिए।

आटवेलदि : ९६ उत्तमासनमुलु नुत्कृष्ट वाहनं
बुलुनु गरुण दमकु भूमिपालु
डीक तार येक्कु टेंतटि मन्नन
गलुगु वारिकैन गार्य मगुने ?

कंदपद्यमु : ९७ कलिमिकि भोगमुलु कदा
फलमनि ता मेरसि ब्रयलुपड बेल्लुग वि
च्चलविडि भोगिंपक वे
ड्कलु सलुपग वलयु भटुडडंकुव तोडन्

कंदपद्यमु : ९८ मन्नन कुब्बक यवमति
दन्नोंदिन सुक्क बडक धरणीशुकडन्
मुन्नुन्न यट्ल मेलगिन
यन्नरुनकु शुभमु लोदवु नापद लडगुन्

कंदपद्यमु : ९९ नियतिमेयि नेव्व डिंद्रिय
जयमुनु भक्तियुनु जित्त सारमु दृढ़ सं
श्रयतयु गलिगि कोलुचु नृपु
नयसंपन्नुनिग जेयु नधिपति यतनिन्

९६ यदि राजा कृपालु हो कर किसी को उत्तम आसन या उत्कृष्ट वाहन न दें तो वह चाहे कितना भी बड़ा आदमी क्यों न हो उसका कार्य न होगा।

९७ अनंत संपदाओं का परिणाम या फल भोग ही है यह समझ कर स्वेच्छा से सभी प्रकार के सुखों का भोग नहीं करना चाहिए। सेवक को चाहिए वह अपनी स्थिति और आवश्यकता को समझ कर उसके अनुकूल उचित मात्रा में संपदा का भोग करे।

९८ जो व्यक्ति अपनी प्रशंसा से फूलता नहीं और अपमान से कुढ़ता नहीं और राजा के यहाँ सदा समान रूप से व्यवहार करता है, उसकी विपत्तियाँ दूर होती हैं और उसका कल्याण होता है।

९९ जो व्यक्ति जितेन्द्रिय होकर, भक्ति, निश्छलता और दृढ़ संकल्प से नियमपूर्वक राजा की सेवा करता है उसे राजा भी सुविधाओं से संतुष्ट करता है।

आन्ध्र महाभागवतमु

(माया)

सीसपद्यमु : १ ओक्कडै नित्युडै एक्कड गड लेक
सोरिदि जन्मादुल शून्युडगुचु
सर्वबुनंदुंडि सर्वबु दनयंदु
नुंडग सर्वाश्रयुंडनंग
सूक्ष्ममै स्थूलमै सूक्ष्माधिकमुलकु
साम्यमै स्वप्रकाशमुन वेलिगि
यखिलंबु जूचुचु नखिल प्रभावुडै
यखिलंबु दनयंदु नडचिकोनुचु
नात्म माया गुणंबुल नात्ममयमु
गाग विश्वंबु दनसृष्टि घनत जेद
जेयुचुंडुनु सर्व संजीवनुंडु
रमण विश्वात्मुडैन नारायणुंडु

कंदपद्यमु : २ वनजाक्ष योगमाया
जनितंबगु विश्वजनन संस्थान विना
शनमुल तेर गेरिगिंपुदु
ननघा विष्णुनि महत्त्व मभिवर्णितुन्

कंदपद्यमु : ३ अगुणुंडगु परमेशुडु
जगमुल गलिंपचुकोरकु जतुरत माया
सगुणुंडगु गावुन हरि
भगवंतु डनग बरगे भव्यचरित्रा

सीसपद्यमु : ४ अरयंग नेमिटि यंदु नी विश्वंबु
विदितमै युंडु नी विश्वमंदु
नेदि प्रकाशिंचु नेप्पुडु निट्टि स्व
यंज्योति नित्यंबु नव्ययंबु
नाकाशमुनु वोलि यविरल व्यापक
मगु नात्मतत्वंबु नधिक महिम
दनरु परब्रह्म मगु ननिपल्कि यि
ट्लनियै ववििक्रियुं डैनवाडु

आन्ध्र महाभागवत्

(माया)

१ श्रीमन्नारायण ही नित्य हैं और उनका आदि और अन्त नहीं है। वे पुनर्जन्म आदि से मुक्त हैं। संसार के समस्त पदार्थों एवं प्राणियों में वे विराजमान हैं और सारा विश्व उनमें प्रतिबिम्बित है इसीलिए वे सर्वव्यापी नाम से विख्यात हैं। वे स्थूल भी हैं और सूक्ष्म भी। अपने सूक्ष्म प्रकाश के साथ ज्योतिर्मान हो कर अखिल विश्व का निरीक्षण करते हुए विश्व में व्याप्त हैं। समस्त विश्व को अपने में धारण किए हुए हैं। आत्मा के मर्यादा आदि गुण आत्ममय हैं। इस प्रकार सारा विश्व सृष्टि की महिमा की घोषणा करता रहेगा। वे समस्त प्राणियों को संजीवनी प्रदान करने वाले पति तथा विश्वात्मा हैं। वे ही नारायण हैं।

२ हे राजा, मैं तुम्हें इस विश्व के जन्म विकास और लय का विधान समझाऊँगा जो माया तथा अन्य गुणों से पूर्ण है।

३ हे राजा, जगत की सृष्टि के लिए निराकार ईश्वर चतुरता के साथ माया से युक्त सगुण रूप धारण करते हैं। इसलिए हरि भगवान् नाम से विख्यात हुये।

४ विचार करके देखने पर विदित होता है कि किस में यह सारा विश्व समाया हुआ है और इस विश्व भर में कौन प्रकाशमान है कौन-सी ऐसी स्वयंज्योति है जो सदा अव्यय हो कर कान्तिवान हो। कौन ऐसा आदमी है जिस में आकाश जैसा अविरल एवं विस्तृत आत्मतत्व है और अत्यधिक महिमा से परब्रह्म हो कर विराजमान है। उपर्युक्त सभी लक्षणों से कार्यान्वित हो कर कौन ऐसा आदमी है जिसने सदा आत्मा में कार्यकारण सम्बन्ध तथा भेद बुद्धि आदि से अधिक मायायुक्त बन कर विश्व को सत्य के रूप में सृजन किया।

नेव्वडातडु दनयंदु नेपुडु नात्म
कार्यकारण समर्थंबु गानि भेद
बुद्धिजनकंबु नादगु भूरिमाय
जेसि विश्वंबु सत्यंबु गा सृजिंचे

सीसपद्यमु : ५ अम्मायचेत नी यखिलंबु सृजियिंचि
पालिंचि पोलियिंचि परम पुरुषु
डनघात्म ! देश कालावस्थलंदुनु
नितरुलयंदुन हीनमैन
ज्ञानस्वभावंबु बूनि या प्रकृतितो
नेम्भंगि गलसे दा नेकमय्यु
गोरि समस्त शरीरंबुलंदुनु
जीव रूपमुन वसिंचि युन्न
जीवुनकु दुर्भरक्लेश सिद्धि येट्टि
गर्भमुन संभविंचेनु गडगिनादु
चित्त मज्ञान दुर्गम स्थिति गलंगि
यधिक खेदंबु नोंदेडु ननघचरिता !

सीसपद्यमु : ६ सकलजीवुलकेल्ल ब्रकट देहमु नात्म
नाथुंडु परुडु ना नाविघैक
म त्युपलक्षण महितुंडु नगु भग
वंतुंडु सृष्टिपूर्वंबुनंदु
नात्मीय माय लयंबु नोंदिन विश्व
गर्भुंडै तान येकटि वेलुंगु
परमात्मु डभवुं डुपद्रष्ट यय्यु व
स्त्वंतर परिशून्यु डगुट जेसि
द्रष्ट गाकुंडु मायाप्रधान शक्ति
नतुल चिच्छक्तिगलवाडु नगुचु दन्नु
लेनिवानिग जित्तंबु लोन् दलंचि
द्रष्ट यगु तन भुवन निर्माण वांछ

गीतपद्यमु : ७ बुद्धि दोचिन नम्महा पुरुषवरुडु
गार्य कारण रूपमै घनत केक्कि
भूरि मायाभिदान विस्फुरित शक्ति
विनुति केक्किन यट्टि यविद्ययंदु

५ हे राजा, जिस परम पुरुष ने उस माया से सारे विश्व का सृजन किया और जो इसका पालन पोषण कर रहा है वह देशकाल आदि सभी अवस्थाओं में प्रकृति के साथ एक हो गया पता नहीं चलता। अपनी इच्छा से समस्त शरीरों में आत्मा के रूप में प्रवेश करके रहता है और ऐसी स्थिति में आत्मा के लिए कर्म के कारण असह्य दुःख कैसे संभव होता है? इस पर विचार करके मेरे चित्त का अज्ञान विषम स्थिति को पा कर अत्यन्त दुख पाता है।

६ ईश्वर तो सृष्टि का कर्ता-हर्ता सब कुछ है वही समस्त प्राणियों का शरीर है आत्मा है। आत्मा के अधिपति होते हुए भी आत्मा से बड़ा है। अनेक प्रकार के लक्षणों से पूर्ण ईश्वर जो अनादि काल से स्थित है जो स्वयं सृष्टि है और सृष्टि कर्ता है जिससे माया उत्पन्न होती है और जिसमें लय हो जाती है और जो विश्व में व्याप्त हो कर ज्योतिर्माण है, जो परमात्मा है, जो विश्व का पर्यवेक्षक है उन सब गुणों से युक्त हो कर भी जो सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है और उनसे अतीत भी है, अपनी माया शक्ति से विश्व और माया से अपने को चित्त में परे मान कर सृष्टि के निर्माण कार्य में पर्यवेक्षक हो कर लग जाता है।

७ मनुष्य अपनी बुद्धि के अनुसार परमात्मा को पहचानता है और कार्य-कारण के कर्त्ता ईश्वर को जो विश्व की माया शक्ति का मूलाधार है उसकी माया में मनुष्य फँस जाता है। मनुष्य अपनी कमज़ोरी एवं माया शक्ति का विधाता हो कर जगत् पर अपना शासन चलाता है वह अपने अज्ञान के कारण उस को पहचान नहीं पाता। उसकी माया का आत्मा और परमात्मा के बीच अस्तित्व है। मनुष्य का अज्ञान ही भगवान् की माया है।

कंदपद्यमु :

८ पुरुषाकृति नात्मांश
स्फुरणमु गल शक्ति निलिपि पुरुषोत्तमु डी
श्वरु डभवुं डजुडु निजो
दरसंस्थित विश्व मपुडु दग बुट्टिंचेन्

सीसपद्यमु :

९ घृति बूनि काल चोदितमु नव्यक्तंबु
प्रकृतियु ननुपेळ्ळ बरगु माय
वलन महत्तत्व मेलमि बुट्टिंचे मा
यांश कालादि गुणात्मकंबु
नैन महत्तत्व मच्युत दृग्गोच
रमगुचु विश्व निर्माण वांछ
नंदुट जेसि रूपान्तरंबुन बोंदि
नट्टि महत्तत्व मंदु नोलि
गार्यकारण कर्त्रात्म कत्त्व मैन
महित भूतेंद्रियक मनो मयमनंग
दगु नहंकार तत्त्व मुत्पन्नमय्ये
गोरि सत्त्वरजस्तमो गुणक मगुचु

सीसपद्यमु :

१० चतुरात्म सत्त्वर जस्तमोगुणमुलु
वरुस जनिंचेनु वानिवलन
महदहांकार तन्मात्र नभो मरु
दनल जलावनि मुनिसुपर्व
भूत गणात्मक स्फुरण नीविश्वंबु
भिन्नरूपमुन नुत्पन्न मय्ये
देव यीगति भव दीय मायनु जेसि
रूढि जतुर्विधि रूपमैन
पुरमु नात्मांशमुन जेंदु पुरुषुडिंद्रि
यमुलचे विषय सुखमु लनुभविंचु
महिनि मधुमक्षिकाकृत मधुवु बोलि
यतनि बुरवर्ति यगु जीवु डंड्रमरियु

सीसपद्यमु :

११ जननुत सत्वर जस्तमो गुणमय
मैन प्राकृत कार्य मगु शरीर

८ अपने आत्मांश में पुरुषाकृति की स्फुरण शक्ति प्रदान कर पुरुषोत्तम ईश्वर ने अपने उदर में स्थित विश्व का सृजन किया, परन्तु ईश्वर अनादि है उसका पार नहीं पाया जा सकता। वेदान्त भी यहाँ रुक जाता है।

९ मनुष्य अपनी मोटी बुद्धि एवं स्थूल ग्रहण शक्ति के द्वारा जो ज्ञान ग्रहण करता है वही माया है। यह माया स्थूल, काल, अव्यक्त आदि नामों से व्यवहृत होती है। उस माया के द्वारा ईश्वर ने महत्तत्व का सृजन किया, परन्तु माया का अंश काल आदि गुणों से युक्त महानतत्व के न देख सकने के कारण विश्व की सृजनात्मक इच्छा के रूप में रूपान्तरित हुआ। उस महत्त्व में कार्य-कारण, कर्तृत्त्व से युक्त शक्ति, भूतेंद्रिय, मनोमय शरीर अहंकार आदि तत्त्व उत्पन्न हुए और उन में सत्त्व, रज और तमोगुणों का समावेश भी हुआ।

१० सर्वप्रथम सत्त्व, रज और तमो गुणों का जन्म हुआ। उन के साथ अहंकार से नभ, पृथ्वी जल, वायु एवं अग्नि का सृजन हुआ। तदनन्तर पञ्चभूतों से युक्त यह विश्व कुछ भिन्न रूप में उत्पन्न हुआ। हे भगवन्, इस प्रकार आपने अपनी माया को चतुर्विधि पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) को आत्मांश के रूप में बनाया। इन से युक्त पुरुष अपनी इन्द्रियों से विषय सुखों का अनुभव करता पृथ्वी में जीवन यापन करता है। परन्तु उनमें स्थित जीव मधु का रसास्वादन किये बिना निर्लिप्त रहता है।

११ हे राजा! मनुष्य प्रकृतिगत सत्व, रज और तम गुणों से युक्त हो कर भी प्रकृतिगत सुख, दुःख, मोह आदि में न फँस कर मनोविकासों से हीन हो त्रिगुणा-

गतुडय्यु बुरुषुंडु गडगि प्राकृतमुलु
नगु सुख दुःख मोहमुल वलन
गर मनुरक्तुंडु गाडु विकार वि
हीनुडु द्रिगुण रहितुडु नगुचु
बलसि निर्मल जल प्रतिबिम्बितुंडैन
दिनकरुभंगि वर्तिचुनट्टि
यात्म प्रकृति गुणंबुल यंदु दगुलु
वडि यहंकार मूढुडै तोडरि येनु
गडगि निखिलंबुनकु नेल्ल गर्तननि प्र
संग वशतनु ब्रकृति दोषमुल बोंदि

कंदपद्यमु : १२ सुरतिर्यङ्मनुज स्था
वर रूपमुलगुचु गर्भ वासनचेत
न्बरपैन मिश्र योनुल
दिरमुग जनियिंचि संसृतिं गैकोनि तान्

कंदपद्यमु : १३ पूनि च्चरिंपुचु विषय
ध्यानंबुन जेजि स्वाप्नि कार्थागम सं
धानमु रीति नसत्पथ
मानसुडगुचुन् भ्रमिंचु मतिलोलुंडै

चंपकमाला १४ पुरुषुडु निद्रवो गलल बोदु समस्त सुखंबु लात्म सं
हरण शिरो विखंडनमु लादिग जीवुनिकिं ब्रबोध मं
दरयग दोचुचुन्न गति नादिबरेशुडु बंधनाधुल
न्बोरयक तक्कुटेट्लनुचु बुद्धिनि संशय मंदेदेनियुन्

चंपकमाला : १५ ललित विलोल निर्मल जलप्रतिबिम्बित पूर्णचन्द्र मं
डलमु ददंबुचालनवि डंबन हेतुवु नोंदियु न्विय
त्तलमुन गंपमोंदनि विधंबुन सर्व शरीर धर्ममु
ल्गालिगि रमिंचु नीशुनकु गल्गग नेरवु कर्म बन्धमुल्

गद्य १६ कावुन जीवुनकु नविद्या महिमं जेसि कर्तबन्धनादिकंबु सं प्राप्त
ब्रगुन्गानि सर्वभूतांतर्यामि यैन ईश्वरुनकुन् ब्राप्तंबु गानेरदनि
वेंडियु ॥

तीत रह सकता है फिर भी प्रतिम्बिबित दिनकर की भांति आत्मा प्राकृतिक गुणों में फँसकर अहंकार युक्त हो प्रकृति-दोषों से कभी कभी अपने को विश्वका कर्ता बतलाती है।

१२ देवता, पशु, पक्षी, मनुष्य आदि अपने पूर्व जन्म के कर्म के परिणाम स्वरूप सदा कर्म के अनुसार भिन्न योनियों में पैदा होते रहते हैं।

१३ मनुष्य मतिभ्रम हो कर सदा विषय वासना का ध्यान करते हुए स्वप्न में धन प्राप्त करने के समान असत्य पथ पर चलता रहता है।

१४ मनुष्य सोते समय कभी कई प्रकार सुखों को देखता है, कभी आत्महत्या, शिरो-खंडन आदि अनेक प्रकार के दुःखों को देखता है। उस समय ऐसा मालूम होता है कि ये सब कार्य सचमुच हो रहे हैं। यद्यपि मनुष्य स्वप्न देखता है फिर भी उसे स्वप्न के पदार्थ यथार्थ लगते हैं वैसे ही अनादि ईश्वर जब इस संसार की रचना करते हैं तब स्वप्नात्मक जगत् और उस में व्याप्त ईश्वर को कर्मों से मुक्त समझना उचित नहीं है।

१५ निर्मल एवं चंचल जल में पूर्ण चन्द्रमा जब प्रतिबिम्बित होता है तो चंचल जल के कारण चन्द्रमा भी हिलता हुआ दिखाई देता है। परन्तु जिस तरह चन्द्रमा आकाश में अविचल है, वैसे ही सर्व शरीर धर्मों से युक्त हो कर भी प्रकृति में रमण करने वाला ईश्वर कर्म-बन्धन में नहीं पड़ता।

१६ इस लिए आत्मा के लिए अज्ञान के कारण कर्म-बन्धन आदि संप्राप्त होने पर भी सर्व व्यापी ईश्वर के लिए ये बन्धन नहीं हैं।

चंपकमाला : १७ विनुमु वितर्क वादमुलु विष्णुशुनि फुल्ल सरोज पत्र ने
त्रुनि घनमाय नेप्पुडु विरोधमु सेयु बरेशु नित्यशो
भनयुतु बंधनादिक विपद्दशलन् गृपणात्व मेप्पुडे
ननयमु बोंदलेवु विभु डाद्यु डनंतुडु नित्यु डौटचेन्

मत्तेभविक्रीडितम् : १८ भुवनश्रेणि नमोघलीलु डगुचुन् बुट्टिंचु रक्षिंचुनं
तविधंजेयु मुनुंग डंदु बहुभूतव्रात मंदात्म तं
त्रविहारस्थितुडै षडिंद्रिय समस्तप्रीतियुन् दब्बुलन्
दिविभंगिन् गोनु जिक्क डिंद्रियमुलन् द्रिप्पुन् निबंधिंचुचुन्

कंदपद्यमु : १९ तेर गोप्प नखिलविश्वमु
पुरुषोत्तमु देहमंदु बुट्टुं बेरुगुन
विरतिं बोंदुचु नुंडुं
गरमर्थिन् भूत भावि कालमुलंदुन

गीतपद्यमु : २० मेरय यंत्रमयंबैन मृगमु भंगि
दारु निर्मितमैनट्टि तरणि पोल्कि
शक्र ! येरुगुमु निलभूत जालमेल्ल
दलितपंकेरुहाक्षु तंत्रबुगाग

कंदपद्यमु : २१ धरणि जराचर भूतमु
लरयग जनियिंचि यंदे यडगिन पगिदिन्
हरिचे बुट्टिन विश्वमु
हरियंदे लयंबु नोंदु नदि येट्लन्नन्

कंदपद्यमु : २२ पेनुपगु वर्षाकालं
बुन दिननायकुनि वलन बोडमिन सलिलं
बनयमु ग्रम्मर ग्रीष्मं
बुन सूर्युनियंदु डिंदु पोलिके मरियुन

कंदपद्यमु : २३ भूतगणंबुल चेतने
भूतगणंबुलनु मेघ पुंजंबुल नि
र्धूतमुग जेयु ननिलुनि
भातिनि जरियिंप जेसि पौरुष मोप्पन्

१७ अनादि, अनन्त एवं नित्य होने के कारण ईश्वर सदैव कल्याण करता है और माया का विरोध करता है वह कर्मबन्धन, मायाजाल, विपत्ति आदि में न फँस कर सदा उन पर विजय प्राप्त करता है।

१८ सर्वशक्तिमान् ईश्वर इस संसार का सृजन, रक्षण एवं हनन करते हुए भी इसके बन्धनों में नहीं फँसते। वे पञ्चभूतों, पञ्चेद्रियों आदि में विहार और व्यवहार करते हुए भी उस में फँसे बिना प्रकाशमान हो कर अपनी इच्छानुसार उन सब को अपने बन्धन में रखते हैं।

१९ भूत एवं भविष्य काल में यह सारा विश्व भगवान् की माया से सृष्टि, एवं लय प्राप्त करता रहता है। यही इसका धर्म है।

२० हे इन्द्र, विश्व के समस्त प्राणी निर्जीव यंत्र-युक्त जानवर के समान तथा लकड़ी से निर्मित जहाज़ की भाँति विधाता के खिलौने हैं।

२१ विचार करके देखने से विदित होता है कि इस पृथ्वी के सभी प्राणी स्थावर और जगम पृथ्वी से पैदा होते हैं और इसी पृथ्वी में विलीन हो जाते हैं। इसी तरह ईश्वर द्वारा निर्मित यह सारा विश्व अन्त में उसी में लय हो जाता है।

२२ सूर्य के कारण ही वर्षाकाल में जल का वितरण होता है और ग्रीष्मकाल में वह सारा जल उन्हीं में चला जाता है जो सूर्य हम को जल देता है फिर वही उसे ग्रहण करता है।

२३ संसार में व्याप्त रहनेवाला वायु समय पड़ने पर मेघ समूह को नष्ट कर देता है। पौरुषवान व्यक्ति अपनी शक्ति का प्रदर्शन करता ही है।

गीतपद्यमु : २४ रूढि दत्तक्रियालब्ध रूपुडौनु
सुमहितस्फुर दमित तेजुडवु चंड
वेगुडवु नयि घनभुजा विपुल महिम
विश्वसंहार मर्थि गाविंतु वीश

मत्तेभविक्रीडितम् : २५ अनघा ! योक्कडवय्यु नात्मकृत मायाजात सत्वादि श
क्ति निकायस्थिति नी जगज्जनन वृद्धि क्षोभहेतु प्रभा
व निरूढिं दगु दूर्णनाभिगति विश्वस्तुत्य ! सर्वेश ! नी
घन लीला महिमार्णवंबु गडुवंगा वच्चुने येरिकिन्

सीसपद्यमु : २६ हरियंदु नाकाश माकाशमुन वायु
वनिलंबु वलन हुताशनुंडु
हव्यवाहनुनंदु नंबुवु लुदकंबु
वलन वसुंधर गलिंग; धात्रि
वलन बहुप्रजावलि युद्भवंबय्ये
निंतकु मूलमै येसगुनट्टि
नारायणुडु चिदानंदस्वरूपकुं
डव्ययु डजुडु ननंतु डाद्यु
डादिमाध्यंत शून्युं डनादि निधनु
डतनि वलननु संभूत मैनयट्टि
सृष्टिहेतुप्रकार मीद्दिंचि तेलिय
जालरेंतटि मुनुलैन जनवरेण्य !

गीतपद्यमु : २७ महिम दीपिंप गालकर्मस्वभाव
शक्ति संयुक्तुडगु परेश्वरुनि भूरि
योगमायाविजृंभणोद्योग मेव्व
डेरिगि नुतियिंपगानोपु निद्धचरित !

आटवेलदिगीतम् : २८ ईश्वरुंडु विष्णु डेव्वेल नेव्वनि
नेमि सेयु बुरुषु डेमि येरुगु
नतनि मायलकु महात्मुलु विद्वांसु
लडगियुंड्ड चुंदु रंधु लगुचु

कंदपद्यमु : २९ नीमाय देलियुवारले
तामरसासन सुरेन्द्र तापसुलैनन्

२४ उन उन क्रियाओं के निर्वाह में उचित अवतार धारण कर के अत्यन्त तेज, शीघ्रगामी, अनन्त शक्तिशाली ईश्वर अपनी महिमा के बल पर विश्व का संहार करता है।

२५ हे निष्पाप, आप ही संसार के समस्त प्राणियों के जन्मदाता हैं, जगत् की उत्पत्ति, वृद्धि और क्षय के कारण आप ही हैं। जिस तरह मकड़ी अपने में से ही अपनी जाल सृष्टि करती है और फिर जाले को निगल जाती है उसी प्रकार हे सर्वेश आप अपने में से ही जगत् की उत्पत्ति करते हैं और फिर उसे अपने में लीन कर लेते हैं।

२६ हे नृपवर, हरि से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। पृथ्वी से विविध प्राणियों का जन्म हुआ इन सब का आदि मूल चिदानन्द स्वरूप नारायण ही है। अव्यय, अज, (स्वयंभू) अनंत, आदि, मध्य और अन्त रहित, शून्य, जन्म और मृत्यु से परे, सृष्टि के आधार उस परमेश्वर का पार बड़े-बड़े मुनि भी नहीं पा सकते।

२७ हे राजन्, अनंत महिमान्वित एवं प्रदीप्त; काल, कर्म, स्वभाव और शक्ति से युक्त ईश्वर की अपार योग माया को पहचान कर कौन उसकी स्तुति करेगा?

२८ भगवान् विष्णु किस समय क्या करने वाले हैं, कौन जान सकता है? उसकी माया में फँस कर महात्मा और विद्वान् आदि भी अन्धे हो जाते हैं।

२९ हे भगवन्, आपकी माया को ब्रह्मा, इन्द्र और योगी लोग भी नहीं जानते। जो बुद्धिमान आपकी भक्ति का सुधारस पान करते हैं, वे ही आप की माया को पहचान सकते हैं।

धीमन्तुलु निजभक्ति सु
धामाधुर्यमुन ब्रोदलु धन्युलु दक्कन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ३० बलभिन्मुख्य दिशाधिनाथवरुलुन् फालाक्ष ब्रह्मादुलुन्
जलजाताक्ष पुरंदरादि सुरलुन् जर्चिंचि नीमायलन्
देलियन् लेरट नावशंब तेलियन् दीनार्ति निर्मूल यु
ज्ज्वल तेजोविभवातिसन्नुत गदाचक्रंबुजाद्यांकिता !

गीतपद्यमु : ३१ जगमु रक्षिंप जीवुल जंप मनुप
गर्त वै सर्वमयुडवै कानुपिंतु
वेच्चट नी माय देलियंग नेव्वडोपु
विश्वसन्नुत ! विश्वेश ! वेदरूप

सीसपद्यमु : ३२ अदिगान निजरूप मनरादु कलवंटि
दै बहुविधि दुःखमै विहीन
संज्ञानमै युन्न जगमु सत्सुखबोध
तनुडवै तुदिलोक तनरु दीवु
मायचे बुट्टुचु मनुचु लेकुंडुचु
नुन्न चंदंबुन नुंडुचुंदु
वोकडवात्मुडवित रोपाधि शून्युंड
वाद्युंड वमृतुंड वक्षरुंड
वव्ययुडवु स्वयंज्योति वात्म पूर्णु
डवु पुराण पुरुषुडवु नितांत
सौख्यनिधिवि नित्यसत्यमूर्तिवि निरं
जनुड वीवु तलप च्चनुने निन्नु ?

सीसपद्यमु : ३३ तलकोनि पंचभूत प्रवर्तकमैन
भूरि मायागुण स्फुरण जिक्कु
वडक लोकंबुलु भवदीय जठरंबु
लो निल्पि घन समालोल चटुल
सर्वकषोर्मि भीषण वार्धि नडुमनु
फणिराज भोग तल्पंबुनंदु
योगनिद्रारति नुंडग नोकक्कोंत
कालंबु च्चनग मेल्कनिन वेळ

३० हे शंख, चक्र, गदा, खड्ग-धारी विष्णु, आपकी माया को अष्ट दिक्पाल ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र आदि अनन्तकाल तक चर्चा करके भी नहीं जान सके ऐसी स्थिति में दोनों की रक्षा करने वाले हे परमात्मा मैं उसे कैसे जान सकता हूँ ?

३१ हे विश्वमान्य, हे वेदस्वरूप, हे विश्वेश, आप ही संसार के निर्माता, रक्षक, पालक और सहायक हैं। आप सर्वांतर्यामी हो कर सदा समस्त प्रदेशों में एक साथ दिखाई देते हैं। आपकी माया को जानने में कौन समर्थ है ?

३२ हे भगवन्, इस जगत का अपना कोई रूप नहीं है। यह स्वप्नतुल्य है। यह अनेक प्रकार के दुःखों से पूर्ण है, अज्ञान का सागर है. परन्तु आप आदि-अन्त रहित हैं। आप स्वयं ज्योतिमान, पुराण पुरुष, अमृतमय, नित्य, सत्यमूर्ति और निरंजन हैं। आपको पहचानना हमारे लिए कठिन है।

३३ हे भगवान, आप माया से अलिप्त हैं। आपने अपने मन में सृष्टि रचना का संकल्प किया, आप पञ्च भूतों के बन्धन में नहीं हैं। आप चौदहों लोकों को अपनी कुक्षि में लिए शेष नाग पर शयन करते हैं।

नलघु भवदीय नाभितोयजमु वलन
गडगि मुल्लोकमुल सोपकरणमुलुग
बुट्टजेसिति वतुलविभूति मेरसि
पुंडरीकाक्ष ! संतत भुवन रक्ष

सीसपद्यमु : ३४ पंकजोदर ! नीवपारकर्मुंडवु
भवदीय कर्माब्धि पार मरय
नेरिगेद ननि मदि निश्चयिंचिनवाडु
परिकिंपगा मतिभ्रष्टु गाक
विज्ञानिये चूड विंश्वंबु नी योग
मायापयोनिधि मग्नमौट
देलिसियु दम बुद्धि देलियनि मूढुल
नेमन नखिललोकेश्वरेश !
दासजनकोटि कति सौख्य दायकमुलु
वितत करुणा सुधा तरंगितमु लैन
नी कटाक्षेक्षणमुलच्चे नेरय मम्मु
जूचि सुखुलनु जेयवे सुभगचरित !

मत्तेभविक्रीडितम् : ३५ मदिनूहिंपग योगिवर्युलु भवन्माया लताबद्धुलै
यिदमित्थं बनलेरु तामस घृति न्नेपारु माबोटि दु
र्मदुलेरीति नेरुंग बोलुदुरु सम्यग्ध्यानधीयुक्ति नी
पदमुल् चेरेडि त्रोवजूपि भवकूपं बुद्धरिंपिंपवे ?

मत्तेभविक्रीडितम् : ३६ अरविंदोदर तावकीन घनमायामोहितस्वांतुलै
परमंबैन भवन्माहामहिममु न्वटिंचि कानंग नो
परु ब्रह्मादि शरीरु लज्ञुलयि योपद्माक्ष ! भक्तारि सं
हरणालोकन ! नन्नु गावदगु नित्यानंदसंधायिवै

मत्तेभविक्रीडितम् : ३७ अनघा वीरल नेन्न नेमटिकि दिर्यग्जंतुसंतान प
क्षि निशाटाटविकाघ जीवनिवह स्त्रीशूद्र हूणादुलै
ननु नारायणभक्तियोगमहितानंदात्मुलैरेनि वा
रनयंबुन् दरियिंतु रव्विभुनि माया वैभवांभोनिधिन्

चंपकमाला : ३८ इतरमु मानि तन्नु मदि नेंतयु नम्मि भजिंचुवारि ना
श्रितजनसेवितांघ्रि सरसीरुहुडैन सरोजनाभु डं

३४ भगवन्, आप अपार कर्मों के कर्ता हैं। आपके कर्मों का पार पाना असंभव है। जो आदमी पार करने का (अंत जानने का) निश्चय करता है ध्यान से देखने पर वह पागल मालूम होगा। बड़े-बड़े ज्ञानी भी आपकी माया का पार न पाकर डूब जाते हैं। ऐसी स्थिति में अज्ञानी एवं मूर्ख व्यक्ति की बात क्या कहें। आप सदा अपने असंख्यों सेवकों पर करुणरस एवं सुधारस पूर्ण कटाक्ष की वर्षा करके सुखी बनाइये।

३५ हे भगवन्, बड़े-बड़े योगी भी आपको न पहचान सकने के कारण माया जाल में फंसकर निस्तेज हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में हम जैसे तामस चित्त वाले दुष्ट आपको कैसे जान सकेंगे? हे ध्यानमूर्ति आप भवसागर को पार करने का मार्ग दिखाकर अपने चरणों में स्थान दीजिये।

३६ हे देव! आप से बनाये गये इस माया पूर्ण संसार के मोहादि बन्धनों में फंस कर आपकी पवित्र महिमा को ब्रह्मादि देवता भी अज्ञानी बन कर भूल जाते हैं। इसलिये हे भक्त वत्सल और आनन्ददाता मुझे इस भवसागर से पार लगाइये।

३७ हे मेदिनीपति! मनुष्य ही क्यों पशु, पक्षी, जंगली जानवर, कीट, स्त्री, शूद्र, हूण आदि नारायण की भक्ति एवं योग महिमा के कारण आनंदित हो उठें तो निश्चय ही इस माया से पूर्ण भवसागर को तर जाते हैं।

३८ जो व्यक्ति अन्य सभी बातों को भूल भगवान् पर श्रद्धा रखता है, और उनका भजन किया करता है। और जिस पर भगवान् दया दृष्टि करते हैं वह इस

चित दयतोड निष्कपट चित्तमुनन् गरुणिंचु नट्टि वा
रतुल दुरंतमै तनरु नव्विभुमाय दरिंतु रेप्पुड्डुन्

उत्पलमाला : ३९ इंचुक मायलेक मदि नेप्पुडु ब्रायनि भक्तितोड व
तिंचुचु नेव्वडेनि हरि दिव्यपदांबुज गंधराशि से
विंचु नतंडेरुगु नरविंदभवादुलकैन दुर्लभो
दंचितमैन या हरियुदारमहाद्भुत कर्ममार्गमुल्

गीतपद्यमु : ४० घोरसंसार सागरोत्तारणंबु
धीयुत ज्ञानयोग हृध्येयवस्तु
बगुचु जेलुवोंदु नीचरणांबुजात
युगळमुलु मामनंबुल दगुलनीवे

कंदपद्यमु : ४१ जनन स्थिति विलयंबुल
कनयंबुनु हेतुभूत मगु मायाली
लनु जेंदि नटन सलिपेडु
ननघात्मक ! नीकोनर्तु नभिवंदनमुल्

उत्पलमाला : ४२ एपरमेश्वरुन् जगमु लिन्निटि गप्पिन माय गप्पगा
नोपक पारतन्त्र्यमुन नुंडु महात्मक ! इट्टिनीकु नु
दीपितभद्रमूर्तिकि सुधीजनरक्षणवर्तिकिं दनू
तापमु वाय म्रोक्केद नुदारतपोधनचक्रवर्तिकिन्

चंपकमाला : ४३ हरि भवदीयमाय ननयंबुनुजेंदिन नेमु निच्चलुन्
गरमनुरक्तिनेदि तुदगा भवकर्मुलमै धरित्रिपै
दिरुगुदु मंतदाक भवदीयजनंबुलतोडि संगति
न्गुरुमति जन्मजन्ममुलकुन्समकूरग जेयु माधवा !

कंदपद्यमु : ४४ हरिदासुल मित्रत्वमु
मुररिपुकथ लेन्नि गोनुचु मोदमुतोडन्
भरिताश्रु पुलकितुंडै
पुरुषुडु हरि माय गेल्चु भूपवरेण्या !

कंदपद्यमु : ४५ वनजाक्षुमहिम नित्यमु
विनुतिंचुचु नोरुलु वोगड विनुचुन्मदिलो
ननुमोदिंचुचु नुंडेडु
जनमुलु दन्मायवशत जनरु नरेंद्रा !

पृथ्वी के माया जाल से छूट कर जाता है,

३६ जो आदमी कपट रहित हो कर सदा अनन्य भक्ति के साथ भगवान् के पवित्र चरण कमलों के सुगंधि की सेवा करता रहता है उसे हरि प्राप्त होता है, जो ब्रह्मादि के लिये भी दुर्लभ है ।

४० हे भगवान् इस घोर भव सागर से उद्धार करने के लिए आपके चरण कमलों को हमारे हृदय से स्पर्श करने दीजिये ।

४१ हे भगवन्, सृष्टि स्थिति एवं लय के कारण स्वरूप माया पुरुष हे महानुभाव मैं आपका अभिनन्दन करता हूँ ।

४२ जिस परमेश्वर की माया सभी लोगों में व्याप्त है उस माया से अतीत रहने वाले हे महात्मा, जनता की रक्षा करने वाली तुम्हारी मनोज्ञमूर्ति को नमस्कार करता हूँ । वह मेरे शरीर के तापों का हरण करें ।

४३ हे भगवन्, हम आपके माया जाल में जब तक रहेंगे तब तक अत्यधिक अनुरक्ति के साथ इन कर्मों का अनुसरण करते रहेंगे । हम जब तक इस पृथ्वी पर रहेंगे तब तक हमें आपके भक्त जनों की संगति और उनका मार्ग दर्शन जन्म जन्मान्तर तक प्राप्त हो यही आपसे हमारी प्रार्थना है ।

४४ हे राजा, जो व्यक्ति हरि के भक्तों की मित्रता करता है और जो विष्णु भगवान् की कथाओं को अत्यंत प्रेम के साथ सुनता है और जो आपकी महिमा सुनते सुनते पुलकित हो कर आनन्दाश्रु बहाता है वह पुरुष अवश्य माया पर विजय प्राप्त कर लेता है ।

४५ जो व्यक्ति नित्य भगवान् की महिमा गाता है । दूसरों से भगवान् की महिमा सुनता है और मनमें उसका प्रभाव अनुभव करता है ऐसे लोग तन्मयता प्राप्त कर मुक्ति के अधिकारी हो जाते हैं ।

मत्तेभविक्रीडितम् ४६ परुडै ईश्वरुडै महामहिमुडै प्रादुर्भवस्थान सं
हरणक्रीडनुडै त्रिशक्तियुतुडै यंतर्गतज्योतियै
परमेष्ठिप्रमुखामराधिपुलकुन् व्रापिंपराकुंड्डु दु
स्तरमार्गंबुन देजरिल्लुहरिकिं दत्वार्थिनै म्रोक्केदन्

उत्पलमाला : ४७ भूरिमदीय मोहतममुं बेडब्राप समर्थु लन्युले
व्वारलु नीवकाक निरवद्य निरंजन निर्विकार सं
सारलतालवित्र·बुधसत्तम सर्वशरण्य धर्मविं
स्तारक सर्वलोकशुभदायक नित्यविभूतिनायका !

२ कर्ममु

सीसपद्यमु : ४८ जनुलेल्ल नर्थवांछलजेसि यत्यंत
मूढुलै यैहिकंबुल मनंबु
लंदुल गोरुदु रल्पसौख्यमुलकु
नन्योन्य वैरंबुलंदि दुःख
मुलबोंदुदुरु गान नलयक गुरुडैन
वाड्डु मायामोहवशुड्डु नेंत
जड्डुड्डु नैनट्टि याजंतुवुनंदुनु
दयगल्गि मिक्किलि धर्मबुद्धि
गन्नुलुन्नवाड्डु गाननिवानिकि
देरुवुजूपिनट्लु देलिय बलिकि
यतुल मगुचु दिव्य मैन यामोत्तमा
गंबु जूपवलयु रमणतोड

सीसपद्यमु : ४९ पावकशिखलचे भांडबु दा दप्त
मगु दप्तघटमुचे नंदुनुन्न
जलमु दपिंचु नाजलमुचे दंड्डुलं
बुलु दप्तमोंदि यप्पुड्डु विशिष्ट
मैनयन्नंबगु नान्चदमुननु दा
देहेंद्रियंबुल देलिवितोड
नाश्रयिंचुकयुन्न यट्टिजीवुनकु ·दे
हंबुन ब्राणेंद्रियादिकमुन
जरुगुचुंड्डु निट्लु संसारघटवृत्ति
दुंड्डुनैन राज्ु दुष्टमैन

४६ उस ईश्वर की मैं वन्दना करता हूँ जो महामहिमान्वित, त्रिशक्तियुक्त हैं जो अनंत ज्योतिर्मान है; जो सृष्टि, स्थिति, लय के विधायक हैं जो संसार के कर्ता-धर्ता हैं; उनकी मैं बार-बार वन्दना करता हूँ।

४७ हे ईश्वर, संसार में मेरे अज्ञान रूपी अन्धकार को एवं मोहताप को दूर करने का सामर्थ्य रखने वाला आपके अतिरिक्त और कौन हैं? हे निरंजन, हे निर्विकार, हे धर्म विस्तारक सभी लोगों को शुभ पहुँचाने वाले हे परमात्मा, मैं आप ही के ऊपर निर्भर हूँ।

३ कर्म

४८ सभी लोग लालचवश अत्यंत मूर्ख हो कर सुख चाहते हैं और अल्प सुखों के लिए परस्पर ईर्ष्या-द्वेष वैर आदि कर के दुःख भोगते हैं। इसलिए जो गुरुतुल्य हैं और जो ज्ञानी हैं उनको चाहिए कि माया-मोह आदि के वश में न होकर जो मनुष्य पशुतुल्य जीवन बिता रहा है; उनके प्रति दया दिखाएँ। गुरु धर्मबुद्धि और ज्ञानी होता है। इसलिए जो कुमार्ग में जा रहा है उसको सहारा दे कर अनादि-अनन्त मोक्ष का पथ दिखाना चाहिए अर्थात् दुष्ट को मोक्ष की ओर अग्रसर करना और उसको कर्म से छुटकारा दिलाना गुरु का परम कर्त्तव्य है।

४९ अग्नि कणों से बर्तन तप्त हो जाता है। पात्र के तप्त होने से उसमें स्थित जल भी गर्म हो जाता है। जल के गर्म होने से चावल पकता है। इसके परिणाम स्वरूप दिव्य भोजन तैयार हो जाता है। इसी भांति देहेन्द्रियों पर अत्यन्त विश्वास के साथ जीव आश्रित है। देह में इन्द्रियों के द्वारा जीवन यापन चलता रहता है। इस प्रकार राजा शिष्ट वृत्तियों का पालन करते हुए दुष्ट कर्मों को त्यागता है और ईश्वर की उपासना में लगा रहता है तो संसार का हित होता है और राजा को मुक्ति भी मिलती है।

कर्ममुलकु बासि कंजाक्षुपदसेव
जेसेनेनि भवमु जेंदकुंडु

कंदपद्यमु : ५० हरि नरुलकेल्ल बूज्युडु
हरिलीलामनुजुडनु गुणातीतुंडै
परगिन भवकर्मंबुल
बोरंयंडट हरिकि गर्ममुलु लीललगुन्

कंदपद्यमु : ५१ विनु जीवुनि चित्तमु दा
घनभवबंधापवर्ग कारणमदिये
चिन द्रिगुणासक्तंबयि
ननु संसृतिबंधकारणंबगु मरियुन्

गीतपद्यमु : ५२ कोरि कर्मंबु नडपेडु वारिकेल्ल
गलितशुभमुलु नशुभ मुल्गलुगुचुंडु
नरयगा देहि गुणसंगि यैनयपुडे
पूनि कर्मंबु सेयक मानरादु

कंदपद्यमु : ५३ कर्ममुलु मेलु निच्चेडु
कर्मंबुलु कीडुनिच्चु कर्तलु दमकुन्
कर्ममुलु ब्रह्मकैननु
गर्मगुडै परुल दडवगा नेमिटिकिन्

कंदपद्यमु : ५४ पुरुषुडु निजप्रकाशत
बरगियु नलघुडु परुंडु भगवंतुंडुन्
गुरुडगु नय्यात्मनु दग
बरुवडि नेरुगंगलेक प्रकृतिगुणमुलन्

कंदपद्यमु : ५५ विनुमेपुडु दगुल नप्पुडु
नोनरंग गुणाभिमानियुनु गर्मवशु
डनदगु नापुरुषुडु दा
घनमगु त्रैगुण्यकर्मकलितुं डगुचुन्

सीसपद्यमु : ५६ धृतिनोप्पुचुन्न सात्विक कर्ममुननु ब्र
काशभूयिष्ठलोकमुलभूरि
राजस प्रकट कर्ममुन दुःखोदर्क
लोलक्रियायास लोकमुलनु

५० विष्णु भगवान् समस्त मनुष्यों के लिए पूज्य हैं और वे लीलामानुष हैं और गुणों से अतीत हैं। इस प्रकार वे सांसारिक कर्मों से दूर रहते हुए भी लीलामानुष होने के कारण वे सभी कर्म उनकी लीलाएँ हो जाती हैं। अर्थात् हरि अनेक प्रकार के अवतारों द्वारा अपनी लीलाएँ दिखाते हैं।

५१ सुनो, मनुष्य का चित्त नरक और मोक्ष का कारण है। वह मन त्रिगुणातीत होते हुए भी आवागमन (पुनर्जन्म) के चक्कर में पड़ा हुआ है।

५२ जो लोग अपनी इच्छा से कर्म करते हैं उन्हें शुभ और अशुभ प्राप्त होता है। विचार कर के देखने पर मालूम होता है कि जीव गुणयुक्त होने पर कर्म करता है और उसके बन्धन से नहीं छूटता।

५३ कर्मों से हित होता है और कभी-कभी हानि भी होती है। कर्म का फल कर्ता के ऊपर निर्भर है। इन कर्मों से केवल मनुष्य ही नहीं विधाता भी मुक्त नहीं हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य को डरने की आवश्यकता नहीं परन्तु इन से बचने एवं मुक्ति पाने का प्रयत्न करना चाहिए।

५४ जीव अपने प्राकृतिक गुणों से प्रकाश युक्त हो कर भी अनेक गुणों से युक्त परमात्मा को पहचान नहीं पा रहा है। अर्थात् परमात्मा अतीत हैं।

५५ किसी विषय पर मनुष्य का ध्यान जाने पर वह पुरुष अन्त में उस कर्म में आसक्त होता है और निर्गुण होते हुए भी गुणों के बन्धन में पड़ता है।

५६ मनुष्य अपने सात्विक कर्मों से प्रकाशमान लोक में प्रवेश करता है। राजस गुण के आश्रय से चिन्ता, दुःख आदि का अनुभव करता है। तामस गुण के कारण मोह की अधिकता से शोकाकुल हो जाता है। इन त्रिगुणों के आश्रय से मनुष्य क्रमशः पुरुष (सत्वगुण) स्त्री मूर्ति (राजस) और नपुंसक (तामस) मूर्ति बन जाता

गैकोनि तामस कर्मबुननु दम
श्शोक महोत्कट लोकमुलनु
बोंदुचु बुंस्त्रीनपुंसकमूर्तुल
देव तिर्यङ्मर्त्य भावमुलनु
गलुगु गर्मानुगुणमुलु गाग जागति
बुट्टि चच्चुचु ग्रम्मर बुट्टुनट्लु
दिविरि·कामाशयुंडैन देहियेप्पु
डुन्नतोन्नत पदवुल नोंदुचुंडु

सीसपद्यमु : ५७ तिविरि यप्पुरुषुंडु देहंबुननुजेसि
यनयंबु बेक्कु देहांतरमुल
नंगीकरिंचुचु नदि विसर्जिचुचु
सुख दुःख भय मोह शोकमुलनु
बुरुषुंडु दद्देहमुनने बोंदुचु नुंडु
नदि येट्टुलन्नन् नग्रभाग
तृणमूदि मरिपूर्वतृण परित्यागंबु
गाविंचु तृणजलूकयुनु ब्रोलि
जीवु डवनि गोंत जीविंचि म्रियमाणु
डगुचुनुंडु देहमार्थि जेंदि
कानि पूर्वमैन कायंबु विडुवडु
गान मनमे जन्मकारणंबु

चंपतरल : ५८ नरवरोत्तम ! यट्लुगान मनंबे जीवुलकेल्ल सं
सरण कारण मट्टि कर्मवशंबुनन् सकलेंद्रिया
चरणुडौट नविद्यगल्गुनु संततंबु नविद्यचे
बरगुट न्बहु देहकर्मनिबंधमु ल्गलुगुंजुमी

चंपकामला : ५९ गोनकोनि इट्टि दुःखमुलकुं ब्रतिकारमु मानवेंद्र ! क
ल्गिनविनु तत्प्रतिक्रिय नकिंचनवृत्ति जनुंडु मस्तकं
बुननिडु मोपु मूपुननु बूनिनन दद्भरदुःखमात्म बा
यनिगति जीवुंडु द्रिविधमै तगुदुःखमु बायडेन्नडुन्

कंदपद्यमु : ६० काम क्रोधादुलु दा
भूमीश्वर ! कर्मबंधमुलु मरियुनु जे
तो मूलमु लगुटनु दा
नी महिलो मनमु नम्म रेप्पुडु पेद्दल्

है। इन्हीं गुणों के आगमन से मनुष्य (सत्व), जन्तु (रजोगुण) और मनुष्य (तमोगुण) भाव ग्रहण करता है। इस प्रकार उपर्युक्त गुणों के आधार पर मनुष्य मरते और जन्म लेते हैं और कर्म के अनुसार योग्य पदवी प्राप्त करते हैं।

५७ जल्दबाजी से मनुष्य अपनी देह के लिए आपत्ति मोल लेता है और इस से पुनर्जन्म के चक्कर में पड़ता है। इस देह के कारण ही सुख, दुःख, भय, मोह, शोक आदि अनुभव करता है, जैसे तृण काटने पर फिर उगता है वैसे ही जीव जीवित रहने के बाद मृतावस्था में रह कर पुनः देह धारण करता है, वह अपने पूर्व का शरीर त्यागता नहीं, मन ही पुनर्जन्म का कारण है।

५८ हे नृपवर! जीवों के लिए मन ही आवागमन का कारण है। उस प्रकार के कर्म के कारण ही समस्त इन्द्रियों के आचरण से अज्ञान प्राप्त होता है। सदा अज्ञान में ही रहने से पुनर्जन्म होता रहता है।

५९ हे राजा! अतिशय दुःखों का प्रतिकार होने पर उन दुःखों को दूर कर के सुखी होने की कल्पना जीव को नहीं करनी चाहिए। बोझ को पीठ पर रख कर और भी दुर्भर एवं दुस्सह दुःख पाता है वैसे ही जीव त्रिविध दुःख को कभी दूर नहीं कर सकता है।

६० पृथ्वीपति, बड़े लोग मन पर कभी विश्वास नहीं करते क्योंकि वही काम क्रोध आदि का मूल स्थान है इन्हीं काम क्रोध आदि से कर्म बंधन जुड़ा हुआ है।

कंदपद्यमु : ६१ श्रोत्तिकोनुचु रानी जन
देत्तिनरोगमुल रिपुल निंद्रियमुल नु
त्पत्ति समयमुल जेरुपक
मेत्तनगारादु रादु मीदजयंबुन्

उत्पलमाला : ६२ कावुन गालकिंकरविकारमु गानकमुन्न मृत्युदु
र्भावन चित्तमुं जेड्डुगुपाड्डग जेयकमुन्न मेनिलो
जीवमु वेल्गुचुंडि तनचेल्वमु दप्पकमुन्नु मुन्नुगा
भावनचित्तुडे यत्नमु बायु तेरंगोनरिंपगा दगुन्

चंपकमाला : ६३ तपमुन ब्रह्मचर्यमुन दानमुलन् शमसद्दमंबुलन्
जपमुल सत्यशौचमुल सन्नियमादियमंबुलन् गृपा
निपुणुलु धर्मवर्तनुलु निक्कमु द्वृत्तनुवाक्यजंपु बा
पपुगुदि दृंतु रग्नि शतपर्ववनंबुल नेर्चुकैवडिन्

आटवेलदिगीतम् : ६४ जलघटादुलंदु जंद्रसूर्यादुलु
गानबडुचु गालि गदलुभंगि
नात्मकर्मनिर्मितांगंबुलनु बाणि
गदलुचुंडु रागकलितु डगुचु

सीसपद्यमु : ६५ भुवि विषयाकृष्ट भूतंबुलैन यिं
द्रियमुलचेतनु दिविरि मनमु
दगविषयासक्ति दगिलि यांतरमैन
महितविचार सामर्थ्यमेल्ल
शरकुशस्थंबक जालंबु हृदतोय
मुलु ग्रोलुगति यमंबुन हरिंचु
नीरीति नंतर्विचार सामर्थ्यबु
नपहृतंबैन पूर्वापरानु
मेयसंधानुरूप संस्मृति नशिंचु
नदि नाशिंचिन विज्ञान मंतदोलगु
नट्टिविज्ञान नाशंबु नार्यजनुलु
स्वात्म कदि सकलापहृनवंबटंड्रु

कंदपद्यमु : ६६ एंदाक नात्म देहमु
नोंदेडु नंदाककर्म योगमु लट्टपै

६१ काम, क्रोध आदि दुर्गुणों, शत्रुओं तथा रोगों को उसकी उत्पत्ति के समय पर ही दबाना चाहिए। यदि उस समय मनुष्य नरम पड़ जाता है तो वे मनुष्य को दबा देते हैं और अन्त में उसीका नाश करते हैं। इसलिए इनके प्रति अत्यंत जागरूक रहना चाहिए। इन्हें ऊपर उठने नहीं देना चाहिए। जो मनुष्य जड़ से इनका नाश नहीं करता वह फिर कभी इन पर विजय प्राप्त नहीं कर सकेगा।

६२ मनुष्य को चाहिए कि जब तक यम का बुलावा न आवे, मृत्यु का भय मन को विचलित न करे और प्राणों की कान्ति धुंधली न हो अपने मन से पाप को दूर करने का प्रयत्न करे।

६३ जैसे अग्नि सैकड़ों वनों को जला देती है, वैसे ही धर्मात्मा दयालु व्यक्ति तप, ब्रह्मचर्य, जप, दान, सत्य आदि से पापों का नाश करता है।

६४ जैसे कुंभ-जल में सूर्य और चन्द्र हवा के चलने पर अस्पष्ट और धुंधले दिखाई देते हैं वैसे ही पवित्र आत्मा में गुणों का प्रतिबिम्ब पड़ता है।

६५ इस भवसागर में मनुष्य का मन इन्द्रियों के वशवर्ती हो कर कष्ट भोगता है। फिर विषय वासनाओं में फँस कर विवेक खो बैठता है। शील के नष्ट होने पर वह अज्ञानी एवं अन्धा हो जाता है। क्रमशः हृदय के पवित्र गुणों का लोप हो जाता है। अज्ञान रूपी अन्धकार में फँस कर आत्मा छटपटाती है अन्त में आत्मा का विनाश हो जाता है।

६६ जब तक आत्मा और देह का अस्तित्व है तब तक कर्म और योग का

जेंदवु माया योगं
स्पंदितुलै रित्त जालि बड नैमिटिकिन्

आटवेलदिगीतम् : ६७ अरय गर्मरूप मगु नविद्याजन्म
मैन हृदयबंधनादिलतल
नप्रमत्तयोग मनु महासुरियचे
द्रेंपवलयुनंत देंपुतोड

आटवेलदिगीतम् : ६८ ओनर निट्लु योग युक्तुंडु गुरुडैन
भूपुडैन शिष्य पुत्रवरुल
योगमतुल जेय नोप्पुगावलयुनु
गर्मपरुल जेय गादु कादु

कंदपद्यमु : ६९ कर्ममु कर्ममुचेतनु
निर्मूलमु गादु तेलियनेरक ताने
कर्ममुजेसिन दत्प्रति
कर्मे बोनरिंपवलयु कलुष विदूरा

सीसपद्यमु : ७० संसारमिदि बुद्धि साध्यमु गुणकर्म
गणबद्ध मज्ञान करणंबु
कलवंटि दिंतिय कानि निक्कमु गादु
सर्वार्थमुलु मनस्संभवमुलु
स्वप्नजागरमुलु सममुलु गुणशून्यु
डगु परमुनिकि गुणाश्रयमुन
भवविनाशंबुलु पाटिल्लिनट्लुंडु
पट्टिचूजिनलेवु बालुलार
कडगि त्रिगुणात्मकुलैन कर्ममुलकु
जनकमैवच्चु नज्ञान समुदयमनु
घनतरज्ञान वह्निचे गल्चिपुच्चि
कर्मविरहितुलै हरि गनुट मेलु

कंदपद्यमु : ७१ पालिंपुमु शेमुषि नु
न्मूलिंपुमु कर्मबन्धमुल समदृष्टिं
जालिंपुमु संसारमु
गीलिंपुमु हृदयमंदु गेशवभक्तिन्

महत्व है। उसके बाद माया और योग से स्पन्दित होकर केवल सहानुभूति दिखाने से क्या लाभ है।

६७ कर्म रूपी अज्ञान का बन्धन हृदय को बद्ध रखता है, उन्हें योग आदि से नष्ट करना चाहिए।

६८ योगी और ज्ञानी को चाहे वह गुरु हो या राजा उन्हें चाहिए कि वे शिष्य एवं पुत्रों को अवश्य ज्ञानी बनाने का प्रयत्न करें।

६९ हे राजा, कर्म का निर्मूलन कर्म से कभी नहीं होता।

७० हे बालक, यह संसार बुद्धि साध्य है। कर्म और अज्ञान का कारण है। स्वप्न समान है। स्थायी नहीं है। सभी प्रकार के अभिप्राय मन से पैदा हुए हैं। इन सब का कारण मन ही है। गुणरहित मुनि के लिए कर्म स्वप्न और जागरण के समान है। गुणों के आश्रय में जाने से ऐसा मालूम होता है कि सभी प्रकार के कष्ट हम पर आ पड़े हैं। परन्तु ध्यान से देखने पर उसमें कोई कष्ट नहीं है। इसलिए त्रिगुणात्मक कर्मों का मूल अज्ञान है। उसे दीप्तिमान ज्ञानाग्नि से भस्म करके कर्म विरत होकर हरि को पहचानना अत्यन्त श्रेयस्कर है।

७१ बुद्धि पर शासन करो। कर्म बन्धनों को समदृष्टि के साथ नाश करो। संसार सुखों को त्याग दो और हृदय में केशव का ध्यान करो।

मत्तेभविक्रीडितम् : ७२ अरुदौ नभ्रतमःप्रभल्मुनु नभं बंदोप्पगा दोच्चियुन्
मरलन्जूडगनंदे लेनिगति ब्रह्मंबदु नीशक्तुलुन्
बरिकिंपन् द्रिगुणप्रवाहमु न नुत्पन्नंबुलै कम्मरन्
विरतिन् बोंदुचुनुंड्डु गावुन हरिन्विष्णु न्भजिंपंदगुन्

चंपकमाल : ७३ विनु मदिगान भूवर यविद्य लयिंचुटकै रमापति
न्घनजननस्थितिप्रलय कारणभूतुनि बद्मपत्रलो
चनु बरमेशु नीश्वरुनि सर्वजगंबु ददात्मकंबुगा
गनुगोनुचुन् ददीयपदकंजमु लर्थि भजिंपु मेप्पुड्डुन्

चंपकमाला : ७४ घनपुरुषर्थभूत मनगा गादगुनात्मकु नेनिमित्तमै
योनर ननर्थहेतुवन नूलकोनु संसृति संभविंचि न
ट्लनयमुदन्निमित्त परिहारक मर्थि जगद्गुरुंड्डु ना
दनरिन वासुदेवपद तामरसस्फुटभक्ति यारयन्

सीसपद्यमु : ७५ वसुमतीनाथ ! येव्वनि पादपद्म प
लाश विलास सल्ललितभक्ति
सस्मरणंबुचे सज्जनप्रकरंबु
घनकर्म संचय ग्रधितमगु न
हंकारमनु हृदयग्रंधि जेररु
विवरिंप निट्लु निर्विषयमतुलु
महि निरुद्धेंद्रियमार्गुलु नैनट्टि
यतुलकु जेरंग नलविगानि
यट्टि परमेशु गेशवु नादिपुरुषु
वासुदेवुनि भुवनपावनचरित्रु
नर्थि शरणंबुगा दत्पदांबुजमुलु
भक्तिसेविंपु गुणसांद्र ! पार्थिवेंद्र !

मत्तेभविक्रीडितम् : ७६ अनघा ! माधव ! नीवु मावलेने कर्मारंभिवै युंडियुन्
विनु तत्कर्मफलंबु बोंद वितरु ल्विश्वंबुन न्भूतिकै
यनयंबु न्भजियिंचु निंदर गरंबर्थिन्निनुंजेर गै
कोन वेमंदुमु नीचरित्रमुनकु न्गोविंद ! पद्मोदरा !

मत्तेभविक्रीडितम् : ७७ तमलोबुट्टुनविद्य गप्पिकोनगा न्दन्मूलसंसार वि
भ्रमुलै कोंदरु देलुचुन् गलचुचुन् ब्रल्वेंटलेंदैन यो

७२ जैसे गगन मण्डल में अन्धकार और प्रकाश दिखाई देता है और कुछ समय के बाद अन्धकार या प्रकाश का लोप हुआ करता है वैसे ही ईश्वर में मनुष्य की शक्तियाँ त्रिगुण प्रवाह में उत्पन्न हो कर फिर उसी में विलीन होती रहती हैं। इस लिए मनुष्य को सदा विष्णु का भजन करना चाहिए।

७३ हे नृपवर! सुनो, अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करने के लिए सृष्टि स्थिति और लय के कारण कमलनेत्र भगवान् की सृष्टि को उन्हीं के रूप में पहचानते हुए उनके पदकमल का भजन करना चाहिए।

७४ जब मनुष्य का मन सांसारिक बन्धनों में फँस जाता है, जब मनुष्य विवेक खो बैठता है, माया जाल में फँसी आत्मा विकल हो कर बाहर निकलने को छटपटाती है; जब वह विनाश के गढ़े में गिर जाती है तब एकमात्र आधार भगवान् विष्णु की भक्ति ही हो सकती है।

७५ हे राजेन्द्र, जिसके पदकमलों की भक्ति एवं स्मरण तथा सज्जनों की संगति से बड़े से बड़े कर्मों का भी अन्त हो जाता है। जो ईश्वर योगी यति और महापुरुषों के लिए भी अप्राप्त है ऐसे श्री वासुदेव भुवन-पालक के चरण-कमलों की विनय के साथ भक्ति करनी चाहिए।

७६ हे माधव, आप हमारी तरह कर्म करते हैं फिर भी उस कर्म फल से अतीत हैं। जो मनुष्य सदा आपका भजन किया करता है, उसको आप अपने आश्रय में क्यों नहीं लेते? हे गोविन्द, आप अपने भक्तों पर कृपा दृष्टि रखिये।

७७ हे ईश्वर, अपने आप में पैदा होने वाले अज्ञान रूपी अन्धकार से आवृत हो संसार के माया जाल में निमग्न चित्त गोता खाता रहता है। जो व्यक्ति

गमुनंदे परमेशुगोल्चि घनुलै कैवल्य संप्राप्तुलै
प्रमदंबंदेद रट्टिनीवु गरुणन् बालिंपु मम्मीश्वरा !

शार्दूल विक्रीडितम् : ७८ एवेलं गृपजूचु नेन्नडु हरिन्वीच्चिंतु नंचाद्र्युडै
नीवेंटंबडि तोंटिकर्मचयमु न्निर्मूलमुं जेयुचु
न्नीवाडै तनुवाङ्मनोगतुल निन्सेविंचु विन्नाणि वो
कैवल्याधिप ! लच्मिनुद्दवडिदा गैकोन्नवाडीश्वरा !

चंपकमाला : ७९ भरितनिदाघतप्तुडगु पांथुड्डु शीतलवारि ग्रुंकि दु
ष्करमगु तापमुं दोरगुक्रैवडि संसरणोग्रतापमु
न्वेखुन बायुचुंड्डुदुरु निन्नुभजिंचु महात्मकुल्जरा
मरणमनोगुणंबुल ग्रमंबुन बायुट सेप्प नेटिकिन्

कंदपद्यमु : ८० मंगळ हरिकीर्ति मद्दा
गंगामृत मिंचुकैन गर्णांजलुल
न्संगतमु सेसि त्राव दो
लंगुनु कर्मंबु लाविलंबगुचु नृपा !

कंदपद्यमु : ८१ लीलं बाकृत पूरुष
कालादिकनिखिलमगु जगंबुलकेल्लन्
मालिन्य निवारकमगु
नीललितकळा सुधाब्धिनिं गृंकि तगन्

चंपकमाला : ८२ हरिभवदुःखभीषण दवानलदग्धतृषार्तमन्मनो
द्विरदमु शोभितंबुनु बवित्रमुनैन भवत्कथा सुधा
सरिदवगाहनंबुननु संसृतितापमु बासि क्रम्मरन्
दिरुगदु ब्रह्ममुं गनिन धीरुनिभंगि बयोरुहोदरा !

योग-साधना में ईश्वर की उपासना करके कैवल्य प्राप्त करता है वह आपकी कृपा से ही आनन्द भोगता है।

७८ हे भगवन्, जो जीव आपकी दया का भिक्षुक है, आपके दर्शन के लिए जिसमें उत्कट लालसा है, आपकी भक्ति से जो पूर्व कर्मों के बन्धन से मुक्त हो चुका है वह तुम्हारा ही हो जाता है। वह सदैव मनसा, वाचा, कर्मणा तुम्हारी ही उपासना करता है।

७६ हे भगवन्, असह्य गर्मी से तप्त होकर जो पथिक शीतल जल का पान करके अपने दुस्सह ताप को मिटाता है, उसी तरह संसार ताप से आपका भजन मुक्ति दिलाता है। ऐसे महात्मा धीरे-धीरे जरा-मरण और मन के गुणों से मुक्त हो जाते हैं।

८० हे राजा, मंगलमय हरि के कीर्तन से कानों को अमृत-पान का अवसर मिलता है। ईश्वर कीर्तन से कर्मों का नाश हो जाता है।

८१ हे ईश्वर आप लीला-पति और प्रकृति-पुरुष हैं। जगत की मलिनता को दूर करने के लिए आपके कीर्तन में अवगाहन करना ही पड़ेगा।

८२ हे ईश्वर, संसार-ताप से दग्ध, तृष्णा-लालसा से ग्रसित व्यक्ति आपकी कथाओं में अवगाहन कर ताप-मुक्त हो जाता है। व्यक्ति आपको पहचान कर आप ही में लीन हो जाता है।

मनुचरित्रमु

प्रवर विजयमु

मत्तेभविक्रीडितम् : १ वरणाद्वीपवती तटांचलमुनन् वप्रस्थइली चुंबितां
बरमै सौधसुधाप्रभाधवाळितप्रालेयरुग्मंडली
हरियंबै यरुणास्पदंबनग नार्यावर्तदेशंबुनन्
बुरमोप्पुन् महिकंठहारतरलस्फूर्तिन् वडंबिंचुचुन्

सीसपद्यमु : २ अचटिविप्रुलु मेच्च रखिलविद्याप्रौढि
मुदिमदि तप्पिन मोदटिवेल्पु
नचटि राजुलु बंटुनंपि भार्गवुनैन
बिं(?)न बिलिचिंतु रंकमुनकु
नचटि मेटिकिराटु ललकाधिपतिनैन
मुनुसंचि मोदलिचि मनुपदच्चु
लचटि नालवजाति हलमुखात्तविभूति
नादिभिच्चुवु भैच्च मैन मान्चु
नचटिवेलयांड्रु रंभादुलैन नोरय
गासे कोंगुन वारिंचि कडप गलरु
नाट्यरेखा कलाधुरंधर निरूढि
नचट बुट्टिन चिगुरुगोम्मैन जेव

उत्पलमाला : ३ आपुरि बायकुंडु मकरांक शशांक मनोज्ञमूर्ति भा
षापरशेषभोगि विविधाध्वरनिर्मलधर्मकर्मदी
क्षापरतंत्रु डंबुरुहगर्भकुलाभरणं बनारता
ध्यापनतत्परुंडु प्रवराख्यु डलेख्यतनूविलासुडै

गीतपद्यमु : ४ वानिचक्कदनमु वैराग्यमुन जेसि
कांक्षसेयु जारकामिनिलकु
भोगबाह्य मय्ये बूचिन संपंग
पोलुपु मधुकरांगनलकु बोले

उत्पलमाला : ५ यौवनमंदु यज्वयु धनाढ्युडुनै कमनीयकौतुक
श्रीविधि गूकटुल्गोल्चि चेसिन क्रूरिमि सोमिदम्म सौ
ख्यावहयै भजिंप सुखुलै तलिदंड्रुलुगूडि देवियुन्
देवरवोलेनुंडि यिलु दीर्पग गापुर मोप्पु वनिकिन्

मनुचरित्र

प्रवर-विजय

१ आर्यावर्त में वरुणा नदी के किनारे अरुणास्पद नगर था। उस नगर की ऊँची ऊँची परिधियाँ तथा आँखों में चकाचौंध करनेवाले चूने से सफेद ऊँचे ऊँचे भवन चन्द्रमा का स्पर्श करके वहाँ के मृगों को सुशोभित करते हुए ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे वह नगर पृथ्वी माता के कण्ठ को अलंकृत करनेवाला मोतियों का हार है।

२ अरुणास्पद नगर के ब्राह्मण समस्त विद्याओं में पारंगत हैं। वहाँ का राजा अत्यधिक पराक्रमशाली है, वहाँ के वैश्य तो कुबेर से भी अधिक धनी हैं। वहाँ के किसान बड़े दानी तथा सम्पदा से पूर्ण हैं। वहाँ की वेश्याएँ नृत्य-कला में रँभा आदि अप्सराओं को भी मात करती हैं। हम उस नगर का वर्णन कहां तक करें, वहां की सभी वस्तुएँ अद्वितीय हैं।

३ कामदेव और चन्द्रमा की मनोज्ञ मूर्ति के समान उस नगर में प्रवर नामक एक ब्राह्मण निवास करता था! प्रवर का भाषा पर एकाधिकार था। विविध यज्ञों से वह पवित्र हो चुका था। और धर्म-कर्म में दीक्षित था। वह अपने वंश के लिए अलङ्कार स्वरूप था। अध्ययन अध्यापन में सदैव तत्पर रहता था। उसके सौन्दर्य का वर्णन करना वाणी के लिए असंभव है।

४ प्रवर धर्म-परायण और अधर्म से विरक्त थे, अतः उनके सौन्दर्य का भोग करने के लिए जो वेश्याएँ लालायित थीं, उनकी आकांक्षाएँ पूर्ण नहीं हुईं। जैसे खिले हुए फूल भ्रमरों के लिए अनुपयोगी होते हैं वैसे ही प्रवर का सौन्दर्य स्त्रियों के लिए उपभोग्य नहीं था।

५ वह प्रवर धनी था। उसने अपनी अल्पायु में ही यज्ञादि पुण्य कार्य किये थे। पार्वती और शिव की तरह माता-पिता गृहकृत्यों का निर्वाह करते थे। प्रवर अपनी सहधर्मिणी के साथ सुखपूर्वक समय बिताता था।

सीसपद्यमु : ६ वरणातरंगिणी दरविकस्वरनूत्न
कमलकषाय गंधमु वहिंचि
प्रत्यूष पवनांकुरमुलु पैकोनुवेळ
वामनस्तुति परत्वमुन लेचि
सच्छात्रुडगुचु निच्चलु नेगि यय्येट
नघमर्षणस्नान माचरिंचि
सांध्यकृत्यमु दीर्चि सावित्रि जपियिंचि
सैकतस्थलि गर्म साक्षि केरगि
फलसमित्कुश कुसुमादिबहुपदार्थ
ततियु नुदिकिन मडुगुदोवतुलु गोंचु
ब्रह्मचारुलु वेंटरा ब्राह्मणुंडु
वच्चुनिंटिकि व्रज तन्नु मेच्चिचूड

उत्पलमाला : ७ शीलंबु गुलमुन् शमंबु दममुं जेटवंबु लेब्रायमुं
बोलं जूचि यितंडु पात्रुडनि येभूपालु रीवच्चिनन्
सालग्रावमु मुन्नुगा गोनडु; मान्यक्षेत्रमुल् पेक्कु चं
दालंबंडु; नोकप्पुडुं दरुग दिंटं बाडियुं बंटयुन्

गीतपद्यमु : ८ वंडनलयदु वेवुरु वच्चिरेनि,
नन्नपूर्णकु नुद्दियौ नतनिगृहिणि
नतिथु लेतेर नडिकिरेयैन वेट्टु
वलयुभोज्यंबु लिंट नव्वारि गाग

सीसपद्यमु : ९ तीर्थसंवासु लेतेंचिनारनि विन्न,
नेदुरुगा नेगु दव्वेंतयैन
नेगि तत्पद्मुल केरगि यिंटिकि देच्चु,
देच्चि सद्भक्ति नातिथ्य मिच्चु
निच्चि मृष्टान्नसंतृप्तुलगा जेयु,
जेसि कूर्चुन्नचो जेरवच्चु
वच्चि यिद्धरगल्गु वनधि पर्वत सारि
त्तीर्थ माहत्म्यमुल्देलिय नडुगु
नडिगि योजनपरिमाण मरयु नरसि
पोवलयु जूडननुचु नूर्पुलनिगुड्चु
ननुदिनमु तीर्थसंदर्शनाभिलाष
मात्मनुंप्पोंग नत्तरुणाग्निहोत्रि

६ प्रातःकाल चारों तरफ कमलों की सुगन्धि लेकर मलय पवन बह रहा था। उसका स्पर्श पाकर प्रवर जाग उठे और अपने शिष्यों को साथ लेकर वरुणा नदी में स्नान करने के बाद सन्ध्या और गायत्री मन्त्र का जाप किया। तदनन्तर सूर्य को नमस्कार किया। उनके शिष्यों ने फल फूल, लकड़ी तथा धोये हुए कपड़े लेकर गुरु का अनुसरण किया। प्रातर्विधि से निवृत्त हो प्रवर अपने ब्रह्मचारी शिष्यों को साथ लेकर लौटे।

७ प्रवर का शील, सदाचार, वंश, इन्द्रिय-निग्रह, तथा दूसरों को मुग्ध करने-वाले मुखमण्डल को देख उसे दान का उपयुक्त पात्र समझ कर राजा-महाराजा अनेक प्रकार के दान देने के लिये आते हैं उनके पास जो भूमि थी उससे जो कुछ प्राप्त होता वही उनके परिवार के लिए पर्याप्त हो जाता था, अतः उन्हें किसी प्रकार का अभाव नहीं था।

८ उनकी पत्नी भी पतिव्रता और साध्वी थी। वह अन्नपूर्णा की तरह घर आनेवाले अतिथियों और आगन्तुकों को चाहे वे दिन में आएँ या आधी रात में, भोजन खिला कर संतृप्त करती थी।

९ उनके घर तीर्थ-यात्रा करने वाले आते हैं तो वे उनका हृदय पूर्वक स्वागत करते हैं। भक्ति के साथ उनका अतिथि-सत्कार करते हैं। मिष्टान्न से उन्हें संतृप्त कर उनसे इस पृथ्वी के समुद्र, नदी, पहाड़ तथा पुण्यतीर्थों का ज्ञान प्राप्त करते हैं और अपने घर से उन तीर्थों की दूरी का पता लगा कर उन्हें देखने का सौभाग्य प्राप्त न होने के कारण दुःख प्रकट करते हैं।

इस प्रकार अतिथि आगन्तुकों के सत्कार में अपना अमूल्य जीवन बिता कर वह ब्राह्मण पुत्र प्रवर अपना जीवन यापन करता था। एक दिन तीसरे पहर में—

सीसपद्यमु : १० मुडिचिन यॆांटि कॆंजडमूय मुव्वन्ने
मेगमु तोलु किरीटमुग धरिंचि
ककपाल केदार कटकमुद्रितपाणि
गुरुचलातमुतोड गूर्चिपट्टि
यैणेयमैन योड्डाणंबुलवरिणंचे
नक्कलिंचिन पोट्ट मक्कलिंच्चि
यारकूटच्छाय नवधळिंपग जालु
बडुगु देहंबुन भस्ममलदि
मिट्टयुरमुन निडुयोग पट्टे मेरय
जेवुल रुद्राक्षपोगुलु चवुकळिंप
गाविकुबुसंबु जलकुंडिकयुनु बूनि
चेरे दद्‌गह मौपघसिद्धु डोकडु

गीतपद्यमु : ११ इट्लु चनुदेंचु परमयोगींद्र गांचि,
भक्तिसंयुक्ति नदुरेगि प्रणतु डगुचु
नर्घ्यपाद्यादि पूजनं बाचरिंचि
यिष्टमृष्टान्न कलन संतुष्टि जेसि

कंदपद्यमु : १२ एंदुंडि येंदु बोवुचु
निंदुल केतेंचिनार लिप्पुडु विद्व
द्वंदित ! नेडु गदा म
न्मंदिरमु पवित्रमय्ये मान्युडनैतिन्

कंदपद्यमु : १३ मीमाटलु मत्रंबुलु
मीमेट्टिन येड प्रयाग मीपादपवि
त्रामल तोयमु ललघु
व्योमार्ग झरांबु पौनरुक्तयमु लुर्विन्

उत्पलमाला : १४ वानिदि भाग्यवैभवमु वानिदि पुण्यविशेष मेम्मयिन्
वानि दवंध्यजीवनमु वानिदि जन्ममु वेरुसेय के
व्वानिगृहांतरंबुन भवादृशयोगिजनंबु पावन
स्नानविधान्नपानमुल संतस मंदुचु बोवु निच्चलुन्

गीतपद्यमु : १५ मौनिनाथ ! कुटुंब जंबालपटल
मग्न मादृश गृहमेधि मंडलंबु

१० एक रुद्राक्ष माला धारण किये, गेरुए वस्त्र पहने और जल से भरा कमण्डलु हाथ में लिये हुए एक यति प्रवर के घर आये। यति व्याघ्र-चर्म की टोपी सिर पर ओढ़े हुए थे। यतियों की विशेष झोली पहने थे, दण्ड हाथ में था। मृग-चर्म का कटि-बन्ध बाँधे हुए थे। योगाभ्यास के समय धारण की जानेवाली यज्ञोपवीत जैसी रेशमी सूत्रों की ग्रन्थिका उनके गले में पड़ी थी।

११ घर आये हुए योगीन्द्र का प्रवर ने आगे बढ़ परम भक्ति एवं श्रद्धा के साथ स्वगत किया और अर्घ्य-पाद्य आदि से अर्चना करके मधुर पदार्थों से उन्हें सन्तुष्ट किया।

१२ (प्रवर ने पूछा) हे मुनिवर, आप का निवास स्थान कहां है? आप किधर जा रहे हैं? कहां से आये हैं? आपके शुभागमन से मेरा घर पवित्र हो गया। सौभाग्य से ही आपके दर्शन कर सका हूँ। मैं धन्य हो गया।

१३ आपके उपदेश मन्त्रों के समान हैं। आपका पद जिस जिस स्थल पर पड़ता है वह तीर्थ राज प्रयाग के समान हो जाता है। आपका चरणोदक आकाश गंगा के जल के समान है।

१४ हे यतिवर, आपके जैसे महानुभाव जिनके घर में स्नान पान आदि से तृप्त हों, वे गृहस्थ भाग्यवान् तथा पुण्यवान हैं, उन लोगों का जन्म धन्य हो जाएगा। उनकी हम कहां तक प्रशंसा करें।

१५ हे योगीन्द्र, कीचड़ में फँसे हुए पैर को निकालना जैसे कठिन कार्य है

नुद्धरिंपग नौषध मोंडु गलदे
युष्मदंघ्रि रजोलेश मोकटि दक्क

कंदपद्यमु : १६ ना विनि मुनि यिट्लनु व
त्सा ! विनु मावंटितैर्थिकावळि केल्लन्
मीवंटि गृहस्थुल सुख
जीवनमुन गादे तीर्थसेवयु दलपन्

सीसपद्यमु : १७ केलकुलनुन्न तंगटि जुन्नु गृहमेधि,
यजमानु डंकस्थितार्थ पेटि
पंडिन पेरटि कल्पकमु वास्तव्युंडु,
दोड्डिबेट्टिन वेल्पुगिड्डि कापु
कडलेनि यमृतंपु नडबावि संसारि,
सविधमेरुनगंबु भवनभर्त
मरुदेशपथमध्यमप्रपकुलपति
याकटि कोदवु सस्यमु कुटुंबि
बधिर पंग्वंध भिक्षुक ब्रह्मचारि
जटि परिव्राजकातिथि क्षपण काव
धूत कापालिकाद्यनाथुलकु नेल्ल
भू सुरोत्तम ! गार्हस्थ्यमुनकु सरिये ?

कंदपद्यमु : १८ नावुडु ब्रवरुंडिट्लनु
देवा ! देवर समस्त तीर्थाटनमुं
गाविंपुदु रिलपै; नट्ट
गावुन विभाजिंचि यडुग गौतुक मय्येन्

शार्दूलविक्रीडितम् : १९ ए ये देशमुलन् जरिंचितिरि मीरेयेगिरुल् चूचिना
रे ये तीर्थमुलंदु गृंकिडिति रे ये द्वीपमुल् मेट्टिना
रे ये पुण्यवनालि ग्रम्मरिति रे ये तोयधुल् डासिना
रा या चोटुल गल्गु वितलु महात्मा ! ना केरिंगिंपवे ?

गीतपद्यमु : २० पोयि सेविंप लेकुन्न बुण्यतीर्थ
महिम विनुट्यु नखिल कल्मष हरंब
कान वेडेद ननिन नम्मौनिवर्यु
डादरायत्तचित्तुडै यतनि कनिये

वैसे भवसागर में डूबे हुए हम लोगों का उद्धार केवल आपके पद-रज से ही संभव है।"

१६ प्रवर की प्रार्थना सुन कर योगिराज ने कहा "हे वत्स जब तुम जैसे गृहस्थ सुख पूर्वक जीवन बिताते हैं तो हमारे जैसे तीर्थ-यात्री आतिथ्य पाकर तीर्थ-यात्रा करने में सफल होते हैं। यदि तुम जैसे गृहस्थ न हों तो तीर्थाटन करना सम्भव न होता।

१७ हे प्रवर, अन्धे, बहरे, लूले, लंगड़े, भिक्षुक, सन्यासी, योगी, यति, अतिथि, आगंतुक, कापालिक, अनाथ, परिव्राजक आदि के लिए गृहस्थ पार्श्व में स्थित शहद के छत्ते, गोद में रखी कोष पेटी, घर के आंगन में फलित कल्पवृक्ष, पशु-शाला में बँधी कामधेनु हैं। गृहस्थ की महिमा का वर्णन हम कहां तक करें? गृहस्थ सोपान युक्त अनन्त अमृत से पूर्ण कुआँ है। समीप स्थित मेरु पर्वत, मरुभूमि में मार्ग के बीच शाद्वल और क्षुधा के समय काम देनेवाली फसल के समान है। ऐसे गृहस्थ धर्म के साथ अन्य धर्मों की तुलना ही कैसे हो सकती है? गृहस्थाश्रम से श्रेष्ठ आश्रम कोई नहीं है।

१८ योगीन्द्र के वचन सुन कर प्रवर ने कहा "भगवन्, आप पृथ्वी के समस्त तीर्थों की यात्रा किया करते हैं, इसलिए मुझे कुतूहल हो रहा है। प्रत्येक तीर्थ के बारे में मैं विस्तार पूर्वक सुनना चाहता हूँ।

१६ हे महात्मन्, आप किन किन देशों में गये और आपने किन किन तीर्थों में स्नान किया? आपके देखे हुए पर्वत, द्वीप, कानन-प्रदेश कौन से हैं? आप जिन नदियों और सागरतट पर स्नानार्थ गए उनकी विशेषताएँ मुझे विस्तार से कह कर अनुगृहीत कीजिए।

२० पुण्य तीर्थों की यात्रा करके मैं उनका अनुभव नहीं प्राप्त कर सका; किन्तु मैंने सुना है कि उन पावन तीर्थों की महिमा को सुनने से समस्त पापों का नाश हो जाता है। अतः आप से प्रार्थना है कि आप उन तीर्थों की महिमा का वर्णन करने की कृपा कीजिये।" योगीन्द्र ने प्रसन्न होकर कहा—

उत्पलमाला : २१ श्रो चतुरास्यवंशकलशोदधिपूर्णशशांक ! तीर्थया
त्राचरणशीलिनै जनपदंबुलु पुण्यनदीनदंबुलुन्
जूचिति; नंदुनंदु गल चोद्यमुलुन् गनुगोंटि ना पटी
राचल पश्चिमाचल हिमाचल पूर्वदिशाचलंबुगन्

शार्दूलविक्रीडितम्: २२ केदारेशु भजिंचितिन्; शिरमुनन् गीलिंचितिन् हिंगुळा
पादांभोरुहमुल्; प्रयागनिलयुं बञ्चात्तु सेविंचितिन्
यादोनाथसुताकळत्रु बदरीनारायणुगंटि; नी
या देशंबन नेल ? चूचिति समस्ताशावकाशंबुलन्

गद्य : २३ नेनिट्टि महाद्भुतंबु लीश्वरानुग्रहंबुन नल्पकालंबुनन् गनुगों
ननुट्यु, नीपदंकुरितहसनाग्रसिष्णुगंड युगळं डगुचुनू ब्रव
डतनि किट्लनिये ।

चंपकमाला : २४ वेरुवक मीकोनर्तु नोक विन्नप; मिट्टिवि येल्लजूचि रा
नेरकलु गट्टुकोन्न मरियेंड्लुनु बूड्लुनु बट्टु; ब्रायपुं
जिरुततनंबे मीमोगमु सेप्पक चेप्पुडु; नद्दिरय्य ! मा
केरुगदरंवे मीमहिम लीरयेरुंगुदु; रेभिचेप्पुदुन्

कंदपद्यमु : २५ श्रनिन बरदेशि गृहपति
कनियेन् संदियमुदेलिय नडुगुट तप्पा ?
विनवय्य जरयु रुजयुनु
जेनकंगा वेरचुमम्मु सिद्धुलमगुटन्

मत्तेभविक्रीडितम् : २६ परमंबैन रहस्य मौ; नयिन डापं; जेप्पेदन्; भूमिनि
जैरवंशोत्तम ! पादलेप मनु पेरं गल्गु दिव्यौषधं
पुरसंबीश्वर सत्कृपन् गलिगे; दद्भूरि प्रभावंबुनन्
जरियिंतुन् बवमान मानस तिरस्करित्वराहंकृतिन्

कंदपद्यमु : २७ दिवि बिसरुह बांधव सैं
धव संघंबेंत दव्यु दगले करुगुन्
भुविनंत दव्वु नेमुनु
ठवठव लेकरुगुदुमु हुटाहुटि नडलन्

२१ हे ब्रह्मा के वंश कलशरूपी सागर के चन्द्र, तीर्थ यात्रा करने में मेरी स्वाभाविक रुचि है। मैंने अनेक देशों और पवित्र नदी नदों को देखा। मलय पर्वत अस्ताचल, हिमालय, तथा उदयाचल के दर्शन किए। इनके साथ साथ उन उन प्रदेशों की विचित्रता एवं विशेषताओं का ज्ञानार्जन भी किया।

२२ मैंने केदारेश्वर नामक शिव मूर्ति की पूजा की। हिंगुला नामक देवी के पादपद्मों से अपने मस्तक का स्पर्श किया। तीर्थ राज प्रयाग में माधव स्वामी की उपासना की और क्षीरोदतनया (लक्ष्मी) के देवनारायण जी के बदरिकाश्रम में दर्शन किये। मैं कहां तक बताऊँ इस भूमण्डल की दशों दिशाओं को मैंने देखा है।

२३ मैंने इस प्रकार के अनेक विशाल प्रदेशों को उस सर्व शक्तिमान ईश्वर की कृपा से अल्प समय में ही देख लिया।" तपस्वी की ये बातें सुन कर प्रवर ने अपनी मन्द मुस्कुराहट को दबाते हुए विनय की--

२४ मैं आप से निस्संकोच होकर एक प्रार्थना करना चाहता हूँ। आपके बताए हुए समस्त प्रदेशों को यदि कोई पंख बांध कर भी देखना चाहे तो अनेक वर्ष व्यतीत हो जाएँ। यदि कोई पैदल चल कर उन प्रदेशों को देखना चाहेगा तो संभव ही नहीं होगा। इसके अतिरिक्त आपके मुख से स्पष्ट विदित हो रहा है कि आपकी आयु बहुत थोड़ी है। इतनी कम अवधि में आप उन समस्त प्रदेशों को कैसे देख सके? आपकी महिमा को आप ही जानें। कोई दूसरा उसका पार नहीं पा सकता।"

२५ प्रवर की प्रार्थना सुन कर यतीश्वर ने कहा--"तुम्हारा इस प्रकार संदेह प्रकट करना अनुचित नहीं है। सुनो, हम लोग सिद्ध कहे जाते हैं, हमें औषधियों का पूर्ण ज्ञान है। रोग तथा बूढ़ापन हमें स्पर्श नहीं कर सकता। बुढ़ापे और रोग से मुक्त होने के कारण हम सदा युवक ही दिखाई देंगे।

२६ हे विप्र कुमार, मुझे इस प्रकार की सामर्थ्य कैसे प्राप्त हुई यह एक रहस्य पूर्ण बात है। फिर भी मैं उसे गुप्त न रख कर प्रकट कर रहा हूँ। इस अनंत सृष्टि के कर्त्ता-धर्त्ता उस परम पूज्य भगवान की अन्यतम कृपा से मुझे "पादलेप" नामक एक दिव्य औषधि प्राप्त हुई है। उसके कारण मैं पवन तथा मन को भी मात करने वाले प्रचंड वेग से समस्त देशों का भ्रमण कर सकता हूँ।

२७ आकाश में कमल-बन्धु सूर्य के अश्व जितनी दूर बिना थकावट के जा सकते हैं, उतनी ही दूर मैं पृथ्वी पर बिना शिथिलता के अत्यन्त शीघ्रता से जा सकता हूँ।"

मत्तेभविक्रीडितम् : २८ अनिनन् विप्रवरुंडु कौतुक भर व्याग्रांतरंगुंडु, भ
क्तिनिबद्धांजलि बंधुरुंडुनयि मी दिव्यप्रभावं बेरुं
गनि ना प्रल्लदमुल् सहिंचि मुनिलोकग्रामणी ! सत्कृपन्
ननु मी शिष्युनि दीर्थयात्र वलनन् धन्यत्मुगा जेयरे ?

कंदपद्यमु : २९ अनुटयु रसलिंगमु निडु
तन बट्टुव प्रेप सज्ज दंतपु बरणिन्
निर्निच्चिन योक पसरिदि यदि
यनि चेप्पक पूसे दत्पदांबुज युगळिन्

कंदपद्यमु : ३० आमंदिडि यतडरिगिन
भूमीसुरु डरिगे दुहिन भूधरश्रृंग
श्यामल कोमल कानन
हेमाढ्य दरी झुरी निरीक्षापेक्षन्

चंपकमाला : ३१ अटच्चनिकांचे भूमिसुरु डंबरचुंबि शिरस्सर ज्झरी
पटल मुहुर्मुहुर्लुठ दभंग तरंग मृदंग निस्वन
स्फुट नटनानुकूल परिफुल्ल कलाप कलापि जालमुन्
गटक चरत्करेणु कर कम्पित सालमु शीतशैलमुन्

गद्य : ३२ कांचि यंतरंगमुन दरंगितंबगु हर्षोत्कर्षंबुन
कंदपद्यमु नरनारायण चरणां
बुरहद्वय भद्रचिह्न मुद्रित बदरी
तरुषंड मंडलांतर
सरणिन् धरणीसुरुंडु चन जन नेदुटन्

कंदपद्यमु : ३३ उल्ललदलका जलकण
पल्लवित कदंब कुसुम परिमळ लहरी
हल्लोहल मदबंभर
मल्लध्वनु लेसग विसरे मरुदंकुरमुल्

सीसपद्यमु : ३४ तोंडमुल्साचि यंदुगु चिगुळ्ळकु निक्कु
करुल दंतच्छाय गडलु कोनग
सेलवुल वनदंश मुलु मूगि नेरेवेट्ट
प्रोल्पुलुल्पोदरिंड्ल गुरकलिडग

२८ यतिवर के वचन सुन कर प्रवर ने कुतूहल की अधिकता से उद्विग्न होकर भक्तिभाव से जुड़ी हुई अंजली से नम्र होकर प्रार्थना की—"महात्मन्, आपकी महत्ता को न समझ कर यदि मेरे मुँह से कटुवचन निकले हों तो क्षमा कीजिए और मुझे पुण्य-तीर्थों के भ्रमण से कृतकृत्य करने का अनुग्रह कीजिए। मैं तो आपका शिष्य हूँ। आप मेरे ऊपर इतनी कृपा अवश्य कीजिए।

२९ प्रवर की विनती सुन कर योगिराज ने औषध वटिकाओं को रखने वाली दांत की डिबिया से एक प्रकार की जड़ी-बूटी के रस को निकाल और उसका नाम बताए बिना उसे प्रवर के पाद-पद्मों में लगा दिया।

३० योगिराज औषधि का रस प्रवर के पाद-पद्मों में लेपन करके चले गए। प्रवर अपने वांछित हिमशृंगों पर स्थित श्यामल कानन प्रदेशों, सुवर्णमय पर्वत गुफाओं और घाटियों तथा निर्झरों के देखने के लिए चले गए।

३१ हिमालय पर पहुँच कर प्रवर ने आकाश को छूनेवाले हिमालय के शिखरों से झरने वाले झरनों तथा उनकी मृदंग जैसी मधुर ध्वनि करने वाली तरंगों के ताल पर मुग्ध होकर अपने पंख खोले नृत्य करनेवाले मयूर समूह को देखा। पर्वत के बीच साल वृक्षों को अपनी सूँडों से उठा उठा कर फेक देने वाले हाथियों का झुण्ड भी दिखाई दिया।

३२ उपर्युक्त दृश्यों को देख प्रवर के हृदय में हर्षातिरेक के कारण उत्साह की तरंगें हिलोरें मारने लगीं। इस प्रकार हिमालय को देख प्रवर अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्राचीन काल में वेद विष्णु भगवान् के वंश में अवतार लिए हुए नर तथा नारायण तथा महान तपस्वियों की तपस्या भूमि बदरीवन में पहुँचे। उन्होंने देखा उस वन में एक रास्ता बहुत दूर तक चला गया है। उस मार्ग से बहुत दूर चलने के बाद उनके सामने—

३३ अलका नदी के जलकणों से सिञ्चित कदंबों के फूल की सुगन्धि से युक्त मलय पवन के चलने से सुगंधि के लोभी भ्रमरों की मधुर ध्वनि बहुत बढ़ गई।

३४ हाथियों का झुण्ड जब पेड़ों की कोंपलों को प्राप्त करने के लिए अपनी सूँडों को फैलाते थे तो उनके दांतों की कांति आँखों को चौंधिया देती थी। शार्दूलों के सोते समय उनके ओठों के कोने से टपकने वाली लार पर जंगली मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। वराह झरनों के रेतीले टीलों को खोद कर घास की गाँठों को

सेलयेटि यिसुक लंकल वराहंबुलु
मोत्तबुलै त्रव्वि मुस्तलेत्त
नड्डुबु निड्डुपु नापड्डुल गति मनु
बिळ्ळु डोंकलनुंडि कॆळ्ळु दाट
ब्रबल भल्लुक नखभल्ल भयद मथन
शिथिल मधुकोश विसर विशीर्णमधि
कांतरांतर दंतुरि तातपमुन
बुडमि तिल तंडुल न्याय मुनवेलुंग

कंदपद्यमु : ३५ परिकिंचुचु डेंदंबुन
बुरिकोनु कौतुकमु तोड भूमीसुरुड
ग्गिरि कटकतट निरंतर
तरुगहन गुहाविहार तत्परमतियै

सीसपद्यमु : ३६ निड्डुदपेन्नेरिगुंपु जडगट्ट सगरुमु
म्मनुमंडु तपमु गैकोनिनचोट्टु
जरठकच्छपकुलेश्वरुवेन्नु गानरा
जगतिकि मिन्नेरु दिगिन चोट्टु
युच्चडीकतनंबु पोबेट्टि गीरिकन्य
पति गोल्व नायासपडिन चोट्टु
वलराचराचवा डलिकात्तुकनु वेट्ट
गरगिन यलकनि करपु जोट्टु
तपसि यिल्लांड्र चेलुवंबु दलचि तलचि
मुन्नु मुच्चिच्चुनु विराळि गोन्न चोट्टु
कनुपपुलु वेल्पुब्रडवालु गन्न चोट्टु
हर्षमुन जूचि प्रवराख्यु डात्मलोन

चंपकमाला : ३७ विलय कृशानु कीलमुल वेडिमि ब्रोडिमि मालि वेल्मिडिं
गलसिन भूतधात्रि मरि कम्मर रूपयि निल्चि योषधुल्
मोलुवग जेयुनट्टि नयमुं ब्रातिकल्पमु नेट्लु गांचु नी
चलिमल वल्ल नुल्लसिलु चल्लदनंबुनु नून कुंडिनन्

सीसपद्यमु : ३८ पसुपु निग्गुल देरु पापजन्निद मोप्प
ब्रमाथाधिपति यिंटिपट्टेरिंगे

उखाड़ कर खा रहे थे। भैंसें बलिष्ट गाय के बछड़ों की भांति इधर उधर कूद रही थीं। भालू शहद के छत्तों को नखों से चीर रहे थे। अतः मधु मक्खियां ऊपर उड़ रही थीं। छाया श्यामल थी। बीच बीच में सूरज की किरणें दिखाई देती थीं। छाया और उसकी बीच में से प्रसारित धूप पृथ्वी पर ऐसी दिखाई दे रही थी मानो जमीन पर तिल और चावल बिखेर दिए गए हों।

३५ इस प्रकार प्रवर अपने मन में पैदा होने वाले अतिशय कुतूहल के साथ उस हिम पर्वत के मध्य प्रदेश में, पहाड़ी दर्रों के बीच स्थित घने वृक्षों तथा जंगलों में उत्साह से आनन्द पूर्वक विचरण करने लगे।

३६ इस वन विहार में प्रवर ने सगरवंश के भगीरथ की तपोभूमि देखा। तथा आकाश गंगा जहाँ पृथ्वी पर उतरी थी उस प्रदेश को देखा। पार्वती देवी ने अपनी लज्जा को छोड़ अपने पति की उपासना में जहां तपस्या की थी उस प्रदेश को भी देखा। जहाँ कामदेव शिवजी के तृतीय नेत्र की अग्नि से भस्मीभूत हो गया था उस हृदय विदारक स्थान के दर्शन भी किए। जहाँ प्राचीन समय में सप्तर्षियों की पत्नियों की सुन्दरता का बार बार स्मरण कर त्रिविधाग्नि (गार्हपत्याग्नि, आवहिताग्नि और दक्षिणाग्नि) मोहित हो गई थीं उस स्थल का निरीक्षण किया। देव सेनापति कुमारस्वामी के जन्म स्थान का दर्शन कर परम सन्तोष प्राप्त किया और मन में सोचा—

३७ प्रलय काल की वायु से भस्मीभूत हुई पृथ्वी इस हिमालय की ठण्डक को प्राप्त नहीं करती तो पृथ्वी अपने में पेड़-पौधों को उत्पन्न करने की शक्ति प्राप्त नहीं करती।

३८ नैष्ठिक ब्रह्मचारी शिवजी को हिमवान् ने ही अपनी पुत्री देकर गृहस्थ बनाया। हिमालय ने गंगा को धारण किया इसीलिए सुरराज को उस नदी में तैरने

शचिकीत गरपुचु जदलेट सुरराजु
जलकेळि सवरिंचु चेलु वेरिंगे
नदनुतो जेपि चन्नविसि योषधुल म
न्मोदवु कोंडल केल्ल बिदुक नेरिंगे
वेल्पु टितुललोन विरिवीगुचु मेन
नवरत्न रचनल खण मेरिंगे
बरिपरि विधंपु जन्नपु बरिकरंपु
सोंपु संपद निखिल निलिंप सभयु
नप्पटप्पटिकिनि जिह्व त्रुप्पुडुल्ल
नामेत लरिंगे नी तुहिनाद्रि कतन

मत्तेभविक्रीडितम् : ३९ तलमे ब्रह्मकुनैन नी नग महत्वंबेन्न ? ने निय्येडं
गल चोद्यंबुलु रेपु गन्गोनियेदं गाकेमि; नेडेगेदन्
नलिनी बांधवभानुतप्त रविकांतस्यंदिनीहारकं
दळ चूत्कार परंपरल् पयिपयिन् मध्याह्नमु देल्पेडिन्

गीतपद्यमु : ४० अनुचु ग्रम्मरु वेळ नीहार वारि
बेरसि तत्पादलेपंबु गरगि पोये
गरगि पोवुट येरुगडद्धरणि सुरुडु
दैव कृतमुन किल नसाध्यंबु गलदे ?

मत्तेभविक्रीडितम् : ४१ अतडट्लौषध हीनुडै निजपुरी यात्रा मिळत्कौतुको
द्धति ग्रोवन् सपदि स्फुटार्ति जरण द्वंद्वबु राकुंडिन
न्मति जिंतिंचुचु नव्विधंबेरिगि हा ! नन्निट्लु दैवंब्र ! ते
च्चिते यी दूरवन प्रदेशमुनकुन् सिद्धापदेशंबुनन्

कंदपद्यमु : ४२ एक्कडियरुणास्पद पुर
मेक्कडि तुहिनाद्रि ? क्रोव्वि ये रादगुने ?
यक्कट ! मुनुसनुदेंचिन
दिक्किदियनि येरुग; वेडलु तेरगेय्यदि यो ?

मत्तेभविक्रीडितम् : ४३ अकलंकौषध सत्वमुन् देलिय माया द्वार कावंति का
शि कुरुक्षेत्र गया प्रयागमुलु ने सेविंप कुद्दंड गं
डक वेदंड वराह वाहरिपु खड्ग व्याघ्र मिम्मिंचु गों
डकु रजेल्लुने ? बुद्धिजाड्य जनितोन्मादुल् गदा ! श्रोत्रियुल्

(जलक्रीड़ा) का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हिमालय रूपी बछड़े ने पृथ्वी रूपी गोमाता के औषध रूपी दूध को पहाड़ों पर बिखेर दिया। हिमालय मेनका के पति हैं और हिमालय में नवरत्न बहुत हैं अतः मेनका रत्न जड़ित आभूषण पहन कर देवता स्त्रियों में इठलाती रही। समय समय पर राजा महाराजा आदियों के यज्ञ यागादि कर्म इसी पर्वत पर होते रहे और इसलिए देवताओं को अच्छी दावतें प्राप्त होती रहीं।

३९ इस हिमालय की महिमा का वर्णन करना ब्रह्मा के लिए भी संभव नहीं है। इस समय सूर्य की प्रखर किरणों से जलती हुई सूर्यकान्त मणियों से झरने वाली बूँदों की ध्वनि हो रही है, इससे ज्ञात होता है कि दो पहर का समय हो गया है, अतः कल आकर यहाँ के सौन्दर्य को आँख भर कर देखूँगा।

४० इस तरह सोचते हुए प्रवर अपने स्थान पर जाने के लिए लौटने ही वाला था, इतने में उसके पाद-पद्मों का लेप हिम-बिन्दुओं के कारण गल गया। प्रवर अत्यन्त चिन्तित होकर सोचने लगा कि विधाता की लीला अद्भुत है। उसके विरुद्ध कुछ हो ही नहीं सकता।

४१ प्रवर के पाँवों का लेपन छूट जाने से वह अपने नगर को उड़ कर नहीं जा सकता था। जब उसको मालूम हुआ कि उसका पादलेपन गल गया है तो अत्यन्त खिन्न होकर वे अपने भाग्य को कोसने लगे--हे भगवान्! आपने यतिवर का उपदेश दिला कर मुझे इस दूर देश में पहुँचा दिया। अब मैं अपने घर कैसे जाऊँ?

४२ अरुणास्पद नगर कहाँ और हिमाद्रि कहां? मेरा यहां आना ही मूर्खता है। अब मुझे किस ओर जाना है? किस ओर मेरा घर है? यहाँ दिशा का ज्ञान भी नहीं होता। मैं यहां से कैसे निकलूँ? मेरा रास्ता कहां है?

४३ यदि मैं योगिराज की दी हुई औषधि की महिमा ही जानना चाहता था तो मुझे द्वारिका, अवन्तिका, आदि तीर्थ-स्थानों में जाकर उनमें स्नान करना चाहिए, लेकिन मैं हाथी, बाघ एवं वराहों से भरे इस हिमाद्रि पर आ पहुँचा। मैंने बड़ी बेवकूफ़ी की। मेरे जैसे वैदिक कर्म-काण्डी ही स्थूल बुद्धि के कारण भ्रांत चित्त होते हैं। मैं भ्रांत चित्त होकर इस वन् प्रदेश में आ पहुँचा।

सीसपद्यमु : ४४ ननुनिमुसंबु गानकयुन्न नूरेल्ल
नरयु मज्जनकु डेंतडलु नोक्को
येपुड्डु संध्यलयंदु निलुवेळ्ळनीक न
न्नोमेड्डु तल्लियेंतोरलु नोक्को
यनुकूलवति नादुमनसुलो वर्तिंचु
कुलकांत मदि नेंत कुंदुनोक्को
गेडदोडु नीडलै क्रीडिंचु सच्छात्रु
लिंतकुनेंत चिंतिंतु रोक्को
यतिथि संतर्पणंबु लेमय्ये नोक्को
यग्नुलेमय्ये नोक्को नित्यंबुलैन
कृत्यमुल बापि दैवंब किनुक निट्लु
पार वैचिते मिन्नुलु पड्डु चोट

कंदपद्यमु : ४५ ननु निलु सेरु नुपायं
बोनरिंपग जालु सुकृति योक डोदव डोको
यनुचुं जिंता सागर
मुन मुनिगि भयंबु गदुर बोवुचु नेदुरन्

सीसपद्यमु : ४६ कुलिश धारा हति पोलुपुन बैनुंडि
यडुगु मोवग जेगुरैन तट्टुल
गनु पट्टु लोय गंगा निर्झरमु वार
जलुव यौ नय्येटि केलकुलंदु
निसुक वेट्टिन नेल नेच्चि यर्कांशुल
जोरनीक दट्टमै यिरुल गवियु
क्रमुक पुन्नाग नारंग रंभा नाळि
केरादि विटपि कांतार वीथि
गेरलु पिक शारिका कीर केकि भृंग
सारस ध्वनि दनलोनि चंद्रकांत
दरुलु प्रतिशब्द मीन गंधर्व यक्ष
गान घूर्णितमगु नोक्क कोन गनियें

कंदपद्यमु : ४७ कनुगोनि यिदि मुनियाश्रम
मनु तहतह वोडमि यिच्चटि करिगिन नाकुं
गननगु नोक तेरकुव यनि
मनमुन गल दिगुलु कोंत मट्टुवडंगन्

४४ क्षण भर के लिए आँखों से ओझल होने पर मेरे पिताजी गाँव छान डालते। वे इस समय कितने दुखी होंगे ? संध्या के बाद कभी मुझे बाहर न जाने देने वाली मेरी माता कैसा विलाप करती होंगी ? मेरे विचारों के अनुकूल चलते हुए सदा मेरी सेवा में लगी रहने वाली मेरी पत्नी मन में किस प्रकार की व्यथा का भार वहन कर रही होगी ? सदा मेरे साथ खेलने वाले और मेरे कार्यों में सहायता देने वाले मित्र एवं शिष्य कितने चिंतित होंगे ? अतिथियों का आदर सत्कार किस प्रकार होता होगा ? गार्हपत्यादि अग्नियों का क्या हाल होगा ? हे भगवन्, आपने अप्रसन्न होकर मुझे नित्य कृत्यों से वंचित करके बहुत दूर एवं ऊँचे प्रदेश में फेंक दिया।"

४५ इस तरह अत्यन्त दुःखी होकर वे सोचने लगे—मेरे घर पहुँचने का रास्ता बता देनेवाला कोई पुण्यात्मा इस प्रदेश में नहीं होगा ! इसके बाद वे उस एकांत प्रदेश में मार्ग न पाकर भयभीत हो आगे चले तो उन्होंने—

४६ हिमालय के शिखर से लेकर तल भाग तक लाल दिखाई देनेवाली दो पहाड़ी कन्दराओं को देखा। वे गुफ़ाएँ ऐसी दिखाई दे रही थीं मानो इन्द्र के द्वारा कुलिश का आघात पाकर जो चोट लगी थी ये उसी के घाव हैं। प्रवर से उन पहाड़ी कन्दराओं से बहनेवाली गंगा के दोनों किनारे रेतीले टीलों पर उगी हुई घास एवं घने जंगलों में कोयल की कूक, तोतों की मधुर ध्वनि तथा विचरण करनेवाले यक्ष-गंधर्वों के मधुर संगीत से गूँजनेवाली एक पहाड़ी कन्दरा को देखा।

४७ उस कन्दरा को देखने के बाद प्रवर ने सोचा कि वह किसी मुनि का आश्रम होगा। इस प्रकार भ्रान्त चित्त होकर उसने मन में सोचा कि वहां जाने पर उसे कोई न कोई उपाय अवश्य ज्ञात हो जाएगा।

चंपकमाला : ४८ निकट महीधराग्रतट निर्गत नर्जरधार ब्रासि लो
यकु दलर्किंदुगा मलकलै दिगु कालुव वेंट बूचु म
ल्लिक लवनंबनंबुग नलि प्रकार ध्वनि चिम्मि रेग लो
निकि मणि पट्ट भंग सरणिन् धरणीसुरुडेगि चेंगटन्

शार्दूलविक्रीडितम् : ४६ तावुल् क्रेवल जल्लु चेंगलुवकेदारंबु तीरंबुनन्
मावुल् क्रोवुलु नल्लि बिल्लि गोनु कांतारंबुनंदैंदव
ग्रावा कल्पितकायमान जटिल द्राक्षागुलुच्छंबुलं
बूवुंदीवेल नोप्पु नोक्क भवनंबुन् गारुडोत्कीर्णमुन्

कंदपद्यमु : ५० कांचि तदीय विचित्रो
दंचित सौभाग्य गरिम कच्चेरुवडि य
क्कांचन गर्भान्वयमणि
यिंचुक दरियंग नचटि केगेड्डु वेळन्

कंदपद्यमु : ५१ मृगमद सौरभ विभव
द्विगुणित घनसार सांद्र वीटी गंध
स्थगितेतर परिमळमैं
मगुव पोलुपु देलुपु नोक्क मारुत मोलसेन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ५२ अत डावात परंपरा परिमळ व्यापार लीलन् जना
न्वित मिच्चोटनि चेर बोयि कनियेन् विद्युल्लताविग्रहन्
शतपत्रेक्षण जंचरीकचिकुरं जंद्रास्य जक्रस्तनिन्
नतनाभिन् नवला नोकानोक मरुन्नारी शिरोरत्नमुन्

गीतपद्यमु : ५३ अमल मणिमय निजमंदिरांगणस्थ
तरुण सहकार मूल वितर्दिमीद
शीतलानिल मोलय नासीन यैन
यन्निलिंपाब्जमुखियु नय्यवसरमुन

सीसपद्यमु : ५४ तत नितंबाभोग धवळांशुकमु लेनि
यंगदट्टपु गाविरंगुवलन
शशिकांत मणिपीठि जाजु वारग गाय
लुत्तुंग कुचपालि नत्तमिल्ल
दरणांगुळी धूत तंत्री स्वनंबुतो
जिलिबिलि पाट मुद्दुलु नटिंप

४८ जिस स्थान पर प्रवर खड़े हुए थे उसके समीप ही पहाड़ी शिखर से घाटी में वक्र मार्ग द्वारा नीचे बहनेवाले निर्झर के दोनों किनारों पर सुगंधि चारों तरफ़ फैलानेवाली चमेली लता छाई हुई थी। उन लताओं पर भौंरे गुँजार कर रहे थे। प्रवर ने हीरे की सीढ़ियों से अन्दर पहुँच कर—

४६ एक पर्णशाला देखी जो कमल के परिमल से व्याप्त थी। आम्र आदि वृक्षों के वन में चन्द्रकान्त पत्थरों से निर्मित थी। वह कुटी अंगूर एवं फूलों की लताओं से घिरी हुई थी। अंगूर एवं फूलों के गुच्छ लटके हुए थे। उनकी सुगंधि आसपास के वातावरण को सुगंधित कर रही थी। वहां प्रवर ने नवरत्न खचित एक सुन्दर भवन देखा।

५० वहां की अद्भुत सुन्दरता को देख कर प्रवर चकित रह गया। जब वह धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा तो—

५१ उस समय कस्तूरी, कपूर आदि सुगंधित वस्तुओं से बने बीड़े की खुशबू चारों ओर फैल गई। उससे मालूम होता था कि इस प्रदेश में एक नारी कहीं अवश्य रहती है।

५२ उस सुगंध से पूर्ण पवन के फैलने से प्रवर ने सोचा कि यह मनुष्यों के रहने का स्थान है। प्रवर कुछ आगे बढ़ा तो बिजली की रेखा जैसी देह, कमल जैसे नेत्र, भ्रमर जैसे केश, चन्द्रमा जैसा मुख मण्डल, चकोर जैसा स्तन और गहरी नाभि से शोभित एक अद्भुत श्रेष्ठतम सुन्दरी को देखा।

५३ उस समय पर वह तरुणी शुभ्र हीरे से जडित अपने भवन के आंगन में मीठे आम की शाखाओं में चबूतरे पर ठण्डी हवा में बैठी हुई थी।

५४ वह नारी कमर में गेरवे रंग का लहँगा पहन कर, उस पर जरी का पतला वस्त्र लपेटे आँचल ओढ़े चन्द्रकान्त मणि जडित आसन पर बैठी हुई थी। लँहगे की ललाई के कारण आसन भी लाल दिखाई दे रहा था। उँगलियों से वीणा की तंत्रियों को झंकृत करते समय जो निनाद निकलता था, उसमें घुलनेवाली अव्यक्त मधुर कोमल ध्वनि बहुत ही मधुर सुनाई देती थी। वीणा में कीर्तन के अनुकूल कंकणों की झंकार ताल का काम दे रही थी।

नालापगति जोक्कि यर मोड्पु गनुदोयि
रतिपारवश्य विभ्रममु देलुप
ब्रौढि ब्रलिकिंचु गीत प्रबंधमुलकु
गम्र कर पंकरुह रत्न कटक भुण भु
ण ध्वनि स्फूर्ति ताळ मानमुलु गोलुप
निंपुदळुकोत्त वीण वायिंपुचुंडि

उत्पलमाला : ५५ अब्बुर पाटुतोड नयनांबुजमुल् विकसिंप गांति पे
ल्लुब्बि कनीनिकल् विकसितोत्पल पंक्तुल गम्मरिंपगा
गुब्ब मेरुंगु जन्गव गगुर्पोडवन् मदिलोनि कोरिकल्
गुब्ब तिलंग जूचे नलकूबर सन्निभु नद्धरामरुन्

उत्पलमाला : ५६ चूचि भुणंभुणत्कटक सूचित वेग पदारविंदयै
लेचि कुचंबुलुं दुरुमु लेनडु मल्लल नाड नय्येडं
बून्निन योक्क पोकनुनुघोदिय जेरि विलोकन प्रभा
वीचिकलं ददीयपदवीगलशांबुधि बेल्लि गोल्पुचुन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ५७ मुनुमुन् पुट्टेडु कोंकु लौल्यमु निडन् मोदंबु विस्तीर्णतं
जोनुपन् गोर्कुलु ग्रेळुदाट मदिमेच्चुल् रेप्प लल्लर्प न
त्यनुषंगस्थिति रिच्च पाटोदव नोय्यारंबुनं जंद्रिक
ल्दनुकं जूचे लतांगि भूसुरू ब्रफल्लन्नेत्र पद्मंबुलन्

कंदपद्यमु : ५८ पंकजमुखि कप्पुडु मै
नंकूरितमु लय्ये बुलक लाविष्कृत मी
नांकानल सूचक धू
मांकुरमुलु वोले मरियु नतनिं जूडन्

उत्पलमाला : ५९ तोंगलि रेप्पलं दोलग द्रोयुचु बै पयि विस्तरिल्ल क
न्नुंगव याक्रमिंचुकोनुनो मुखचंद्रु नटंचु बोवनी
कंगजु डानवेट्टि कदियन् गुरिवासे ननंग जारे सा
रंगमदंबु ले जेमट ग्रम्म ललाटमु डिग्गि चेक्कुलन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ६० अनिमेषत्वमु मान्चे त्रित्तरपु जूप स्वेदा वृत्ति मा
न्चे नवस्वेद समृद्धि बोधकळ मान्चेन् मोह विभ्रांति; तो
डने गीर्वाण वधूटिकिन् भ्रमरकीटन्याय मोप्पन् मनु
ष्युनि भाविंचुट मनुषत्वमे मेयिं जूपट्टेना नत्तरिन्

५५ इस प्रकार उस सुन्दर शिरोमणि के वीणा बजाते समय एकान्त स्थान में सहसा अत्यन्त सुन्दर युवक प्रवर का आगमन हुआ तो वह तरुणी आश्चर्य चकित रह गई। उसकी दृष्टि चंचल हो उठी। उसका शरीर पुलकित हो गया। उसके मन में अनेक प्रकार की कामनाएँ उत्पन्न होने लगीं। उसने आश्चर्य से प्रवर की ओर देखा।

५६ वह अप्सरा प्रवर को देखते ही अपने पैरों में बँधी छोटी-छोटी किंकणियों को ध्वनित करती हूई तुरन्त खड़ी हुई और पास के सुपारी के पेड की आड में जाकर उस मार्ग को तकती खड़ी रही जिस मार्ग से प्रवर आ रहे थे।

५७ प्रवर को देखते ही संकोच के मारे उस स्त्री के नेत्र और भी चंचल हो गए। अनन्य सुंदर पुरुष को पाकर उसके नेत्र अतिशय आनंद के मारे विशाल हो गए। कामनाओं की अधिकता के कारण उसकी आँखें और भी चंचल हो गईं। प्रवर की ओर देखते समय उस स्त्री की आँखों की ज्योति चाँदनी की तरह चमकने लगी। इस प्रकार उस तरुणी की परिवर्तित अवस्था को प्रकट करनेवाली आँखें फैल गईं।

५८ प्रवर को देखते रहने से उस स्त्री के मन में जो मोह उत्पन्न हुआ उसके कारण उसका शरीर रोमांचित हो गया।

५९ उसकी कस्तूरी की बिन्दी पिघल कर कपोलों पर रेखा खींच गई। उस समय ऐसा प्रतीत हुआ जैसे अपलक नेत्रों से देखनेवाली उसकी विशाल आँखें और भी विशाल होती जा रही हैं। यदि वह इसी प्रकार देखती रही तो सम्भवतः पूरा मुख नेत्रमय हो जाएगा। यही सोच कर कामदेव ने उसकी आँखों की विशालता को रोकने के लिए वह लकीर खींच दी थी।

६० उस युवती ने मन में नर की इच्छा की थी इसीलिए भ्रमर-कीट न्याय से देव जाति के उसके सहज धर्म तृप्त हो गए और उसे मानवीय भावों की उपलब्धि हुई। (देव जाति के धर्म हैं : १ अनिमेषत्व २ अस्वेदता आदि।

गद्य : ६१ इट्लतनि रूप रेखा विलासंबुलकु जोक्कि, यक्कमलपत्रेक्षण यात्मगतंबुन

उत्पलमाला : ६२ एक्कडि वाडो यक्षतनयेंदु जयंत वसंत कंतुलं
जक्कदनंबुनन् गेलुव जालेडु वीनि मही सुरान्वयं
बेक्कड ? यी तनू विभव मेक्कड ? येलनिबंटुगा मरुन्
डक्क गोनंग रादे यकटा ! ननु वीडु परिग्रहिंचिनन्

सीसपद्यमु : ६३ वदनप्रभूत लावण्यांबु संभूत
कमलंबुलन वीनि कन्नुलमरु
निक्कि वीनुलतोड नेक्क सक्केमुलाडु
कराणि नुन्नवि वीनि घनभुजमुलु
संकल्पसंभावास्थान पीठिक वोले
वेडदयै कनुपट्टु वीनि युरमु
प्रतिघटिंचु चिगुळ्ळपै नेरवारिन
रीति नुन्नवि वीनि मृदु पदमुलु
नेरेटेटि यसल् तेच्चि नीरजासु
सान बट्टिन रापोडि चल्लि मेदिपि
पदनु सुध निंडि चेसेनो पद्मभवुडु
वीनि गाकुन्न गलदे यी मेनि कांति ?

कंदपद्यमु : ६४ सुर गरु डोरग नर खे
चर किन्नर सिद्ध साध्य चारण विद्या
धर गंधर्व कुमारुल
निरतमु गनुगोनमे ! पोल नेर्तुरे वीनिन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ६५ अनिर्चितिंचुचु मीनकेतन धनुर्ज्यामुक्त नाराचदु
र्दिन सम्मूर्छित मानसांबुरुहयै दीर्पिंचु पेंदत्तरं
बुन बेटेत्तिन लज्ज नंघ्रि गटकंबुल् म्रोय नड्डंबु नि
ल्चिन नय्यन्नर जूचि चेर जनि पल्केन् वाडु विभ्रांतुडै

उत्पलमाला : ६६ एव्वते वीवु भीतहरिणेक्षण ! योंटि जरिंचे दोट ले
किव्वनभूमि; भुसुरूड ने ब्रवाराख्युड; द्रोव तप्पितिं
ग्रोव्वुन निम्नगाग्रमुनकुं जनुतेंचिति; नूरु जेर निं
केव्विधि गांतु देल्प गदवे ? तेरुवेद्दि शुभंबु नी कगुन्

६१ प्रवर के शारीरिक गठन पर मुग्ध होकर कमलाक्षी अप्सरा अपने मन में सोचने लगी—

६२ यह ब्राह्मण नलकूबर, चन्द्र, जयन्त, वसन्त, कामदेव आदि से भी अधिक सुन्दर है। यह देव या गन्धर्वादि में से कोई एक होगा; नहीं तो ब्राह्मण मात्र के लिए इस तरह की सुन्दरता कैसे प्राप्त होगी ? यदि इस युवक की प्रेयसी बनने का सौभाग्य मुझे मिलेगा तो मैं अधिक सुख का भोग कर सकती हूँ।

६३ इस पुरुष की आँखें मुख की कांति के शुभ्र जल में उत्पन्न कमल के समान हैं। इसकी भुजाएँ ऊपर उठ कर मानो कानों से परिहास कर रही हैं। इसकी विशाल छाती कामदेव के राज्य का सिंहासन जैसी है। उसके पाद नव पल्लवों को भी मात करनेवाली कोमलता तथा ललाई लिए हुए हैं। इस पुरुष के सृजन के समय ब्रह्मा ने आकाश गंगा से स्वर्ण धूलि लाकर उसमें सूर्य को घिसने से जो कण प्राप्त हुए उन्हें मिला कर, सुधा से हाथों को स्निग्ध करते हुए इस पुरुष का सृजन किया होगा।" वह युवती वरूथिनी इस प्रकार सोचने लगी। (पुराण कथा : सूर्य की पत्नी संज्ञा देवी जब अपने पति के शरीर की गर्मी को सहन नहीं कर सकी तो उसके पिता ने सूर्य को घिसवा कर उसकी गर्मी को कम किया था।

६४ मैंने सुर, गरुड, नाग, खेचर, किन्नर, सिद्ध, चारण, विद्याधर, गन्धर्व और मानव जाति के अनेक युवकों को देखा और देख रही हूँ परन्तु इस के सामने सब तुच्छ हैं।

६५ इस प्रकार सोच समझ कर वह देवकन्या कामदेव की अधिकता से लज्जा को छोड़ पैरों में बन्धी किंकणियों को निनादित करती हुई सुपारी के वृक्ष की आड़ से बाहर निकल कर उस मार्ग पर खड़ी हो गई जिससे प्रवर आया था। यह देख कर भ्रान्त-चित्त प्रवर ने उसके समीप आ कर पूछा—

६६ हे नारी, तुम कौन हो ? भय को छोड़ अकेली इस कानन में क्यों घूम रही हो ? मैं प्रवर नामक ब्राह्मण हूँ। घमंड के कारण आगे-पीछे न सोच कर इस पर्वत प्रदेश में मार्ग भटक कर कष्ट उठा रहा हूँ। मुझे रास्ता दिखाओ, तुम्हारा भला होगा।

कंदपद्यमु : ६७ अनि तन कथ नेरिगिंचिन
दन कनुगव मेरुगुलुब्ब दाटंकमुलुं
जनुगवयु नड्डमु वडकग
वनित सेलविवार नव्वि वानिकि ननियेन्

उत्पलमाला : ६८ इंतलु कन्नुलुंड देरु वेव्वरि वेडेदु भूसुरेंद्र ! ये
कांतमुनंदु नुन्न जवगांड्र नेंप ग्रिडि पल्करिंचु ला
गिंतये काक नीवेरुगवे मुनु वच्चिन त्रोव चोप्पु ? नी
किंत भयंबु लेकड्डग नेल्लिद मैतिमि; माट लेटिकिन्

गद्य : ६९ अनि नर्मगर्भंबुगा बलिकि, क्रम्मर नम्मगुव यम्महीसुर
कुमारुन किट्लनिये

सीसपद्यमु : ७० चिन्नि वेन्नेल कंदु वेन्नु दन्नि सुधाब्धि
बोडमिन चेलुव तोबुट्टु माकु
रहिबुट्ट जंत्र गात्रमुल राल् गरिगिंचु
विमल गांधर्वंबु विद्य माकु
ननविल्तुशास्त्रंबु मिनुकुलावर्तिंचु
पनि वेन्नतोड बेट्टिनदि माकु
हय मेध राजसूयमुलन वेर्वड्डु
सवन तंत्रंबु लुंकुवलु माकु
गनक नगसीम गल्पवृक्षमुलनीड
बच्च राचट्टु गमि रच्चपट्टु माकु
ब्रह्मसंभव वैकुंठ भर्गसभलु
सामु गरिडीलु माकु गोत्रामरेंद्र !

कंदपद्यमु : ७१ पेरु वरूधिनि विप्रकु
मार ! घृताची तिलोत्तमा हरिणी हे
मा रंभा शशिरेखलु
दारगुणाढ्यलु मदीयलगु प्राणसखुल्

मत्तेभविक्रीडितम्: ७२ बहुरत्नद्युति मेदुरोदर दरीभागंबुलं बोल्चु नि
म्मिहिकाहार्यमुनं जरिंतु मेपुडुं ब्रेमन् नभोवाहिनी
लहरी शीतल गंधवाह परिखेलन्मंजरी सौरभ
ग्रहणेंदिंदिर तुंदिलंबु लिवि मत्कांतार संतानमुल्

६७ इस प्रकार प्रवर का वृत्तान्त सुन कर वरूथिनी की आँखें चमकने लगीं उसके कर्ण-आभूषण चंचल होने लगे। उस वनिता ने हँस कर प्रवर से कहा—

६८ हे ब्राह्मण, तुम्हारे पास इतने विशाल नेत्र हैं। क्या तुम इन विशाल नेत्रों से अपना मार्ग नहीं पहचान सकते? दूसरे से पूछने की आवश्यकता ही क्या थी? तुमने यह बहाना बना कर एकान्त में रहने वाली मुझ जैसी युवती से बातें करनी चाही है। इतनी बातें ही क्यों? हम तुम्हारे लिए सस्ती मालूम होती हैं, अन्यथा तुम इस प्रकार निडर होकर हम से प्रश्न करते?'

६६ इस प्रकार परिहास पूर्वक अपने अभिप्राय को छिपा कर ऊपर सरस शब्दों में उस सुरवनिताने ब्राह्मण पुत्र प्रवर से कहा—

७० हे ब्राह्मण श्रेष्ठ। मेरा वृत्तान्त सुनो। मैं चन्द्रमा की बहिन लक्ष्मीदेवी की सहोदरी हूँ। हमारे वीणा बजा कर गाते समय पाषाण तक पिघल जाते हैं। कामशास्त्र की मर्यादाओं से भी मैं बचपन से परिचित हूँ। राजसूय तथा अश्वमेध आदि महा यज्ञों के प्रणेताओं को ही मैं प्राप्त हो सकती हूँ। हम मेरु पर्वत के कल्प वृक्ष की छाया में मरकत मणियों पर बैठने वाली हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवजी की सभाओं में हम नृत्य किया करती हैं अतः मुझे साधारण स्त्री मत समझना।

७१ हे ब्राह्मण पुत्र, मेरा नाम वरूथिनी है, घृताची, तिलोत्तमा, हरिणी, हेमा, रंभा, शशिरेखा आदि अप्सराएँ मेरी प्राण प्यारी सहेलियां हैं।

७२ हम सदा अनेक प्रकार के रत्नों की कांति से प्रकाशित गहन प्रदेशों से सुशोभित इस हिम पर्वत पर विहार करती हैं। आकाश गंगा की अविरल धारा से शीतल वायु जहाँ सभी दिशाओं में बहा करती हैं, उसके कारण मंजरियों का सौरभ प्राप्त करके भ्रमरों से गुंजारित होने वाले ये सुन्दर वन हमारे विहार स्थल हैं।

कंदपद्यमु : ७३ भूसुर कैतव कुसुमश
रासन ! मर्यिटि विंद वैतिवि; गैको
म्मा समुदंचन्मणिभव
नासीनत सेददेरि यातिथ्यंबुल्

गीतपद्यमु : ७४ कुंदनमुवंटि मेनु मध्यंदिनात
पोष्महति गंदे वडदाके नोप्पुलोलुकु
वदन; मस्मद्ग्रहंबु पावनमु सेसि
बडलिकलु वासि चनुमन्न ब्राह्मणुंडु

उत्पलमाला : ७५ अंडजयान ! नीवोसगु नट्टि सपर्युलु माकुवच्चे; निं
दुंडगरादु; पोवलयु नूरिकि निंटिकि निप्पुडेनु रा
कुंड नोकंडु वच्चि मरि योंडुने? भक्तिय चालु; सत्क्रिया
कांडमु दीर्प वेग चनगावलयुं गरुणिंपु नापयिन्

उत्पलमाला : ७६ एनिक निल्तु सेरुटकु नेद्दि युपायमु ? मी महत्त्वमु
ल्मानिनि ! दिव्यमुल्; मदि दलंचिन नेंदुनु मीकसाध्यमु
ल्गानमु; गान तल्लि ! प्रजलन् ननु गूर्पु; मटन्न लेतन
व्याननसीम दोप धवळायतलोचन वानि किट्लनुन्

उत्पलमाला : ७७ एक्कडियूरु ? काल् निलुव किंटिकि बोयेद नंचु बल्के दी
वक्कट ? मीकुटीर निलयंबुलकुन् सरि राकपोयेने
यिक्कडि रत्नकंदरमु लिक्कडि नंदन चंदनोत्करं
बिक्कडि गांग सैकतमु लिक्कडि यीलवलीनिकुंजमुल्

उत्पलमाला : ७८ निक्कमु दापनेल ? धरणीसुरनंदन यिंकनीपयिं
जिक्के मनंबु नाकु ननु जित्तजु बारिकि नप्पगिंचेदो !
चोक्कि मरंद मद्यमुल सूरेल बाटलु वाडुतंट्ल सों
पेक्किन यल्ल पूवुबोदरिंड्लनु गौगिट गारविंचेदो !

कंदपद्यमु : ७९ अनुटयु ब्रवरुंडिट्लनु,
वनजेक्षण ! यिट्लुवलुक वरुसये ? व्रतुलै
दिनमुलु गडपेड्डु विप्रुल
जनुने कामिंप ? मदि विचारमु वलदे ?

उत्पलमाला : ८० वेलिमियुन् सुरार्चनमु विप्रसपर्ययु जिक्के; भुक्तिकिन्
वेळ यतिक्रमिंचे; जननीजनकुल् कडुवृद्धु लाकटन्

७३ हे द्वितीय कामदेव, हे ब्राह्मण, तुम मेरे घर अतिथि बन कर आए हो इसलिए थोड़ी देर बैठो, आराम करो। हमारा अतिथि सत्कार स्वीकार करके आप जा सकते हो।

७४ हे कुंदन जैसी देह रखने वाले, मध्याह्न काल की तीक्ष्ण गर्मी के कारण तुम्हारा मुख झुलस गया है। मोह उत्पन्न करने वाला तुम्हारा चेहरा कांति विहीन हो गया है। थोड़ी देर तुम्हारे यहां रहने से हमारा घर पवित्र हो जाएगा। तुम अपनी थकावट को दूर करके फिर जा सकते हो। वरूथिनी की बातें सुन कर प्रवर ने कहा—

७५ हे हंसगामिनी, तुम्हारे आतिथ्य की आवश्यकता नहीं। तुम से मैं बहुत प्रसन्न हूँ। इस समय मैं यहां ठहर नहीं सकता। तुम्हारे यहां आने या न आने में कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि तुम्हारे प्रेम से मैं बहुत आनन्दित हूँ। मुझे बहुत जल्दी अपने गांव जाना है, इसलिए कृपा करके रास्ता दिखा कर मुझे भेज दीजिए।

७६ हे साध्वी, तुम देव कन्या हो। तुम्हारा महत्व भी अधिक है। तुम यदि कोई कार्य करना चाहो तो अवश्य कर सकती हो। कोई कार्य भी तुम्हारी शक्ति से बाहर नहीं है, इसलिए घर पहुँचने का उपाय बतला कर मुझे अनुगृहीत करो।" प्रवर की बातें सुन कर वरूथिनी ने हंसते हुए कहा—

७७ हे ब्राह्मण, गाँव और घर का स्मरण बार बार क्यों करते हो ? क्या तुम्हारा गाँव इतना श्रेष्ठ है ? यहां की रत्नों से भरी कन्दराएँ, सुगंधित वृक्षों से भरे उद्यान, गंगा नदी के रेतीले टीले, प्रकाशमान लताओं से घिरी पर्णशालाएँ ये सब क्या तुम्हारी झोंपड़ियों से कम है ?

७८ हे विप्रवर, मैं बिना छिपाए अपने मन की बात कह रही हूँ। मैं तुम पर मोहित हो गई हूँ। क्या तुम मुझे कामदेव की शरण में छोड़ कर चले जाओगे या पुष्प-मंजरियों का मधुर मकरंद पीकर गुंजार करनेवाले उन्मत्त भ्रमरों से मन को अत्यन्त आह्लाद पैदा करनेवाले इन पुष्पित लतागृहों में सुख प्रदान करोगे ?'

७९ वरूथिनी की ये बातें सुन कर प्रवर ने कहा—'हे कमल नेत्रि इस प्रकार की बातें तुम्हारे लिए शोभा नहीं देतीं। उपवास आदि व्रतों से दिन बिताने वाले हम जैसे ब्राह्मणों पर मोहित होना कहां की बुद्धिमानी है ? तुम फिर अपनी कुशल बुद्धि से सोचो।

८० भद्रे, वैश्वदेव आदि की पूजा का समय हो गया है। भोजन का समय भी हो चला है। मेरे माता-पिता अत्यन्त वृद्ध हैं। वे क्षुधा के मारे विचलित हो

सोलुचु चिंततो नेदुरु सूचुचु नुंडुदु; राहितामि ने
दूलु समस्त धर्ममुलु दोय्यलि ? नेडिलु सेरकुंडिनन्

उत्पलमाला : ८१ नावुडु विन्नब्राटु वदनंबुन निंचुक दोप बल्के 'नो
भावजरूप ! यिट्टि येलप्रायमु वैदिक कर्म निष्ठलें
बोवग निंक भोगमुल बोंदुट येन्नडु ? यज्ञ कोटुलं
बावनु लौटकुन् फलमु माकवुगिळ्ळ सुखिंचुटे कदा !

सीसपद्यमु : ८२ सद्योविनिर्भिन्न सारंगनाभिका
हृतमै पिसाळिंचु मृगमदंबु
कसटुवो बीरेंड गरगि कर्रल नंटि
गम गम वलचु चोक्कपु जवाजि
पोरलेत्ति घनसार तरुवुल दनुदान
तोरगिन पच्चकप्पुरपु सिरमु
गोज्जंगि पूबोदल् गुरियंग बटिकंपु
दोनल निंडिन यट्टि तुहिन जलमु
विविध कुसुम कदंबंबु दिविज तरुज
मृदुल वसन फलासवामेय रत्न
भूषणंबुलु गल विंदु भोगपरुड
वयि रमिंपुमु ननुगूडि यनुदिनंबु

कंदपद्यमु ; ८३ अंधुनकु गोरये वेन्नेल ?
गंधर्वांगनल पोंदु गादनि संसा
राघुवुन गूले दकट ! दि
वांधमु वेलुगु गनि गोंदि नडगिन भंगिन्

उत्पलमाला : ८४ एन्नि भवंबुलं गलुगु निक्षुशरासन सायकव्यथा
खिन्नत वाडि वत्तलयि केल गपोलमु लूदि चूपुलन्
विन्नदनंबु तोपगनु वेदुरुनं बयिगालि सोकिनन्
वेन्नवलें गरंगु नलिवेणुल गौगिट जेर्चु भाग्यमुल्

कंदपद्यमु : ८५ कुशलतये व्रतमुलनगु
नशनायासमुन निंद्रिय निरोधमुनं
गृशुडवयि यात्म नलचुट
सशरीर स्वर्गसुखमु समकोनियुंडन्

रहे होंगे। वे अत्यन्त दुःख से मेरी प्रतीक्षा करते होंगे। मैं भी याज्ञिक हूँ। यदि मैं इस दिन घर न पहुँचा तो मेरे समस्त कार्य चौपट हो जाएँगे।

८१ प्रवर के वचन सुन कर वरूथिनी ने कहा—'हे भूसुर, सुन्दरता से पूर्ण इस अल्पायु में ही व्यर्थ के वैदिक कर्मों में पड़ कर अपने यौवन को क्यों खो रहे हो? तुम सुख का अनुभव कब करोगे? तुम जैसे अनेक लोग यज्ञ-यागादि करके इसलिए पवित्र होते हैं कि उन्हें हम जैसी अप्सराओं के मिलने का सुख प्राप्त हो।

८२ हे प्रवर, कस्तूरी, गुलाब जल, फूल, फल, कोमल वस्त्र, रत्नाभरण, सभी प्रकार के पेय आदि यहां भरपूर हैं। यहां सुख के सभी साधन हैं। इन सबसे मेरे साथ आनन्द का अनुभव करते रहो।

८३ अंधे के लिए जैसे चाँदनी व्यर्थ है उसी तरह सुख भोग न जाननेवाले तुमको हमारी बातें व्यर्थ लगती हैं। जैसे उल्लू किसी अंधेरे कोने में छिप कर प्रकाश-का महत्व नहीं जान पाता वैसे ही तुम हम जैसी गंधर्व स्त्रियों का सम्पर्क खोकर अपने पारिवारिक जीवन के कुँए में गिरना चाहते हो? क्या यह तुम्हारे लिए उचित है?

८४ यदि किसी पुरुष पर मोहित होकर कोई नारी उसके लिए कृश गात्री हो सदा चिंतित रहती है, उसको पाने की लालसा के कारण उससे प्रेम की भिक्षा मांगती है तथा पुरुष के रूप को देख कर उसकी प्रेम-वायु लगने से नारी सरलता से पुरुष की वशवर्तिनी होकर आनंद पाना चाहती है, परन्तु ऐसी स्त्रियों को सुखी बनाने का भाग्य अनेक पुरुषों को जन्म जन्मान्तर में भी प्राप्त नहीं होता।

८५ इस मानव देह के त्यागने पर पुण्य कर्मों के फल स्वरूप जो स्वर्ग-सुख प्राप्त होता है वह तुम्हें इस देह के रहते हुए ही अनायास प्राप्त है। ऐसी स्थिति में तुम व्यर्थ ही व्रतादि कर्मों से क्यों अपने देह को कष्ट दे रहे हो? यह कोई बुद्धिमानी नहीं है?

गीतपद्यमु : ८६ अनिन ब्रवरुंडु 'नीवन्न यर्थ मेल्ल
निजमु कागुकुडैन वानिकि; नकामु
डिदि गणिंचुने ? जलजाक्षि येरिंगितेनि
नागर मार्गंबु जूपि पुण्यमुन बोम्मु

कंदपद्यमु ; ८७ ब्राह्मणु डिंद्रिय वशगति
जिह्वा चरणैक निपुण चित्तज निचिता
जिह्मगमुल पालै चेडु
ब्रह्मानं 'दाधि राज्य पदवी च्युतुडै'

गद्यमु : ८८ अनिन नत्तेरव यक्करिकरि पलुकुल कुलिकि गारिगरि गरव गरकारिं जेरकुविलुकाडु परगिंचु विरिदम्मि गोरकुल जुरुकु चुरुक्कुनं गाडिन गूडं गोरलि, परिणत विविध तरु जनित मधुर मधुरसं बानु मदंबु नदटुनं जिदिमिन नेरुंगक मदन हरुनैद जदुरुनं गदिय गमकिंचु तिरुमुनं गोमिरे प्रायंपु मदंबु ननु ननन्य कन्या सामान्य लावण्य रेखा मदंबुननु नोंटि पाटुनं गंटिकिं ब्रियुंडै तंगेटि जुंटि च्चदंबुनं गोंटु दनं बेरुगक कुरुंगट नुन्न यम्महीसुरवर कुमारु तारुण्य मौग्ध्यंबुल जेसि तन वैदग्ध्यंबु मेरय गलिगे ननि पल्लविंचु नुल्लंबु नुल्लासंबुनं गदुरु मदंबुन नोसरिन्चुक, चंचल दृगंचल प्रभ लतनि मुखां-बुजंबुनंबोलय, वलय मणिगणच्छाया कलापंबुलुप्परं वेगय गोप्पु चक्कनजेक्कुनु, जक्कव गिब्बलुन्बोनि गब्बि गुब्बलन् जोब्बिलु कुंकुम रसंबुनन् बंकिलंबुलगु हार मुक्ता तारकंबुल नवकोरकंबुलन् गीरि तीरुवडंजेयुचु बनीत वनतरु कुसुम केसरंबुलु राल्चुनेपंबुनन् बय्येद विदिल्चि चक्क सवरिंचुचु, नंततंबोलयु चेलुलन् दलचूपक युंड दत्तरंबुनन् जेसि बोममुडि पाटुतो मगिडि मगिडि चूचुचु जिडिमुडि पाटुचूपुल नंकुरिंचु जंकेनल वारिंचुचुन्, जेरि यिट्लनिये ।

शार्दूलविक्रीडितम् : ८९ एंदे डेंदमु गंदलिंचु रहिचे नेकाग्रतन् निर्वृतिं
जेंदु गुंभ गत प्रदीप कलिका श्री दोप नेंदेंदु बो
केंदे निंद्रियमुल् सुखिंच गनु नायिंपे परब्रह्म 'मा
नन्दों ब्रह्म यटन्न प्राजदुवु नंतर्बुद्धिनूहिंपुमा !

गीतपद्यमु : ९० अनुचु दन्नोड बरचु नय्यमरकांत
तत्तरमु जूचि यात्म नतंडु दनकु

८६ हे वरूथिनी, तुमने जो कुछ भी कहा वह सब विषयी का धर्म हो सकता है लेकिन जो उसकी अपेक्षा ही नहीं करता उसके लिए यह सब किस काम का है इस लिए तुम व्यर्थ ही समय मत खोओ। यदि तुम्हें मेरे घर का मार्ग मालूम है तो बताओ अन्यथा चुप चाप जाने के लिए अनुमति दो।

८७ यदि कोई ब्राह्मण विषय भोग चाहता है तो उसे स्वर्ग प्राप्त नहीं हो सकता। वह भ्रष्ट समझा जाता है।

८८ प्रवर के इन कठिन वचनों को सुन कर वरूथिनी अपने केशों की खुली हुई गांठ को ठीक करती, मोतियों के हार में नक्षत्र जैसे मोतियों को नखों ठीक करती, अपने ऊपर गिरे हुए कानन-पुष्पों को झाड़ने के बहाने अंचल को झटकती, सहेलियों को वहीं रोक प्रवर के पास पहुँची। उसने कहा—

८९ वेद इस बात की घोषणा कर रहे हैं कि जिस विषय पर इन्द्रिएँ आदि निश्चल हो कर विकास तथा शान्ति प्राप्त करके आनन्द का अनुभव करेंगी उस विषय से प्राप्त होने वाला आनन्द ही परब्रह्म है। उन स्मृतियों के माने तुम अपने में ही विचार करो। उस प्रकार का ब्रह्मानन्द तुम्हारे सामने प्रस्तुत है। तुम पीछे क्यों हटते हो ?

९० वरूथिनी अपने को और अपने साथ प्रवर को ले डूबने के लिए जो बातें कर रही थी उससे उसकी आतुरता प्रकट हो रही थी। इस आतरता से प्रवर लज्जित

सिग्गु वेगट्टनु ब्रोडम निस्पृहत देलुपु
नोक्क चिरु नव्वु नव्वि यय्युविद कनिये

शार्दूलविक्रीडितम् : ६१ ई पांडित्यमु नीकुदक्क मरि येंदे गंटिमें ? कामशा
स्त्रोपाध्यायिवि ना वचिंचेदवु मे लोहो ! त्रयीधर्ममु
ल्पापंबुल् रति पुएयमंचु निकनेला तर्कमुल् मोत्तल
द्दमी पाथ्यागन सूत्रपंक्ति किवि पो मी संप्रदायार्थमुल्

मत्तेभविक्रीडितम् : ६२ तरुणी ! रेपुनु मापु हव्यमुलचेतंदृतुडौ वह्निस
त्करूणा दृष्टिनोसंगु सौख्यमु लेरुंगन् शक्यमेनीकु; ना
करणुल् दर्भलु नग्नुलुं ब्रियमुलै नट्लन्यमुल् गा; वोडल्
तिरमे ? चेप्पकु मिदि तुच्छ सुखमुल् मीसालपै तेनियल्

चंपकमाला : ६३ अनुटयु माटलेक हृदयाब्जमु जल्लन मोमु वेल्लनै
कनलुचु नीरुदेरु तेलिगन्नुल नातनि बुल्कुपुलकुनं
गनुगोनि माटलं दोदवु गद्गदिकं दल यूचि यक्कटा !
वनित तनंत दा वलचि वचिन जुल्कन गादे येरिकिन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ६४ वेतलं बेट्टकु मिंकनन्ननुचु नीवी वंध मूडन् रयो
ध्दाति नूपुल् निगुडन्, वडिन् विरुलु चिंदं, गोप्पुवीडं दनू
लत तोड्तो बुलकिंपगा ननुनयालापतिदीनास्य यै
रतिसंरंभमु मीर निर्जरवधूरत्नंबु पैपाटुनन्

शार्दूलविक्रीडितम् : ६५ प्रांचद्भूषण बाहुमूलरुचितो बालिंड्लु पोंगारि पै
यंचुल् मोवग गैगिलिंचि यधरं बासिंप 'हा श्रीहरी !'
यंचुंब्राह्मणु डोरमोमिडि तदीयांसद्वयंबंटि पो
म्मंचुनद्रोचे; गलंचुने सतुल मायल् धीर चित्तंबुलन्

कंदपद्यमु : ६६ त्रोपु वडि निलिचि घनल
ज्जा परवश यगुचु गोप्पु सवरिंचि योडल्
दीपिंप नतनि जुरचुर
गोपन वीद्दिंचि क्रेट्टु कोनुचुं बलिकेन्

उत्पलमाला : ६७ पाटुन किंतु लोर्तुरे कृपा रहितात्मक ! नीवु त्रोव नि
च्चोट भवन्नखांकुरमु सोके कनुंगोनु मंचु जूपि य

हो गया और प्रवर ने उदासीनता एवं विरक्ति को प्रकट करनेवाली मुस्कुराहट से पूर्ण प्रत्युत्तर इस प्रकार दिया—

९१ यह शिक्षा केवल तुम्हारे लिए ही है। तुम कामशास्त्र का अध्ययन की हुई हो। वेद में बताए हुए धर्म-मार्ग को पाप तथा स्त्री-पुरुष गमन को पुण्य कार्य बतला रही हो। खूब है! तुम जिस परम्परा को मानती हो उसमें मोक्ष मार्ग को बतलाने वाले वेदमन्त्रों का संभवतः यही अर्थ है।

९२ हे कमलाक्षि, सुबह और शाम होम-द्रव्यों से तृप्त हो कर अग्निदेव दया करके जो सुख प्रदान करते हैं उनकी महत्ता का वर्णन हम कहाँ तक करें? मेरे लिए तो अरणि, कुश, अग्निहोत्र आदि ही अत्यन्त प्रिय है, शेष सब तुच्छ हैं। हमारा यह शरीर शाश्वत है? इस तरह के अल्प सुखों का उपदेश मत दो। इनसे केवल तात्कालिक सुख प्राप्त होता है।

९३ प्रवर की इन बातों को सुन कर वरूथिनी उत्तर न दे सकी। उसका मन व्याकुल हो गया। उसका चेहरा पीला पड़ गया। दुःख के मारे उसके नेत्रों में आँसू आ गए। पलकों को मारते हुए गद्-गद् कंठ हो कर वरूथिनी ने कहा—यदि नारी अपने आप किसी पर मोहित हो जाती है तो प्रायः उसका तिरस्कार ही होता है!

९४ हे प्रवर! मुझे मत सताओ। मैं सहन नहीं कर सकती हूँ। वरूथिनी यह बात कहती ही रही तो उसके मन में जो मिलन लालसा थी उसकी अतिशयता के कारण वरूथिनी का नीवी-बंध ढीला हो गया। वह सिसकियाँ लेने लगी। वेणी से फूल गिरने लगे। वेणी का बन्धन ढीला हो गया। उसकी लता जैसी देह पुलकित हो गई और वह खिन्न वदना अत्यन्त दीनता के साथ संभोग कामना के बढ़ने पर प्रवर पर गिर गई।

९५ अत्यन्त मूल्यवान आभूषणों से प्रकाशित होनेवाली उस नारी ने जिसके स्तन उमटे हुए थे, अपने बाहुओं को फैला कर प्रवर का आलिंगन किया और उसके अधरों का पान करना ही चाहती थी कि 'राम! राम!!' कहते हुए प्रवर ने अपने मुँह को मोड़ लिया तथा उसकी भुजाओं को पकड़ कर डाँटते हुए उसे धक्का देकर परे हटा दिया। कहीं स्त्रियों का माया जाल जितेन्द्रियों को फँसा सकता है?

९६ प्रवर के ढकेलने पर वह कुछ हट कर खड़ी हो गई। वेणी-बंध कर ठीक करते समय आँचल हटा कर अपना शरीर दिखाती हुई अपमानिता और लज्जित वरूथिनी ने तीक्ष्ण दृष्टि से प्रवर को देखा। बोली—

९७ हे निर्दय, ढकेलने से होनेवाली पीड़ा का अनुभव क्या नारियाँ सहन कर सकती हैं, यह सोचे बिना ही तुमने ढकेल दिया। तुम्हारे ढकेलते समय तुम्हारे

प्पाटलगंधि वेदननेपं ब्रिडि येड्चे गल स्वनंबु तो
मीटिन विच्चु गुब्ब चनु मिट्टल नश्रुल चिंदु वंदगन्

कंदपद्यमु : ९८ ई विधमुन नति करुणमु
गा वनरुहनेत्र कन्नुगव धवल रुचुल्
काविगोन नेड्चि वेंडियु
ना विप्रकुमारु जूचि यलमट बल्केन्

उत्पलमाला : ९९ चेसिति जन्नमुल् दपमु चेसिति नंटि; दया विहीनतं
जेसिन पुण्यमुल् फलमु सेंदुने ? पुण्यमु लेन्नियेनियु
जेसिन वानि सद्गतिये चेकुरु भूतदयार्द्र बुद्धि को
भूसुरवर्य ! यिंत दलपोयवु; नी चदुवेल चेप्पुमा ?

सीसपद्यमु : १०० वेलिवेट्टिरे बाडबुलु पराशुरु बट्टि
दाशकन्या केलि तप्पु जेसि ?
कुलमुलो वन्ने तक्कुवयय्येने गाधि
पट्टिकि मेनक चुट्टरिकमु ?
ननुपुकाडै वेल्गु नागवासमु गूडि
महिम गोल्पोयने मांदकर्णि ?
स्वाराज्य मेलंग नीरैरे सुर लह
ल्या जारुडैन जंभासूरारि ?
वारि कंटेनु नी महत्त्वंबु घनमे ?
पवन पर्णांबु भक्षुलै नवसि यिनुप
कच्चाडाल् कट्टुकोनु मुनि मृच्चुलेल्ल
दामरसनेत्रलिड्ल बंदालु गारे ?

गीतपद्यमु : १०१ अनिन नेमियु ननक नव्वनज गंधि
मेनि जव्वादि पस कदं बिंचु नोडलु
गडिगि कोनि वार्चि प्रवरुंडु गार्हपत्य
वह्नि निट्लनि पोगडे भावमुन दलिचि

मत्तेभविक्रीडितं : १०२ दिविषद्वर्गमु नीमुखंबुनन तृप्तिं गांचु; निन्नीशुगा
स्तवमुल् सेयु श्रुतुल्; समस्त जगदंतर्यामियुन् नीव; या
हवनीयंबुनु दक्षिणाग्नियुनु नीयंदुद्भविंचुं; ग्रतू
त्सव संधायक ! नन्नुगाव गदवे स्वाहा वधू वल्लभा !

नखों से मेरी देह पर घाव हो गया। स्तन पर अंकित नख-चिन्ह दिखा कर उस पीड़ा को न सहन करने का अभिनय करते हुए वरूथिनी कर्ण मधुर कण्ठ से रोई।

९८ कमलनेत्री वरूथिनी इस तरह रुदन करने लगी कि देखनेवालों को उस पर दया उत्पन्न हो जाती। उसकी दोनों आँखों की शुभ्र ज्योति रोने से लाल हो गई और उसने विप्र कुमार से कहा—

९९ हे प्रवर आपके कथन से ज्ञात होता है कि आपने तप आदि किया है परंतु आपके इन सब के करने से क्या लाभ ? भूतदया के अभाव में ये सब निष्फल ही हैं। असंख्य पुण्य कार्य करके जो स्वर्ग पाया जाता है, वह बिना पुण्य कार्य किए केवल भूतदया से मिल सकता है। इस विषय परा जरा भी विचार न करनेवाला आपका पाण्डित्य किस काम का ?

१०० दासकन्या के साथ पराशर का अनुचित सम्बन्ध देख कर क्या ब्राह्मणों ने उन्हें अपने समूह से अलग कर दिया था ? विश्वामित्र एवं अप्सरा मेनका उनके वंश में क्या अगौरव का कारण बनीं ?

तपस्वी मान्दकर्णी अप्सराओं के साथ रहने से क्या अपनी महत्ता खो सके ? अहल्या को भ्रष्ट करनेवाले सुरराज को देवताओं ने स्वर्ग का शासन करने से मना किया ? इन सब लोगों के महत्व से भी क्या तुम्हारी महत्ता बड़ी है ? पवन-पत्ता और पानी का आहार करनेवाले लोहे का कोपीन धारण कर अपने को जितेंद्रिय माननेवाले तपस्वी क्या सुन्दर स्त्रियों के यहाँ बन्दी नहीं बने ?

१०१ वरूथिनी की बातें सुन कर प्रवर ने उसका उत्तर नहीं दिया। वरूथिनी के शरीर स्पर्श के कारण प्रवर के शरीर में जो सुगंधित पदार्थ लगे हुए थे उन सब को धो-धाकर उसने आचमन किया। तदनन्तर प्रतिदिन की तरह गार्हपत्य अग्नि का ध्यान कर उसने इस प्रकार प्रार्थना की।

१०२ हे यज्ञ कार्य के साधक, हे स्वाहादेवी के प्रियतम, देवगण आपके मुख से ही तृप्ति पाते हैं। वेद आपको महान् तेजोमूर्त्ति मान ईश्वर के रूप में आपकी स्तुति करते हैं। समस्त लोकों के आप अन्तर्यामी हैं। आवहनीय दक्षिणाग्नि आदि आप में से ही जन्म लेती हैं। इसलिए अपने भक्त 'मुझे' इस विपत्ति से बचाइए।

उत्पलमाला : १०३ दानजपाग्निहोत्र परतंत्रुडनेनि भवत्पदांबुज
ध्यान रतुंडनेनि बरदार धनादुल गोरनेनि स
न्मानमुतोंड नन्नु सदनंबुन जेर्पु मिंनुड्डु पश्चिमां
भोनिधि यंदु गृंक कय मुन्न रयंबुन हव्यवाहना !

गद्य : १०४ अनि संस्तुतिंचिन नाग्निदेवुं डम्महीदेवु देहंबुन सन्निहितुं डगुटयु नम्महा भागुंडु गंडुमीरि पोडपुगोड नखिल संध्याराग प्रभा मंडलां तर्गतुडगु पुंडरीक वनबंधुडुनुंबोले संतप्त कनक द्रव धारा गौरंबगु तनुच्छाया पूरंबुन नक्कान वेलिगिंचुचु निज गमन निरोधिनि यगु नव्वरूधिनि हृदय कंजंबुन रंजिल्लु नमंदानुराग रस मकरंदंबु नंदद पोंग जेयुयु बावक प्रसाद लब्धंबगु हयंबु नेक्कि पवन जवनंबुन निज मंदिरम्बु न करिगि नित्य कृत्य सत्कर्म कलापंबुलु निर्वर्तिंचे ।

१०३ हे अग्निदेव यदि मैं अग्निहोत्र करने में आसक्ति रखता हूँ, आपके पाद पद्मों के ध्यान में लगा रहता हूँ, मैं दूसरों की सम्पत्ति व नारी की कामना नहीं करता हूँ तो मुझे सूर्यास्त से पहले सम्मान के साथ वरूथिनी से मेरा मेरे गौरव की रक्षा करके मुझे अपने घर पर पहुँचा दीजिए।

१०४ इस प्रकार की प्रार्थना करने पर अग्निदेव ने उसके शरीर में प्रवेश किया। तब वह अत्यन्त तेजपूर्ण हो गया। उसने अपनी कान्ति से सारे जंगल को प्रकाशित कर दिया। उस कान्ति के बल पर वरूथिनी के रोकने पर भी न रुक कर उसके मन में प्रेम को अत्यधिक बढ़ा कर अग्निदेव की कृपा से प्राप्त अश्व पर चढ़ कर वायु वेग से अपने घर पर पहुँच गए। वहाँ स्नान संध्या वन्दन आदि दैनिक कृत्य समाप्त कर प्रवर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

वेमन पद्यमुलु

आटवेलदिगीतम् : १ आत्मशुद्धिलेनि याचारमदियेल ?
भांडशुद्धिलेनि पाकमेल ?
चित्तशुद्धिलेनि शिवपूज लेलरा ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, २ निन्नु जूचेनेनि तन्नु ता मरचुनु
तन्नु जूचेनेनि निन्नु मरचु
ने विधमुन जनुडु नेरुगु निन्ननु दन्नु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ३ वेरुपुरुगु चेरि वृत्तंबु जेरुचुनु
चीडपुरुगु चेरि चेट्टु जेरुचु
कुत्सितिंडु चेरि गुणवंतु जेरुचुरा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ४ उप्पु कप्पुरंबु नोक्क पोलिकनुंडु
चूड जूड रुचुल जाड वेरु;
पुरुषुलंदु पुण्य पुरुषुलु वेरया
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ५ अनुवुगानि चोट नधिकुल मनरादु
कोंचेमुंडु टेल्ल कोदुव गादु
कोंड यद्दमंदु कोंचमै युंडदा ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ६ तनमदि कपटमु गलिगिन
तनवलेने कपटमुंडु तग जीवुलकुन्
तनमदि कपटमु विडिच्चिन
तनकेव्वड्डु कपटि लेड्डु धरलो वेम !

योगी वेमन्ना के पद्य

(वेमना ने गुरुतुल्य अभिराम के उपदेशों को पद्यबद्ध किया है, इसीलिए प्रत्येक पद्य के चौथे चरण में इस बात का उल्लेख है कि अभिराम वेमना को सम्बोधित कर रहे हैं।)

१ आत्म शुद्धि के बिना आचार का क्या महत्व है? मैले पात्र में भोजन बनाने से वह खाने योग्य नहीं बनता। उसी प्रकार चित्त की निर्मलता के बिना शिव की पूजा व्यर्थ है। अभिराम कहते हैं, वेमना सुनो।

२ हे भगवन्, यदि मनुष्य तुम्हें पाने की चेष्टा करे और अपने प्रयत्न में सफल हो जाए तो वह स्वयं को भूल जाएगा। यदि मनुष्य अपने लौकिक सुखों की प्राप्ति में ही लग जाएगा तो तुम्हें भूल जाएगा। यह मालूम नहीं होता कि मनुष्य किस प्रकार स्वयं को तथा ईश्वर को पहचान सकता है।

३ किसी वृक्ष की जड़ में पहुँच कर कीड़ा उस वृक्ष को ही बरबाद कर देता है। वह कीड़ा पौधों का रस चूस कर उसे नष्ट कर देता है। इसी तरह दुष्ट आदमी सज्जन के पास पहुँच कर उसीको बिगाड़ देता है।

४ लवण और कपूर देखने में एक ही से लगते हैं, परन्तु उनका स्वाद एक दूसरे से बिलकुल भिन्न होता है। वैसे ही सभी पुरुष एक ही जैसे दिखाई देते हैं किन्तु उनमें पुण्यात्मा विशेषता रखता है।

५ जो स्थान हमारे अनुकूल नहीं है वहाँ हमें अपनी बड़ाई नहीं करनी चाहिए। अगर वहाँ हम विनम्र रहें तो हमारी इज्जत में कमी नहीं हो जाती। ठीक ही तो है कि बड़े से बड़ा पर्वत भी आइने में छोटा ही दिखाई देता है।

६ हे वेमा, यदि अपने मन में कपट है तो दूसरों में भी छल रहेगा ही। यदि हम अपने मन से कपट को दूर करते हैं तो इस पृथ्वी में हमें कपट-छल का सामना नहीं करना पड़ेगा।

आटवेलदिगीतम् : ७ चंपदगिन यट्टि शत्रुवु तनचेत
जिक्केनेनि, कीडु सेयरादु,
पोसगमेलु जेसि पोम्मनुटे चावु !
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ८ नीळ्ळलोन मोसलि निगिडि एनुगु बट्टु;
बैट कुक्कचेत भंग पडुनु;
स्थानबलिमि गानि तनबलिमि कादया;
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ९ कुलमुलो नोकंडु गुणवंतुडुंडेना
कुलमु वेलयु वानि गुणमुचेत,
वेलयु वनमुलोन मलयजंबुन्नट्लु
विश्वाभिराम विनुर वेम !

„ १० पंदि पिल्ल लीनु पदियुनैदिंटिनि;
कुंजरंबु यीनु कोदम नोकटि;
युत्तम-पुरुषुंडु योक्कडु जालडा ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ११ अल्पुडेपुडु बल्कु नाडंबरमु गानु;
सज्जनुंडु बलुकु चल्लगानु;
कंचु मोगिनट्लु कनकंबु मोगुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ १२ ओगुनोगु मेच्चु नोनरंग नज्ञानि
भाव मिच्च मेच्चु परम लुब्धु;
पंदि बुरद मेच्चु पन्नीरु मेच्चुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ १३ गंग पारुचुंडु, कदलनि गति तोड;
मुरिकि बारुचुंडु, म्रोत तोड;
दात योर्चिनट्लधमुडोर्वगा लेडु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

७ मारने योग्य शत्रु भी यदि हमें मिल जाता है तो उसकी बुराई नहीं करनी चाहिए बल्कि उसकी भलाई करके उसे विदा करना शत्रु के लिए मृत्यु-तुल्य है

८ जल में रहनेवाला मगर हाथी को भी पकड़ कर नष्ट कर सकता है, परन्तु वही मगर जल के बाहर एक कुत्ते से भी हार जाता है। यह सब अपने-अपने स्थान का बल है। वह अपना निजी बल नहीं है।

९ यदि वंश में एक ही गुणवान् रहता है तो उसके गुण के कारण सारे वंश की कीर्त्ति व्याप्त हो जाती है जैसे अनेक प्रकार के वृक्षों से भरे जंगल में चन्दन का एक वृक्ष अपनी सुगंधि को फैला देता है।

१० शूकरी एक साथ दस-पन्द्रह बच्चे-बच्चियों को जन्म देती है, परन्तु हथिनी एक ही सन्तान उत्पन्न करती है। उत्तम पुरुष एक ही पर्याप्त है।

११ दुर्जन आदमी सदा गप्पें हाँका करता है, सज्जन तो हमेशा मीठी बातें करता है। काँसे की तरह कनक बज नहीं सकता।

१२ नीच सदा दुष्ट की ही प्रशंसा करता है। लोभी आदमी भी मूर्ख को ही पसन्द करता है जैसे सूअर कीचड़ को ही पसन्द करता है, गुलाब के जल के महत्त्व को वह क्या जाने?

१३ पावन गंगा नदी मन्द गति से बहती है। उसके प्रवाह में किसी प्रकार की ध्वनि नहीं होती किन्तु नाले का गंदला पानी बहुत कोलाहल के साथ बहता है। इसी तरह दाता सहन कर लेता है किन्तु नीच आदमी धैर्य धारण नहीं कर सकता।

आटवेलदिगीतम् : १४ लो भवानि जंप लोकंबु लोपल
मंदुवलदु; वेरे मतमु गलदु;
पैंक मडुग, चाल भग्गुन पडि चच्चु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" १५ चमुरु गलुगु दिव्वे सरवितो मंडुनु,
चमुरु लेनि दिव्वे समसि पोवु;
तनुवु तीरेनेनिं तलपु तोडने तीरु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" १६ पाप मनग वेरे परदेशमुन लेदु
तनदु कर्ममुलनु दगिलि युंडु;
कर्मतंत्रि गाक, गनुकनि युंटोप्पु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" १७ वेळ्ळि वच्चुनाडु मळ्ळि पोये नाडु
वेंट रादु धनमु कोंट बोडु;
तानु येड बोनो धनमेड बोवुनो !
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" १८ इनुमु विरिगेनेनि यिनुमार मुम्मारु
काच्चि यतक नेर्चु कम्मरीडु;
मनसु विरिगेनेनि मरि यंटनेर्चुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : १९ अज्ञानमे शूद्रत्वमु;
सुज्ञानमे ब्रह्ममौट श्रुतुलनु विनरा
यज्ञानमुडिगि वाल्मिकि
सुज्ञानपु-ब्रह्ममोंदे जूडर वेमा !

आटवेलदिगीतम् : २० बोंदि येवरि सोम्मु पोषिंप पलुमारु !
प्राण मेवरि सोम्मु भक्तिसेय !
धनमु येवरि सोम्मु ! धर्ममे तन सोम्मु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

१४ लोभी मनुष्य को मारने के लिए संसार में किसी प्रकार की औषधि आवश्यक नहीं। उसके लिए एक सुन्दर दवा है, लोभी से उसका धन माँगा जाए तो उसमें घबराहट पैदा होगी और वह शीघ्र ही जल-भुन कर मर जाएगा।

१५ तेल से भरा हुआ दीपक शान्त रहता है। यदि तेल समाप्त हो गया तो दीपक बुझ जाएगा। वैसे ही शरीर से आत्मा के कूच करते ही हमारी कामनाएँ भी समाप्त हो जाती हैं।

१६ पाप कहीं परदेश में नहीं रहता। अपने कर्मों में ही उसका निवास है। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह कर्म को पहचाने और कर्म करने से दूर रहे।

१७ मनुष्य जन्म के समय धन साथ नहीं लाता मृत्यु के बाद मनुष्य कहाँ जाएगा और उसके धन का क्या होगा?

१८ यदि लोहा टूट जाता है तो उसे दो तीन बार गरम करके लुहार जोड़ सकता है किन्तु मन टूट जाए तो फिर जोड़ना असम्भव है।

१९ वेद इस बात की घोषणा कर रहे हैं कि अज्ञान ही शूद्रता है और सुज्ञान ही ब्राह्मणत्व है। हे वेमा, वह सुज्ञानी वाल्मीकि शूद्र होते हुए भी अपने अज्ञान को दूर करने के कारण ब्राह्मणत्व को प्राप्त कर सका।

२० जिस शरीर का तुम पालन पोषण करते हो वह किसकी थाती है? यह शरीर किसका, यह प्राण किसका, यह धन धान्य भी किसका है? यह सब तुम्हारा नहीं है।

आटवेलदिगीतम् : २१ मेडिपंडु जूड मेलिमै युंडुनु;
पोट्ट विच्चि चूड पुरुगुलुंडु;
बेरुकुवानि मदिनि बिंकमीलागुरा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २२ कूलिनालि जेसि, गुल्लापु पनिजेसि;
तेच्चि पेट्ट यालु मेच्च नेर्चु;
लेमिजिक्कु विभुनि वेमारु दिट्टुनु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २३ वेर्रिवानिकैन वेषधारिकिनैन,
रोगिकैन परमयोगिकैन,
स्त्रील जूचिनपुडु चित्तंबुरंजिल्लु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २४ चित्तशुद्धि गलिगन चेसिन पुण्यंबु,
कोंचमैन नदियु कोदवगादु;
वित्तनंबु मर्रिवृक्षंबुनकु नेंत ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २५ गुणवतियगु युवति गृहमु चक्कग नुंडु
चीकटिंट दिव्वे चेलगु रीति;
देवियुन्न यिल्लु देवतार्चनगृहमु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २६ तल्लिदंड्रि मीद दयलेनि पुत्रुंडु
पुट्टनेमि ? वाडु गिट्टनेमि ?
पुट्टलोन चेदलु पुट्टदा गिट्टदा ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २७ अनग ननग राग मतिशयिल्लुचु नुंडु
तिनग तिनग वेमु तिय्य नुंडु
साधकमुन बनुलु समकूरु धरलोन,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

२१ अंजीर का फल देखने में स्वर्ण-सा दिखाई देता है। किन्तु यदि उस फल को तोड़ कर देखें तो हमें कीड़े दिखाई देंगे। वैसे ही सबसे अलग रहनेवाले व्यक्ति का मन कलुषित रहता है।

२२ यदि पति नौकरी या मज़दूरी करके कुछ कमाएगा और पत्नी को सन्तुष्ट रखेगा तो वह उसकी प्रशंसा करती रहेगी। यदि पति किसी कारण अपने को कमाने में असमर्थ पाता है तो पत्नी उसे गालियाँ देने लगती है।

२३ चाहे मनुष्य पागल हो या दम्भी—चाहे रोगी या योगी, सुन्दर स्त्रियों को देखने पर सब का मन विचलित हो जाता है।

२४ जैसे वटवृक्ष का बीज छोटा होते हुए भी उससे महान वृक्ष निकलता है, उसी तरह शुद्ध हृदय से थोड़ा-सा पुण्य कार्य भी किया जाए तो उसका महत्व बहुत बढ़ जाता है।

२५ पतिव्रता नारी जिस घर में निवास करती है वह गृह भी प्रकाशित रहता है, जैसे अंधेरे घर में दीपक का प्रकाश फैल कर घर को कान्तिमान बना देता है। जिस घर में देवी रहेगी वह घर देवालय जैसा पवित्र स्थान बन जाएगा।

२६ जो पुत्र अपने माता-पिता के प्रति दया तथा भक्ति नहीं रखता उसका पैदा होना या न होना दोनों समान है; जैसे वल्मीकि में दीमक पैदा होती है और मर जाती है परन्तु उसका कोई महत्व नहीं रहता।

२७ आपस का संबंध बढ़ने पर प्रेम भी बढ़ता जाता है। नीम का पत्ता क्रमशः खाते रहने से मीठा लगता है वैसे ही साधना करते रहने से संसार में समस्त कार्य साध्य हो जाते हैं।

आटवेलदिगीतम् : २८ हृदयमंदुनुन्न ईशुनि देलियक,
शिलल केल्ल म्रोक्कु जीवुलार !
शिलल नेमि युंडु, जीवुलंदे काक ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ २९ गंगिगोवु पालु गंटेडैननु जालु
कडवेडैन नेमि खरमु पालु;
भक्ति गलुगु कूडु पट्टेडैननु जालु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ३० माट दिद्द वच्चु 'मरियेग्गु लेकुंड,
दिद्द वच्चु रायि तिन्नगानु;
मनसुदिद्दरादु महिनेंत वारिकि,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ३१ निन्नुजूचुचुंड निंडुनु तत्वंबु;
तन्नु जूचुचुंड तगुलु माय
निन्नु नेरिगिनपुडु तन्नु दानेरुगुनु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ३२ सज्जनमुल चेलिमि जालिंपगा रादु;
प्रकृति नेरुगकुन्न भक्तिलेदु
पलुवलेट्टि रीति भक्ति निल्पुदुरया ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

„ ३३ धनमु गूडबेट्टि धर्मंबु सेयक,
तानु दिनक लेस्स दाचु गाक,
तेनेनीग गूर्चि तेरवरिकियदा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ३४ इच्चे वारल संपद
हेच्चेदेकानि, लेमि येला कलुगुन् ?
अच्चेलम नीळ्लु चल्लिन
विच्चलविडि नूरुचुंडु, विनरा वेमा !

२८ हे लोगो, तुम लोग हृदयस्थ ईश्वर को अज्ञानता के कारण न पहचान कर शिलाओं की पूजा करते हो। शिलाओं में क्या रखा है? उसमें कुछ भी नहीं है।

२९ अच्छी गाय का दूध एक चम्मच भी काफ़ी है, परन्तु गधी का दूध एक घड़ा भर मिले तब भी व्यर्थ है। ऐसे ही भक्ति के साथ दिया हुआ अन्न का एक ग्रास भी पर्याप्त होता है।

३० भूल से निकले हुए वचनों का सुधार किया जा सकता है, धीरे धीरे पत्थर को भी इच्छानुसार अनेक रूपों में बदला जा सकता है, परन्तु किसी के मन को बदलना इस पृथ्वी में किसी के लिए भी संभव नहीं।

३१ हे भगवन्, सदैव तुम्हारी चिन्ता और तुम्हारे दर्शन की लालसा करते रहने से हमारे हृदय में तुमको पाने की इच्छा बढ़ती जाती है परन्तु जब हम अपने शरीर के सुखों पर ध्यान देते हैं तभी संसार के माया जाल में फँस जाते हैं इसलिए जब मनुष्य तुमको पहचानता है तभी वह अपने आपको पहचान सकता है।

३२ मनुष्य को सज्जनों की मैत्री नहीं छोड़नी चाहिए। यदि मनुष्य किसी का स्वभाव नहीं पहचानता तो उसके प्रति भक्ति किस तरह की जा सकती है? पापी की भक्ति लोग किस तरह कर सकते हैं।

३३ कंजूस आदमी धन का संग्रह करता है, परन्तु वह न तो दान करता है और न स्वयं खाता है, जैसे मधुमक्खी शहद का संचय करती है परन्तु स्वयं नहीं खाती।

३४ दान करनेवाले दाता की संपत्ति बढ़ती जाती है, घटती नहीं; जैसे स्रोत का जल निकालते जाने से और भी बढ़ता है।

आटवेलदिगीतम् : ३५ पाल गलिय नीरु पलेयै राजिल्लु,
नदियु सांब्रयोग्यमैन यट्लु,
साधु सज्जनमुल सांगत्यमुल चेत,
मूढ जनुडु मुक्ति मोनयु वेम !

,, ३६ परग रातिगुंडु पगल गोट्टग वच्चु,
कोंडलन्नि पिंडि गोट्टवच्चु,
कठिनचित्तु मनसु करिगिंप गारादु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ३७ अंत कोरत दीरि यतिशय कामुडै
निन्नु नम्मि चाल निष्ट तोड,
निन्नु गोल्व मुक्ति निश्चयमुग गल्गु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ३८ धनमेच्चिन मनमेच्चुनु,
मनमेच्चिन दुर्गुणंबु मानक येच्चुन्;
धनमुडिगिन मनमुडुगुनु;
मनमुडिगिन दुर्गुणंबु मानुनु वेमा !

,, ३९ विन वले नेव्वरु चेप्पिन;
विनिनंतने तमकपडक विवरिंपवलेन्
विनि कनि विवरमु देलिसिन
मनुजुडुपो नीतिपरुडु, महिलो वेमा !

आटवेलदिगीतम् : ४० एंड वेळ्ळ चीकटेकमै युन्नट्लु
निंडु कुंड नीरु निलिच्चि नट्लु,
दंडिनि बरमात्म तत्वंबु देलियरा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ४१ एंडिन मानोकटडविनि
नुंडिननंदग्नि पुट्टि यूड्चुनु चेट्लन्;
दंडि गल वंश मेल्लनु
चंडालुडोकंडु पुट्टि चेडपुनु वेमा !

३५ जो जल दूध में मिल जाता है वह दूध ही कहलाता है; जैसे नदी का पानी समुद्र में मिल जाता है तो वह समुद्र ही कहलाता है। इसी तरह साधु-सज्जनों की संगति के फल स्वरूप मूर्ख व्यक्ति भी मुक्ति पाता है।

३६ लोहे से चट्टान भी फोड़ी जा सकती है। पर्वतों को प्रयत्न से चूर्ण किया जा सकता है, परन्तु मूर्ख के मन को बदलना या उसे दयार्द्र करना संभव नहीं है।

३७ हे भगवन् भवसागर की कामनाओं से मुक्त होकर, तुमको पाने की उत्कट इच्छा से तुम पर भरोसा रख कर जो आदमी बड़ी निष्ठा के साथ तुम्हारी उपासना करता है, वह अवश्य मुक्ति प्राप्त करता है।

३८ धन की वृद्धि से मन की कामनाएँ भी बढ़ती जाती हैं। कामनाओं की अधिकता से सहज ही दुर्गुण बढ़ते जाते हैं परन्तु धन के घटते रहने से कामनाएँ भी कम होती जाती हैं। कामनाओं के कम हो जाने पर दुर्गुण भी दूर होते हैं।

३९ किसी के कुछ कहने से उस पर तुरन्त क्रुद्ध न होकर उसकी सचाई पर विचार करना चाहिए। इस प्रकार जो आदमी सुन व देख कर वास्तविकता को पहचानता है वही मनुष्य इस पृथ्वी में सच्चे अर्थों में नीतिज्ञ है।

४० धूप के समय जैसे अंधकार धूप में मिला रहता है, जैसे पानी गढ़े में भरा हुआ है वैसे ही मनुष्य के हृदय में परमात्मा पूर्ण रूप से विद्यमान है। परन्तु मनुष्य उस तत्व को समझता नहीं है।

४१ हे वेमा, जंगल में यदि कहीं सूखा हुआ पेड़ रहेगा तो धीरे-धीरे उसमें आग पैदा होगी और वह सभी पेड़ों को जला देगी। वैसे ही उत्तम वंश में एक दुष्ट के पैदा होने से उस वंश की कीर्त्ति मिट्टी में मिल जाती है।

आटवेलदिगीतम् : ४२ इंटिलोनि धनुमु "इदि नादि" यनुचुनु,
मंटि लोन दाचु, मंकु जीवि !
कोंट बोड्डु वेंट गुल्ल कासुनुराडु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ४३ मिरपगिंज जूड मीद नल्लगनुंडु;
कोरिकिचूड, लोन चुरुकुमनुनु;
सज्जनु लगुवारि सारमिट्लुंडुनु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ४४ गुरुवु लेक विद्य गुरुतुगा दोरकदु,
नृपतिलेक भूमि तृप्ति गादु;
गुरुवु विद्य लेक गुरुतर द्रिनुडौने ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ४५ अल्प सुखमुलेल्ल नाशिंचु मनुजुंडु,
बहुळ दुःखमुलनु बाध पडुनु;
पर सुखंबुनोंदि ब्रतुकंग नेरडु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ४६ धर्ममरसि पूनि धर्मराजादुलु
निर्मलपु प्रौढि निल्पु कोनिरि;
धर्ममे नृपुलकु तारक योगंबु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ४७ विनु, विवेकम नेडु विंत गोड्डुलि चेत,
नलय विद्य यनेडु नडवि नरिकि,
तेलिवि यनेडु गोप्प दीपंबु चेपट्टि,
मुक्तिजूड वच्चु, मोनसि वेम !

कंदपद्यमु : ४८ एक्कडि सुतुले क्कडि सतु
लेक्कडि बंधुवुलु, सखुलु नेक्कडि भृत्युल् ?
डोक्कु ब्रडि पोवु वेळल,
चक्कटिकिनि नेवरु रारू, सहजमु वेमा !

४२ घर की सम्पत्ति के बँटवारे के समय मूर्ख लोग आपस में झगड़ा करते हैं और कुछ लोग स्वार्थवश धन को मिट्टी में गाड़ कर छिपा देते हैं; परन्तु मृत्यु के समय एक पाई भी साथ नहीं जाती ।

४३ काली मिर्च ऊपर से देखने में तो काली दिखाई देती है लेकिन चख कर देखने से जीभ जलती है वैसे ही ऊपर से देखने पर हमें सज्जनों का महत्व ज्ञात नहीं होता उनसे सम्पर्क होने पर ही उनका महत्व जान सकते हैं ।

४४ गुरु के अभाव में समुचित शिक्षा प्राप्त नहीं हो सकती, वैसे ही राजा के बिना पृथ्वी का शासन व अन्य कार्य सन्तोषपूर्वक नहीं चल सकता । ऐसी स्थिति में गुरु शिक्षा के बिना कोई भी महान ज्ञाता नहीं बन सकता ।

४५ मनुष्य अत्यन्त अल्प सुख के लोभ में पड़ कर अनेक प्रकार के दुःखों से पीड़ित होता जा रहा है परन्तु वह शाश्वत सुख पाकर सदा जीवित रहना नहीं चाहता ।

४६ धर्म को पहचान कर श्रद्धा के साथ धर्मराज युधिष्ठिर आदि ने अपनी निर्मल कीर्त्ति को धर्म-पालन से स्थिर रखा । राजाओं के लिए धर्म ही एकमात्र तारक मन्त्र है ।

४७ हे वेमा सुनो ! विवेक नामक विचित्र कुल्हाड़ी से अज्ञान रूपी जंगल को काट, ज्ञान रूपी बड़ा दीपक लेकर मुक्ति को देखा जा सकता है ।

४८ हे वेमा, मनुष्य के मरते समय पत्नी, पुत्र, मित्र, बन्धु, सेवक ये सब किसी काम में नहीं आते । सब हमारे साथ भी नहीं आते ।

आटवेलदिगीतम् : ४६ पाल नीरु क्रममु परग हंस येरुंगु;
नीरु पाल क्रममु नेमलि केल ?
अज्ञानुडैन वाडलशिवुनेरुगुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ५० कन्नुलंदु मदमु गप्पि कानरु गानि,
निरुडु मुंदटेडु, निन्न मोन्न,
दग्धुलैन वारु तमकंटे तक्कुवा ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु ; ५१ दीपंबु लेनिर्थिटनु,
रूपंबुल देलिय लेरु, रूढिग तमलो;
दीपमगु तोलिवि गलिगियु,
पापंबुल मरुगु त्रोव बड्डुदुरु वेमा !

आटवेलदिगीतम् : ५२ एरु दाटि मेट्ट केगिन पुरुषुंडु
पुट्टि सरकुगोनक पोयिनट्लु
योग पुरुषुडट्ल योडलु पाटिंचुरा ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ५३ मंटि कुंड वंटि माय शरीरंबु;
चच्चुनेन्नडैनजावदात्म;
घटमुलेन्नियैन गगनंबु येकमे ?
विश्वादाभिराम विनुर वेम !

,, ५४ माटलाडवच्चु मनसु निल्पगरादु;
तेलुप वच्चु दन्नु देलियरादु;
सुरिय बट्टवच्चु शूरुडु गारादु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ५५ गुरुडनगा परमात्मुडु
परगंगा शिष्युडनग पटु जीवुडगुन
गुरुशिष्य जीवसंपद
गुरुतरमुग गूर्चु नतडु गुरुवगु वेमा !

४६ दूध और पानी का भेद हंस ही जानता है। पानी और दूध का भेद मयूर कैसे जान सकता है? इसी तरह अज्ञानी परमात्मा को कैसे पहचान सकता है?

५० कुछ लोग आंखों में चर्बी छा जाने के कारण घमण्ड के मारे संसार को पहिचानते नहीं। परन्तु गत वर्ष तथा उससे पहले और कल-परसों जो व्यक्ति चल बसे क्या वे इनसे कम थे?

५१ हे वेमा, जिस घर में दिया नहीं रहता है, उस घर में एक दूसरे को ठीक तरह से नहीं पहचाना जा सकता परन्तु मनुष्य दीपक रूपी ज्ञान के होते हुए भी पाप रूपी पंकिल मार्ग में पड़ जाता है।

५२ जो आदमी नदी पार करके उस पार पहुँच जाता है, वह नाव की परवाह नहीं करता। वैसे ही योगी पुरुष अपने शरीर की क्या परवाह करेंगे?

५३ यह हमारा शरीर मिट्टी के बरतनों की तरह है। यह शरीर नष्ट हो सकता है परन्तु आत्मा नहीं मरती। अनेक शरीर या अनेक आत्माओं के होने पर भी परमात्मा तो एक ही है।

५४ हम उपदेश दे सकते हैं परन्तु मन को नियन्त्रण में नहीं रख सकते। हम दूसरों को बता सकते हैं लेकिन स्वयं नहीं समझ पाते। वैसे ही तलवार को धारण कर सकते हैं परन्तु वीर नहीं हो सकते।

५५ हे वेमा, गुरु के माने परमात्मा है। शिष्य के माने जीव है। जो व्यक्ति गुरु-शिष्य के सम्बन्ध को ठीक तरह से जोड़ने की शक्ति रखता है, वही सच्चे अर्थों में गुरु है।

कंदपद्यमु : ५६ भयमु सुमी यज्ञानमु
भयमुडिगिन निश्चयंबु परमार्थंबौ;
लयमुसुमी यीदेहमु
जयमु सुमी जीवुडनुचु, जाटर वेमा !

आटवेलदिगीतम् : ५७ जनन मरणमुलकु सरि स्वतंत्रुडु गाडु
मोदल कर्तगाडु, तुदनु गाडु
नडुम कर्तननुट नगुबाटु कादोको ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम ?

,, ५८ चित्तमनेडु वेरु शिथिलमैनप्पुडे
प्रकृति यनेडु चट्टु पडुनु पिदप,
कोर्कुलनेडु पेद्द कोम्मलेंडुनु कदा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ५९ दोंग तेलिविचेत दोरुकुना मोक्षंबु ?
चेत गानि पनुलु जेयराडु;
गुरुडनंग वलदु, गुणहीनुडनवले
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६० उत्तमुनि कडुपुन नोगु जन्मिंचिन
वाडु चेरचु वानि वंशमेल्ल;
चेरुकुवेन्नु पुट्टि चेरचदा तीपेल्ल ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६१ तनुवु येवरि सोम्मु तनदनि पोषिंप ?
धनमु एवरि सोम्मु दाचु कोनग ?
प्राण मेवरि सोम्मु पायकुंडग निल्प ?
विश्वादाभिराम विनुर वेम !

,, ६२ अल्पबुद्धि वानि कधिकार मिच्चिन,
दोड्डवारिनेल्ल दोलग गोट्टु;
चेप्पु दिन्न कुक्क चेरुकु तीपेरुगुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

५६ हे वेमा, इस बात की घोषणा करो कि अज्ञान ही भय है। जब हमको भय छोड़ देता है तब हम उस परमार्थ को निश्चित रूप से प्राप्त कर सकते हैं। हमारा शरीर नश्वर है। इसलिए आत्मा की विजय निश्चित है।

५७ मनुष्य जन्म और मृत्यु के लिए स्वतन्त्र नहीं है। जन्म और मृत्यु का कर्ता वह नहीं है ऐसी स्थिति में जीवनकाल में अपने को इस शरीर का कर्ता कहना हास्यास्पद है।

५८ जब हृदय रूपी जड़ शिथिल हो जाती है तो साथ ही साथ प्रकृति रूपी वृक्ष भी गिर जाता है परन्तु कामनारूपी शाखाएँ रह जाती हैं। इसलिए हृदयरूपी जड़ को मजबूत बनाने का प्रयत्न कामनाओं को दबा कर करना चाहिए। तभी प्रकृति रूपी वृक्ष स्थिर रह सकता है।

५९ चालाकी पूर्ण ज्ञान से मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। ऐसे कार्यों से फल-प्राप्ति नहीं हो सकती। जिस कार्य को करने में हम असमर्थ हैं, ऐसे कार्यों को हमें नहीं करना चाहिए। जो आदमी इस तरह कार्य करते हैं, उनको गुरु नहीं कहना चाहिए बल्कि गुणहीन कहना होगा।

६० चरित्रवान के यहाँ दुष्ट पैदा होता है तो वह उसके पूरे वंश का नाश कर देता है। जैसे ईख में रीती बाल पैदा होकर उसकी मिठास को नष्ट कर देती है।

६१ यह शरीर किसकी संपत्ति है? इसे तुम अपनी कह कर इसका पालन-पोषण करते हो। जिस धन को तुम अपना मान कर छिपाते हो और संग्रह करते जाते हो यह किसकी संपदा है? और यह प्राण किसकी धरोहर है जिसे तुम सदा के लिए सुरक्षित रखना चाहते हो?

६२ मूर्खता को अधिकार दिया जाए तो वह योग्य और समर्थ व्यक्तियों को निकाल देगा। उसे अच्छे बुरे की पहचान नहीं रहेगी जैसे जूता चाटनेवाला कुत्ता ईख की मिठास को क्या जाने?

आटवेलदिगीतम् : ६३ येलुगु तोलुदेच्चि यॆंदाक नुतिकिन,
नलुपुगाक नेल तेलुपु गल्गु ?
कोय्य बोम्म देच्चि कोट्टिते गुणि यौने ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६४ आलु मगनि माट कड्डबु वच्चेना
यालु गादु वानि वालु गानि
यट्टि यालु विडिचि यडविनुंडुट मेलु !
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६५ तप्पुलन्नुवारु तडोप तंडमु;
लुर्विजनुलकेल्ल नुंड्ड तप्पु;
तप्पुलेन्नुवारू तम तप्पुलेरुगरू,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६६ कल्ललाडु वानि ग्रामकर्त येरुंगु;
सत्य माडुवानि, सामि येरुगु,
पेक्कु तिंडिपोतु पेंड्लामेरुंगुरा,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६७ गुरुवुनकुनु पुच्चकूरैन निब्वरु,
अरय वेश्य कित्तुरर्थ मेल्ल
गुरुडु वेश्यकन्न कुलहीनु डेमोको ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६८ तीपिलोन तीपि तेलियंग प्राणंबु,
प्राण वितति कन्न पसिडि तीपि,
पसिडिकन्न मिगुल पडति माटलु तीपि,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ६९ पनस तोनलकन्न पंचदारलकन्न,
जुंटितेने कन्न जुन्नुकन्न
चेरुकु रसमुकन्न चेलिमाट तीपिरा !
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

६३ रीछ के चमड़े को ला कर उसे कितना ही धोया जाए, उसका कालापन दूर नहीं होता। वैसे ही लकड़ी के खिलौने को मारने-पीटने से क्या वह गुणी हो सकता है ?

६४ यदि पति के वचनों और कार्यों में पत्नी बाधक सिद्ध होती है और उसकी आज्ञा की अवहेलना करती है तो वह पत्नी नहीं बल्कि दुर्भाग्य है। ऐसी पत्नी को त्याग कर कहीं दूर जा कर बसना उचित होगा।

६५ दूसरों में गलतियाँ ढूंढ़नेवाले संसार में असंख्य लोग हैं। यों तो पृथ्वी में प्रायः सभी लोगों में गलतियाँ रहती हैं, किन्तु जो आदमी दूसरों की गल्तियाँ ढूंढ़ता है, वह स्वयं अपनी गल्तियाँ नहीं जान पाता।

६६ मिथ्यावादी को गांव का मुखिया जानता है। सत्य वचन बोलनेवाले को स्वामी जानता है और पेटू को उसकी पत्नी जानती है। यह नग्न सत्य है, इनकी वास्तविक पहचान मुखिया, स्वामी और पत्नी ही कर सकते हैं।

६७ गुरु को लोग साग-सब्जी तक नहीं देते, लेकिन वेश्या को सारा धन समर्पित कर देते हैं। वाह दुनिया की कैसी परम्परा है ? क्या गुरु वेश्या से भी निम्न कोटि का है ?

६८ इस संसार की सभी वस्तुओं में सब से प्रिय वस्तु कौन सी है ? प्राण। परन्तु सोना प्राण से भी हज़ारों गुना प्रिय है और सुवर्ण से भी बढ़ कर तरुणी की बातें मूल्यवान हैं।

६९ इस संसार में कटहल, चीनी, शहद, मलाई, गन्ने का रस इन सब से बढ़ कर मधुर पदार्थ प्रेयसी की मीठी बातें हैं।

आटवेलदिगीतम् : ७० तनदु नृपतितोड तनयायुधमु तोड,
नग्नितोड, परुल यालितोड,
हास्यमाडु टेल्ल, प्राणांत मौसुम्मु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ७१ पतिनि विडुवरादु, पदिवेलकैननु
पेट्टिचेप्पराडु पेद्कैन;
पतिनि दिट्टरादु सतिरूपवतियैन,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ७२ सुतुलु सतुलुमाय सुख दुःखमुलु माय;
संसृतियुनुमाय जालिमाय,
माय ब्रतुकुकिंत माय गप्पिस्तिवि !
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ७३ माट निलुपलेनि मनुजुंडु चंडालु
डाझलेनि राजु याडुमुंड
महिमलेनि वेल्पु मंट जेसिन पुलि !
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ७४ एतं चदुवु जदुवि येन्नि विन्ननु गानि
हीनु डवगुणंबु मान लेडु
ब्रोग्गु पालगड्डुग, ब्रोवुना मलिनंबु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ७५ निजमुलाडु वानि निंदिंचु जगमेल्ल
निजमुलाडरादु नीचुतोन
निजमहात्मुगूडि निजमाड वलयुरा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ७६ वेरुव वले पापमुनकुनु
वेरुवगवले मरणमुनकु विश्वमुलोनन्
वेरुवगवले संगममुल
मरिमरुवग वलदुमेलु महिलो वेमा !

७० यह अनुभव सिद्ध बात है कि अपने शासक, अपने आयुध, अग्नि और पर-स्त्री के साथ परिहास करना प्राणों पर खेलना है।

७१ चाहे कैसी ही विपत्ति पड़े पति का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। किसी को कुछ दान में दिया जाए तो उसका जिक्र भूल से भी नहीं करना चाहिए। पत्नी भले ही सुन्दर क्यों न हो, किन्तु उसे पति की निन्दा नहीं करनी चाहिए।

७२ पुत्र, पत्नी, सुख, दुःख, परिवार, दया इत्यादि माया से पूर्ण हैं। यह सारा संसार ही माया-जाल है। हे भगवन्, माया से पूर्ण इस जीवन के लिए तुमने किस तरह मायाजाल फैला रखा है ? अर्थात् इस मायाजाल को तोड़ने पर ही मनुष्य उस परम शक्ति को प्राप्त कर सकता है। यह माया उनको पाने का साधन बन गई है, अतः इसका अस्तित्व आवश्यक है।

७३ जो आदमी वचन पालन नहीं करता है, वह चाण्डाल है। जो राजा अपनी आज्ञाओं का पालन करने में असमर्थ है वह विधवा के और जिस देवता में सामर्थ्य नहीं है वह मिट्टी निर्मित शार्दूल के समान व्यर्थ है।

७४ मूर्ख भले ही पढ़ लिख कर उपाधियाँ प्राप्त करके अपनी धाक जमा ले परन्तु अपने दुर्गुणों को वह नहीं छोड़ सकता। क्या कोयले को दूध से धोने पर उसकी मलिनता मिट जाएगी ?

७५ सत्य वचन बोलनेवालों की निन्दा सारा संसार करता है। मूर्खों के साथ कभी सत्यवचन नहीं कहना चाहिए। यदि कहना ही है तो परमात्मा के समक्ष सत्यवचन कहे, इसी में लाभ हो सकता है।

७६ हे वेमा, इस संसार में पाप तथा मृत्यु से मनुष्य को डरना चाहिए और दूसरों से सम्बन्धित जितनी बातें हैं उन सब को भुलाया जा सकता है, किन्तु दूसरों की की हुई भलाई को कभी न भूलना चाहिए।

आटवेलदिगीतम् : ७७ आलु रंभ यैन नतिशीलवतियैन
जार पुरुषडेल जाडमानु
मालवाड कुक्क मरगिन चंदबु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ७८ भूमि नादि यन्न भूमि पक्कुन नव्वु
दानहीनु जूचि घनमु नव्वु
कदन भीतु जूचि कालुडु नव्वुनु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ७९ एट्टिवानिकैन बुट्टुनु मोहंबु
पुट्टु मोहमेल्ल पूडद्रोक्कि
गट्टिचेसिचूडु गनिपिंचु ब्रह्मंबु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८० आत्मलोन शिवुनि ननुवुगा शोधिंचि
निश्चलमुग भक्ति निलिपेनेनि
सर्व मुक्तुडौनु सर्वंबु तानौनु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८१ कडुपु च्चिच्चुचेत, कामानलमु चेत
क्रोध वह्निचेत कुटिलपडक
नोक्क मनसु तोड नुंडिनप्पुडे मुक्ति
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८२ शूद्रतनमु पोये, शूद्रुडगानानि
द्विजुड ननुकोनुटेल्ल तेलिविलेमि
इत्तडे नगुपसिडिईडनवच्चुना
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८३ भाग्यवंतुरालु परुल याकलि दप्पि
देलिसि, पेट्टनेर्चु दीर्पनेर्चु
तनदु दुष्ट भार्य तन याकलिनि गानि
परुल याकलेरुगदरय वेम !

७७ भले ही अपनी पत्नी रूप में रंभा और अत्यन्त शीलवती हो परन्तु व्यभिचारी पुरुष अपनी आदत को क्यों छोड़ेगा ? जैसे जिस कुत्ते को हरिजनों के मुहल्ले में जाने की आदत हो जाती है, वह अपनी आदत को नहीं छोड़ सकता।

७८ कोई व्यक्ति पृथ्वी को अपना कहता है तो पृथ्वी उस पर हँसती है। कंजूस को देख धन हंसता है, वैसे ही कायर को देख यमराज को हंसी आती है।

७९ चाहे आदमी किसी कोटि का क्यों न हो, प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में प्रेम और मोह का उत्पन्न होना सरल है। जो मनुष्य मोह तथा प्रेम को दबा कर मन को स्थिर बना लेता है उसे परम तत्व का साक्षात्कार होगा।

८० जो व्यक्ति अपने हृदय में स्थित भगवान् को पहचान कर उसके प्रति निश्चल भक्ति रखता है, वह संसार के सब माया-जालों से मुक्त हो जाता है। वह सर्वव्यापी ईश्वर में विलीन होकर सर्वव्यापी बन जाता है।

८१ जो व्यक्ति भूख, काम, क्रोध आदि दुर्गुणों में न फँस कर एकनिष्ठ रहता है, उसे उस अवस्था में अवश्य मुक्ति प्राप्त होती है।

८२ किसी का यह कहना कि मुझसे शूद्रत्व दूर हो गया है, मैं शूद्र नहीं हूँ, ब्राह्मण हूँ, बेवकूफ़ी है। क्या पीतल को किसी भी अवस्था में सुवर्ण के समान कहा जा सकता है ?

८३ हे वेमा, पतिव्रता नारी दूसरों की भूख और प्यास को पहचान कर उन्हें संतुष्ट करना जानती है। परन्तु अपनी मूर्ख पत्नी केवल अपनी भूख और प्यास को जानती है, दूसरों की भूख और प्यास से सर्वदा वह अनभिज्ञ रहती है।

आटवेलदिगीतम् : ८४ पामुकन्नलेदु पापिष्ठमगु जीवि
यट्टि पामु चेप्पिनट्लु विनुनु
यिलनु मोहिदेल्पनेव्वरि वशमया
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८५ एव्वरेरुगकुंड नेप्पुडु बोवुनो
पोवु जीवमट्लु बांदि विडिच्चि,
यंत मात्रमुनकु नपकीर्ति नेरुगक,
विरग बड्डुनु नरुड्डु वेर्रि वेम !

,, ८६ तनुवु विडिच्चि तानु तर्लि पोयेड्डु वेल,
तनदु भार्य सुतुलु तगिन वार
लोक्करैन नेग रुसुरु मात्रमे कानि,
तनदु मंच्चि तोड्डु तनकु वेम !

,, ८७ वान राकड (यनु) प्राण पोकड (यनु)
कान बडदु घनुन कैन गानि
कान बडिन मीद कलि यिट्लु नडचुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८८ जातुलंदु मिगुल जाति येदेक्कुवो ?
येरुकलेक तिरुगनेमि फलमो ?
येरुक गलुगु वाडे, हेच्चैन कुलजंड्डु,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ८९ आलि माटलु विनि, यन्नदम्मुल रोसि,
वेरु बडेड्डु वाड्डु, वेर्रिवाड्डु;
कुक्क तोकब्ट्टि गोदावरीदुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ९० माल माल गाड्डु महिमीदनेप्रोद्दु
माट तिरुगुवाडु माल गाक;
वानि माल यन्नवाडे (पो) पेनुमाल,
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

८४ इस पृथ्वी में सर्प से बढ़ कर दुष्ट जानवर कोई नहीं परन्तु वह सर्प भी जिस तरह मनुष्य नचाता है, नाचता है, किन्तु मूर्ख आदमी को समझाना या सुधारना किसी के लिए भी संभव नहीं है।

८५ हे वेमा! प्राण पखेरू इस शरीर को छोड़ कर कब उड़ जाएँगे कोई नहीं बता सकता। इतना होते हुए भी पागल मनुष्य अपयश की बातों का विचार न करके बुराइयों की ओर बढ़ता है।

८६ जब मनुष्य अपने शरीर को त्याग कर चला जाता है, उस समय उसकी पत्नी, उसके पुत्र अथवा उसके सगे सम्बन्धी उसके साथ नहीं जाते। यदि कोई उसके साथ जाता है तो वह है भलाई, बुराई।

८७ वर्षा का आगमन और प्राणों का निर्गमन योग्य अनुभवी व पुण्यवान पुरुष के लिए भी अज्ञात होता है। यदि मनुष्य को ये दोनों चीज़ें दिखाई दें तो क्या लौह युग (कलियुग) इसी प्रकार चलता रहता?

८८ वर्णों में कौन सा वर्ण उच्च है, इसकी परख के बिना दम्भ के साथ घूमते रहने से क्या प्रयोजन है? जो आदमी इनका ज्ञान रखता है वही उच्च मनुष्य है।

८९ जो मनुष्य अपनी पत्नी की बातों में आकर अपने भाइयों का साथ छोड़ अलग रहने लगता है, वह सचमुच पागल या मूर्ख है। कुत्ते की पूँछ पकड़ कर महान् गोदावरी नदी पार की जा सकती है?

९० इस पृथ्वी में कोई व्यक्ति कभी हरिजन नहीं हो सकता; जो आदमी वचन का पालन नहीं करता वही वास्तव में हरिजन है।

आटवेलदिगीतम् : ६१ चिप्पलोन बड्डु चिनुकु मुत्यंबाये,
नीळ्ळ बड्डु चिनुकु नीळ्ळ गलसे;
प्राप्तमु गल चोट फलमेल तप्पुनो ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ६२ गोड्डुटावु बितुक कुंड गोंपोयिनु,
पंड्लु नूडदन्नु पालु लेवु
लोभिवानि नड्डुग लाभंबु लेदया
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ६३ कुलमुलेनिवाडु कलिमिचे वेलयुनु
कलिमि लेनि वानिकुलमु दिगुनु
कुलमु कन्न मिगुल कलिमि प्रधानंबु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ६४ हीनजाति वानि निलुजेर निच्चुना
हानि वच्चुनंत वानिकैन
येगि कडुपु जोच्चि, यिट्टट्टु जेयदा ?
विश्दाभिराम विनुर वेम !

" ६५ घप्पुलेनि कूडु परुलक सह्यमौ
नप्पुलेनिवाडे यधिक बलुड्डु
मुप्पुलेनिवाडु मोंदल सुज्ञानुड्डु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ६६ परुल मोसपुच्चि, धर धनमार्जिंचि
कडुपु निंचुकोनुट कानि पद्दु
ऋणमुसेयु मनुजुडेक्कुव केक्कुना ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

" ६७ तंड्रिकन्न सुगुणि तनमुड्डु गल्गेना
पिन्न पेद्द तनमुलेन्न दगदु
वासुदेवु विडिचि वसुदेवु नेंतुरे ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

९१ वर्षा की जो बूँदें सीपी में पड़ती हैं वे मोती बन जाती हैं। वे बूँदें ही पानी में पड़ती हैं तो पानी में मिल जाती हैं और पानी ही हो जाती हैं वैसे भाग्य में जो बदा है वही फल प्राप्त होगा।

९२ जैसे लती हुई गाय के पास दूध दुहने के लिए बरतन ले जाएँगे तो वह ऐसी लात मारेगी कि हमें दूध तो मिलेगा नहीं उल्टे हमारे दाँत टूट जाएँगे। वैसे ही लोभी के पास जाकर कुछ माँगने से कोई प्रयोजन नहीं।

९३ जो आदमी निम्न जाति में पैदा हुआ है, वह भी सम्पत्ति के कारण यश प्राप्त करता है। जिसके पास सम्पत्ति नहीं है उस आदमी का वर्ण भी निम्न स्तर का माना जाता है। इसलिए दुनिया में जाति से भी धन प्रधान माना जाता है।

९४ दुष्ट आदमी को यदि हम अपने पास फटकने देते हैं तो उससे बड़े से बड़ा आदमी भी हानि उठाएगा जैसे मक्खी के पेट में जाने पर वह पेट को खराब कर डालती है।

९५ अतिथियों के लिए बिना दाल का भोजन असह्य मालूम होता है। जिस आदमी के सिर पर कर्ज का बोझ नहीं है, वही आदमी अधिक शक्तिशाली है और जिस आदमी के लिए मृत्यु का भय नहीं है वही अधिक ज्ञानी है।

९६ इस संसार में दूसरों को धोखा देकर आदमी धन कमाता है और उससे अपना पेट भरता है, यह ठीक नहीं है। जो मनुष्य सदा कर्ज ही लेता रहता है वह कदापि उन्नति नहीं कर सकता।

९७ यदि पुत्र अपने पिता से भी योग्य हो तो उसका मान करना चाहिए जैसे वासुदेव (कृष्ण) को छोड़ कर कोई वसुदेव की पूजा करेगा?

कंदपद्यमु : ९८ वच्चेदिनि पोय्येदिनि,
च्चेदिनि गनगलेक सहजमु लनुचुन्
विच्चल विडिगा दिरुगुट
च्चिचुन बडिनट्टि मिडत चेलुवमु वेमा !

अटवेलदिगीतम् : ९९ पर बलंबुचूच्चि, प्राण रक्षणमुन
कुरिकि पारिपोवु पिरिकि नरुडु
यमुडु कुपितुडैन नड्डु मेव्वंडया ?
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, १०० मनसुलोनि मुक्ति मरियोक्क चोटनु
वेदुक बोवुवाडु वेर्रिवाडु
गोर्रेचंक बेट्टि गोल्ल वेदुकु रीति
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, १०१ आशकन्न दुःख मतिशयंबुग लेदु
चूपु निलुपकुन्न सुखमु लेदु
मनसु निलुपकुन्न मरिमुक्ति लेदया
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, १०२ चेप्पुलोनि रायि, चेवुलोनि जोरीग
कंटिलोनि नलुसु, कालिमुल्लु
निंटिलोनि पोरु, निंतिंत गादया
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, १०३ रामनाम पठनचे महि वाल्मीकि
परग ब्रोय यय्यु, बापडय्ये
कुलमु घनमु कादु, गुणमु घनंबुरा
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, १०४ तुम्म चेट्ल मुंड्लु तोडने पुट्टुनु
वित्तुलोन नुंडि वेडलिनट्लु
मूर्खुनकुनु बुद्धि मुंदुगा बुट्टुनो
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

९८ हे वेमा, मनुष्य जन्म और मृत्यु को न समझ कर दोनों को सहज मानते हैं। इस प्रकार इच्छानुसार चलते रहना आग में पड़े पतंग के समान है।

९९ कायर मनुष्य दूसरों की शक्ति को देख अपने प्राणों की रक्षा के लिए भाग जाता है; परन्तु यदि किसी पर यम कुपित हो जाए तो उसे कौन बचाएगा?

१०० जो व्यक्ति मुक्ति को अपने हृदय में न देख अन्यत्र ढूँढ़ता है वह पागल है, जैसे भेड़ को बगल में दबाए ग्वाला अन्यत्र ढूँढ़ता है।

१०१ इस संसार में कामनाओं से बढ़ कर कोई दुःख नहीं है और यदि हम अपनी दृष्टि को किसी पर केन्द्रित नहीं करते तो हमें सुख की प्राप्ति नहीं होती। वैसे ही यदि हम अपने मन पर नियंत्रण नहीं रखते हैं तो हमें मुक्ति नहीं मिलेगी।

१०२ हे वेमा, जूते में पत्थर का टुकड़ा, कान में पहुँची हुई गो-मक्खी, आंख की किरकिरी, पैर का काँटा और घर का झगड़ा इन सबकी परेशानियों का वर्णन नहीं किया जा सकता है अनुभव से ही उनका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

१०३ रामनाम के स्मरण से इस पृथ्वी में व्याध वाल्मीकि ब्राह्मण बन गया। इससे यह समझना चाहिए कि मनुष्य के बड़प्पन के लिए जाति प्रधान नहीं है बल्कि गुण ही मुख्य हैं।

१०४ बबूल के पेड़ में काँटे जन्म से ही पैदा होते हैं, जैसे बीज से ही काँटे निकल आए हों। इसी तरह मूर्ख आदमी की बुद्धि जन्म से ही उत्पन्न होती है, फिर वह बदलती नहीं।

आटवेलदिगीतम् १०५ "कामि गानि वाडु कवि गाडु रवि गाडु !"
कामिगानि मोक्षकामि गाडु;
कामियैन वाडु कवियगु रवि यगु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, १०६ कुक्क गोवु कादु, कुंदेलु पुलि गादु
दोम गजमु गादु दोड्डदैन
लोभि दात गाडु, लोकंबु लोपल
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : १०७ धनमे मूलमु जगतिकि
धनमे मूलंबु सकल धर्मंबुलकुन्
गोनमे मूलमु सिरुलकु
मनमे मूलंबु मुक्तिमहिमकु वेमा !

आटवेलदिगीतम् १०८ तामु दिनक नट्टल धर्ममु सेयक
कोडुकुलकनिधनमु गूड बेट्टि
तेलिय जेप्पलेक तीरिपोयिन वेन्क
सोम्मु परुल नंटु जूडु वेम !

,, १०९ मत्सरंबु, मदमु, ममकार मनियेढि
व्यसनमुलनु दगिलिनुसल ब्रोक
परुल कुपकरिंचि, परमु नम्मिकनुंडि
योनरुचुंडु, राजयोगि वेम !

,, ११० मुष्टि वेप चेट्टु मोदलुगा प्रजलकु
परग मूलिकलकु पनिकिवच्चु
निर्दयात्मकुंडु नीचुडेंदुनकुनु
पनिकिराडु गदर परग वेम !

,, १११ कोपमुननु घनत कोंचमै पोवुनु
कोपमुननु मिगुल गोडु जेंदु
कोपमडचेनेनि कोरिक लीडेरु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

१०५ जो मनुज इस दुनिया में किसी चीज़ के प्रति कामना नहीं करता वह कवि या रवि नहीं बन सकता। यदि कामना नहीं होती तो वह स्वर्गकामी भी नहीं बन सकता। जो मनुष्य कामना करता है वह कवि, रवि अथवा सब कुछ बन सकता है।

१०६ इस पृथ्वी पर कुत्ता चाहे जितना अच्छा हो, वह कभी गाय नहीं बन सकता। किसी हालत में भी खरगोश शेर और मक्खी हाथी नहीं बन सकती। इसी तरह लोभी आदमी हज़ार कोशिश करे, दानी नहीं बन सकता।

१०७ हे वेमा, धन इस जगत् का मूल है। धन ही सभी धर्मों का मूल है। सम्पत्ति की जड़ गुण ही है। मुक्ति का मूल कारण हृदय है। अर्थात् हृदय शुद्ध रहे तो मुक्ति-संपदा आदि अपने आप प्राप्त हो जाती हैं।

१०८ हे वेमा, इस पृथ्वी में अज्ञानी मनुष्य स्वयं भी नहीं खाता और दान भी नहीं करता। अपनी संतान के लिए धन एकत्रित करके अन्तिम समय में उस धन का हिसाब नहीं दे पाता और वह धन दूसरों को प्राप्त हो जाता है।

१०९ हे वेमा, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि माया-जाल में न फँस कर जो आदमी दूसरों की भलाई करता रहता है और मुक्ति की कामना करता है वही योगी है।

११० हे वेमा, विषैला पौधा और नीम का पेड़ जनता के स्वास्थ्य के लिए जड़ी-बूटी का काम देते हैं। इनसे लोगों का उपकार होता है परन्तु निर्दय तथा नीच आदमी किसी काम का नहीं। उससे लाभ के बदले नुकसान ही होता है।

१११ क्रुद्ध होने से मनुष्य का बड़प्पन कम हो जाता है और किसी समय अधिक क्रोध के कारण हानि ही होती है। यदि मनुष्य क्रोध को दबाता है तो उसकी सभी कामनाओं की पूर्ति हो जाती है।

आटवेलदिगीतम् ११२ आशलुडुग गानि पाश मुक्तुडुगाडु
मुक्तुडैन गानि मुनियुगाडु
मुनियुनैतेगानि मोहंबुलुडुगवु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

कंदपद्यमु : ११३ मरुववले पाप-संगति
मरुवंगावलेनु दुरमु मरिविश्वमुलो
मरुववले परुल नेरमि
मरुवंगा वलदु मेलु; महिलो वेमा !

आटवेलदिगीतम् ११४ तल्लि दंड्रलंदु दारिद्रय युतुलंदु
नम्मिन निरुपेद नरुलयंदु
प्रभुवुलंदु जूड भय भक्तुलमरिन
निहमु परमुगल्गु नेसग वेम !

,, ११५ तनुवुलोनि जीव-तत्व मेरुंगक
वेरे कलदटंचु वेदुकुनेल ?
भानुडुंड दिव्वेबट्टि वेदुकुरीति
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ११६ मादिगे यनवद्दु मरिगुणमोनरिन
मादिगनु वसिष्ठु मगुवदेडे
मादिग गुणमुन्न मरिद्विजुडगुनया
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ११७ वेमु पालुबोसि वय्येंड्लु पेंचिन
चेदु विडिच्चि तीपि जेंदनट्लु
नोगु गुणमु विडिच्चि युचितज्ञु डगुनेट्लु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

,, ११८ "काशि ! काशि !" यनुचु कडुवेढ्कतो बोदु
रंदु गलुगु देवु डिंदुलेडे
यिंदु नंदु गलडु हृदयंबु लेस्सैन
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

११२ जिस मनुष्य की कामनाएँ समाप्त हो जाती हैं, वही मनुष्य भवबन्धनों से मुक्त हो जाता है। जो आदमी कामनाओं से मुक्त होता है, वही मुनि बनता है। मुनि बने बिना संकल्प-विकल्पों की समाप्ति नहीं होती।

११३ हे वेमा, इस पृथ्वी में पापपूर्ण विषयों को भूल जाना चाहिए तथा आपस की कलह और दूसरों की त्रुटियों को भी भुला देना चाहिए। परन्तु दूसरों के उपकार को किसी हालत में भी नहीं भूलना चाहिए।

११४ हे वेमा, इस पृथ्वी में माता-पिता, दरिद्र तथा विश्वास पात्र निर्धन व्यक्तियों तथा राजाओं के प्रति जो आदमी श्रद्धा, भक्ति और निष्ठा रखता है; उसे इहलोक और परलोक दोनों प्राप्त होते हैं।

११५ अज्ञानी मनुष्य अपने शरीर के भीतर स्थित परमात्मा को पहचान कर अन्यत्र ढूँढता रहता है। जैसे सूर्य भगवान के रहते हुए भी लोग दीपक लेकर ढूँढते हैं।

११६ यदि चमार में भी मनुष्यता हो तो उसे चमार कह कर नहीं पुकारना चाहिए। वसिष्ठ मुनि ने चमार जाति की स्त्री से विवाह किया यदि उसमें चमार के गुण होते तो वह ब्राह्मण कैसे बन सकती थी?

११७ यदि नीम के पेड़ को दूध से एक हज़ार वर्ष तक भी सींचा जाए तो भी वह अपने कड़वेपन को छोड़ कर मिठास नहीं प्राप्त कर सकता। जैसे अज्ञानी मनुष्य अपने दुर्गुणों को छोड़ गुणवान् कदापि नहीं बन सकता।

११८ लोग "काशी-काशी" कह कर अत्यन्त उत्सुकता के साथ तीर्थ-यात्रा करते हैं; क्या वह यहाँ नहीं है? यदि मनुष्य का हृदय सच्चा और पवित्र है तो भगवान सर्वत्र मिलता है।

आटवेलदिगीतम् ११६ तानु निलुचुचोट दैवमु लेदनि
पामरजनुड्डु तिरुपतुल दिरिगि
जोमुवीडि चेतिसोम्मेल्ल बोजेसि
चेडि गृहंबु तानु जेरु वेम !

गीतपद्यमु : १२० अवुनु वेमन्न जेप्पिन यात्म बुद्धि
देलियलेनट्टि यज्ञानि देबेलकुनु
तलकु बासिन वेंट्रुकवलेनु जूड
भुक्ति मुक्तुलु हीनमै पोवु वेम !

११६ हे वेमा, अज्ञानी मनुष्य अपने स्थान में भगवान् को न पाकर तिरुपति ादि पुण्यतीर्थों का व्यर्थ ही भ्रमण करता है और तीर्थ-यात्रा में अनेक कष्ट झेल कर ान खर्च करके स्वास्थ्य खोकर अन्त में निरुत्साह के साथ घर लौटता है।

१२० जो अज्ञानी मनुष्य वेमना के कहे हुए उपदेशों को ग्रहण नहीं करता है था उनका महत्व नहीं जानता है ऐसे मूर्ख व्यक्ति परलोक और इस लोक में कटे हुए ंशों की तरह निरर्थक रहेंगे।

विजय विलासमु

उलूपी–अर्जुन विवाहमु

शार्दूलविक्रीडितम् : १ चन्द्रप्रस्तरसौध खेलनपर श्यामा कुचद्वंद्वनि
स्तंद्र प्रत्यहलिप्त गंधकलना संतोषित ग्रोधुनी
सांद्र प्रस्फुट हाटकांबुरुह चंचच्चंचरीकोत्करं
बिंद्रपस्थपुरंबु भासिलु रमा हेला कलावासमै ।

उत्पलमाला : २ ग्रापुरमेलु मेलुबलि यंचु ब्रजल् जयवेट्टुचुंड ना
ज्ञापरिपालन व्रतुडु शांति दया भरणुंडु सत्यभा
षापरतत्व कोविदुडु साधु जनादरणुंडु दानवि
द्यापरतंत्र मानसुडु धर्मतनूजु डुदग्रतेजुडै

कंदपद्यमु : ३ दुर्जय विमता हंकृति
मार्जन याचनकदैन्य मर्दन चणदोः
खर्जुलु गल रतनिकि भी
मार्जुन नकुल सहदेवुलन ननुजन्मुल्

उत्पलमाला : ४ ग्रन्नल पट्ल दम्मुल येडाटमुनन् समुडंचु नेन्नगा
नेन्निक गन्नमेटि, येदु रेकक्कड लेक नृपाल कोटिलो
वन्नेयु वासियुं गलिगि वर्तिलु पौरुषशालि, सात्विकुल्
तन्नु नुतिंपगा दनरु धार्मिकु डर्जुनु डोप्पु नेंतयुन्

चंपकमाला : ५ ग्रतनि नुतिंपु शक्यमे जयंतुनि तम्मुडु सोयगंबुनन्;
बतग कुलाधिप ध्वजुनि प्राण सखुंडु गृपा रसंबुनन्;
क्षितिधर कन्यकाधिपतिकिन् ब्राति जोदु समिज्जयंबुनं
दतनि कतंडे साटि चतुरब्धि परीत महीतलंबुनन्

कंदपद्यमु : ६ ग्रतिलोक समीक जयो
न्नतिचे धर्मजुन किंपोनर्चुन्चु विनया
न्वितुडै समस्त जन स
म्मतुडै नरुडुंडे निट्टु लमानुष चर्यन्

विजय विलास

उलूपी-अर्जुन विवाह

१ हस्तिनापुर से पचास मील दूर इन्द्रप्रस्थ नामक एक विशाल नगर है। वहाँ के गगन चुम्बी भवन संगमरमर से निर्मित हैं। उन भवनों में रहने वाली नारियाँ विलास पूर्ण जीवन व्यतीत कर रही हैं। वह नगरी संपदा, कला विद्या एवं वैभव का केन्द्र है।

२ जन प्रशंसित तथा अर्जुनादि के अग्रज धर्मराज युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थ नगर का पालन करते थे। वे अपने कर्त्तव्यों के पालन में कभी त्रुटि नहीं करते थे। शांत-चित्त, दयानिधि, सत्यवादी, त्यागी, कुशल शासक तथा दीनों की रक्षा में तत्पर रहने वाले धर्मराज को पाकर वहां की जनता अत्यन्त प्रसन्न थी।

३ भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव युधिष्ठिर के चार भाई हैं। वे शत्रुओं के घमंड को चूर करने में अत्यन्त पटु और याचकों की इच्छाओं को पूर्ण करने में समर्थ हैं।

४ पाँचों पाण्डवों में अर्जुन अत्यन्त धर्मात्मा हैं। बड़े बड़े महापुरुष भी उनकी प्रशंसा करते हैं। वे अत्यन्त शक्तिशाली हैं। कोई राजा उनका सामना नहीं कर सकता था, जिस तरह अर्जुन अपने बड़े भाई का आदर करते थे उसी तरह अपने छोटे भाइयों से भी स्नेह करते थे। उनकी इस निष्पक्षता पर लोग अत्यन्त मुग्ध हैं।

५ अर्जुन सुन्दरता में जयन्त, दयाधर्म में श्रीकृष्ण, युद्ध में शत्रु को पराजित करने में शिव के समान हैं। वे जयन्त के भाई, कृष्ण के सखा तथा महेश के प्रति योद्धा के रूप में अत्यन्त विख्यात हैं। इस पृथ्वी में उनकी समता करनेवाला कोई नहीं है।

६ अर्जुन समस्त समरों में विजय ही प्राप्त करते थे, विनयी ऐसे थे कि युधिष्ठिर भी उनके इस गुण पर लट्टू थे। वे सदा जनता की प्रशंसा प्राप्त करते थे। वे लौकिक पुरुष की भांति दिखाई देते थे। प्रत्येक युद्ध में विजय ही विजय पाने के कारण ये "विजय" नाम से भी विख्यात हुए।

उत्पलमाला :
७ अतट नोक्कनाडु गदुडन् यदुसंभवुंडल्ल रुक्मिणी
कांतुडु कूरिमिन् बनुपगा गुशलं बरयंग वच्चिये
कांतपु वेळ द्वारवति यंद्लि वार्तलुदेल्पु चुन् दटि
त्कांति मनोहरांगुलगु कन्नेल्ल चक्कदनंबु लेन्नुचुन्

पंचचामरमु :
८ कनन् सुभद्रकुन् समंबुगाग ने मृगीविलो
कनन्; निजंबु गाग ने जगंबुनंदु जूचि का
कनन्; ददीय वर्णनीय हाव भाव धीवय :
कनन्मनोज्ञ रेख लेन्नगा दरंबे ग्रक्कुनन्

कंदपद्यमु :
९ अय्यारे ! चेलुवेक्कड
नय्यारे गेलुव जालु नंगजु नारिन्
वेय्यारु ललो सरि ले
रय्या रुचिरांग रुचुल नय्यंगनकुन्

कंदपद्यमु :
१० कडु हेच्चु कोप्पु; दानिं
गडुवं जनुदोयि हेच्चु; कटि यन्निटिकिन्
गडु हेच्चु; हेच्चु लन्नियु;
नडुमे पस लेदु गानि नारी मणिकिन् !

उत्पलामला :
११ अंगमु जाळुवापसिडि यंगमु; क्रोन्नेलवंक नेन्नोसल्
मुंगुरु लिंद्र नीलमुल मुंगुरु; लंगजुडालु वालु जू
पुंगुव; येमि चेप्प ? नृप पुंगव ! मुज्जगमेल जेयु न
य्यंगन बोलु नोक्क सकियंगन नेन्नग मिंचु नन्निटन्

उत्पलमाला :
१२ एक्कड जेप्पिनाड दरलेक्षण चक्कदनंबु ? लिंक न
म्मक्क ! यदे मनंग निपुडंदु शतांशमु देल्प लेदु ने
नोक्कोक यंग मेंच वलयुं बदिवेल मुखंबु; ला येत्रो
जोक्कपु जूपुलो सोलपु जूचिन गाक येरुंगवच्चुने ?

चंपकमाला :
१३ अनि बहुभंगुलं बोगड नंगन मुंगल निल्चिनट्लु दा
गनुगोनिट्लु नै नृपशिखामणि डेंदमुनंदु बट्ट जा
लनि यनुरक्ति नव्वरविलासिनि नेन्नडु चूड गल्गुनो
यनि तमकिंचु चुन्न समयंबुन ग्रक्कुन दैविकंबुगन्

७ एक दिन पांडवों का कुशल-मंगल जानने के लिए द्वारिका से श्री कृष्ण का दूत यदुवंशी गद इन्द्रप्रस्थ आया। अर्जुन को अकेले पाकर उसने अर्जुन के सामने द्वारका की विशेषताओं के साथ साथ वहाँ की सुन्दरियों की सुन्दरता का भी वर्णन किया।

८ गद्र ने अर्जुन से इस प्रकार कहा—"मैंने समस्त पृथ्वी की सुन्दरियाँ देखी हैं, किन्तु सुभद्रा जैसी रूपवती स्त्री कहीं नहीं दिखाई दी। उसके हाव-भाव उसका यौवन उसकी बुद्धि, उसका रूप सब कुछ अलौकिक हैं। उनका वर्णन करना किसी के लिए भी संभव नहीं।

९ वह सुभद्रा कामदेव की पत्नी रति के समान सुन्दरी है। उसकी सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। हज़ारों रूपवतियों के बीच ढूंढ़ने पर भी सुभद्रा जैसी सुन्दरता और सुभद्रा जैसा लावण्य दिखाई नहीं देता।

१० सुभद्रा का वेणी बंध बहुत बड़ा है, और वेणी बन्ध से भी बड़े उसके उरोज हैं, उरोजों से भी बड़ी जंघाएँ हैं। ये सब तो बड़े हैं परन्तु केवल उसकी कमर बहुत पतली है।

११ सुभद्रा का शरीर शुद्ध स्वर्ण-सा कान्तिमान है। भाल द्वितीया के चन्द्रमा जैसा है। केश इन्द्रनीलों से बढ़ कर हैं। मीन जैसे नेत्र हैं। इन शुभ लक्षणों से मालूम होता है कि वह भविष्य में तीनों लोकों की रानी बनेगी। इन लक्षणों में इनकी तुलना करनेवाली नारी और कहीं नहीं दिखाई देती।

१२ सुभद्रा की सुन्दरता का मैंने जो वर्णन किया वह उसकी वास्तविक सुन्दरता का शतांश भी नहीं है। एक-एक अवयव का वर्णन करना चाहूँ तो हज़ारों तरह से वर्णन करना पड़ेगा। यदि हज़ार तरह से वर्णन करूँ तब भी उसके सुन्दर कटाक्षों के नखरे का वर्णन करना असम्भव है; वह देखते ही बनती है।

१३ गद के मुँह से सुभद्रा का वर्णन सुन कर अर्जुन को भ्रम होने लगा कि उसके सामने सुभद्रा खड़ी हुई है और वह उसे अत्यन्त प्रीति के साथ देख रहा है। इस प्रकार अर्जुन का सुभद्रा से अनुपस्थिति में भी अकारण ही प्रेम हो गया। इसलिए उस नारी रत्न को देखने की लालसा अर्जुन के मन में हिलोरें लेने लगी। उस समय अचानक ही एक अनुकूल स्थिति उत्पन्न हो गई।

मत्तेभविक्रीडितम् : १४ श्रोक भूमी दिविजुंडु चोरहृत धेनूत्तमुंडै वेडि कों
टकु दा धर्मजु केलिमंदिर मुदंड बोयि कोदंडसा
यकमुल्देच्चुट बूर्वक्लुप्त समयन्यायानु कूलंबुगा,
नोकये डुर्वि प्रदक्षिणं बरुगु नुद्योगंबु वाटिल्लिनन्

उत्पलमाला : १५ अन्नकु श्रोक्कि तीर्थभजनार्थमुगा बनिविंदु नंचु दा
विन्नप मात्तरिंचुटयु विप्र हितंबुन कन्न धर्म मे
मुन्नदि ? गोप्रदक्षिणमे युर्वि प्रदक्षिणमंचु निट्टुले
मन्ननु मान कन्नरुड्ड प्रार्थन सेयग नेट्ठकेलकुन्

चंपकमाला : १६ तनदु पुरोहितुंडैन धौम्युनि तम्मनि गारवंपुनं
दनुनि विशारदुन्सकल धर्म विशारदु वेंट नंटगा
नोनरिच्चि कोंदरन् बरिजनोत्तमुल न्नियमिंचि यादरं
बेनय समस्त वस्तुवुलु निच्चियुधिष्ठरु डंपे वेडुकन्

चंपकमाला : १७ परिणय मौट केगु गति श्रौरुलनेकुलु वेंटरा शुभो
त्तरमुग नय्येडंगदलि तद्दयु दालिमि मीर धर्मत
त्परुडयि येंदु निंदु नुलप्रालु नृपालु रोसंगगा निरं
तरमुनु बुण्य तीर्थमुल दानमु लाडुचु नेगि यंतटन्

भुजंगप्रयातमुः १८ सुनसीर सूनुंडु चूचे न्निमज्ज
ज्जनौ घोत्पतत्पंक शंका करा लो
र्मिनिर्मग्न नीरोज रेखोन्न मद्भृं
ग नेत्रोत्सव श्रीनि गंगा भवानिन्

कंदपद्यमु : १९ संतोष बाष्प धारलु
दोंतरगा जूचि म्रोक्कि तोयधिवरसी
मंतिनि ना त्रिजगद्दी
व्यंतिनि भागीरथी स्रवंतिनि बोगडेन्

कंदपद्यमु : २० मुनुकलु गंगा नदिलो
नोनरिंचुट कन्न भाग्य मुन्नदे यनुचु
न्मुनु कलुगंगा दिगि परि
जनमुलु कैला गोसंग स्नानोन्मुखडै

१४ एक चोर ने एक ब्राह्मण की गाय चुरा ली थी। उस ब्राह्मण ने अर्जुन से शिकायत की। उस चोर को दण्ड देने तथा ब्राह्मण को गाय दिलाने के लिए अर्जुन धनुष बाण लेने के लिए युधिष्ठिर के केलि-गृह की ओर गया। पाण्डवों ने आपस में एक निर्णय किया था उसके अनुसार उस केलि-गृह के समीप से जाने के कारण अर्जुन को एक वर्ष तक पृथ्वी की प्रदक्षिणा करनी पड़ी। वह कार्य इसी समय हुआ। इस तरह अर्जुन को सुभद्रा के देखने का अवसर मिल गया।

१५ अर्जुन ने अपने बड़े भाई युधिष्ठिर को नमस्कार किया और कहा—"मैं पुण्यतीर्थों का सेवन करने जा रहा हूँ, परन्तु युधिष्ठिर ने जवाब दिया कि ब्राह्मणों की भलाई करने से उत्तम धर्म और कोई नहीं है। गाय की प्रदक्षिणा करने मात्र से पृथ्वी की प्रदक्षिणा हो जाएगी। इस प्रकार युधिष्ठिर ने अर्जुन को सांत्वना दी; किन्तु अर्जुन अपनी इच्छा को बराबर विनय के साथ व्यक्त करता रहा। युधिष्ठिर ने लाचार होकर—

१६ अंतमें अर्जुन को तीर्थ यात्रा करने की सम्मति दी। उन्होंने अपने पुरोहित समस्त धर्मों के ज्ञाता धौम्य के भतीजे तथा कुछ सेवकों को आवश्यक वस्तुओं को साथ देकर अर्जुन को प्रेम पूर्वक बिदाई दी।

१७ अर्जुन के साथ बहुत से लोग चले। ये लोग बराती की तरह लगते थे। उन सबको साथ लेकर शान्ति की प्रतिमूर्त्ति अर्जुन वहां से रवाना हुए। मार्ग में कहीं कहीं राजाओं से भेट स्वीकार करते हुए पुण्यतीर्थों में स्नान करने लगे।

१८ पावन गंगा नदी में उगे हुए पद्मों पर भ्रमर गुंजार करके उड़ रहे थे। उस समय वे काले भ्रमर ऐसे दिखाई देते थे, मानो पवित्र भागीरथी में स्नान करने वाले लोगों के पाप उड़-उड़कर चले जा रहे हों।

१९ सागर पत्नी त्रिपथगा को आनन्दित नेत्रों से देख अर्जुन अत्यंत पुलकित हुए और भागीरथी की प्रशंसा करने लगे।

२० गंगा को देख अर्जुन सोचने लगे-पवित्र गंगा में स्नान करने से जो पुण्य प्राप्त होता है उससे बढ़ कर और कोई पुण्य नहीं है। यह सोच कर परिजनों की सहायता से स्नान करने के लिए उद्यत हुए।

कंदपद्यमु : २१ भोगवतिनुंडि येप्पुडु
भागीरथि कडकु वच्चि भासिलु मुन्ने
नागकुमारिक यय्येल
नाग युलूपि तमि नोक नाडट जेंतन्

आटवेलदिगीतम्: २२ हिमर सैक सैकतमु नंदु विहरिंचु
कैरवेषु वेषु घननिभांगु
नेनरुदवुल ह्वुलने चूचि क्रीडिगा
नेरिगि यौर ! यौरगेंदुवदन

कंदपद्यमु : २३ मुनु द्रौपदी स्वयंवर
मुन वेगिन कामरूप भोगुलवलन
न्विनियुन्न कतन दमकमु
मनमुन बेनगोनग जेरि मायान्वितयै ।

उत्पलमाला : २४ गुट्टसियाड गब्नि चनु गुब्बलपै बुलकांकु रावळुल्
तेट्टुवगट्ट गोरिकलु तेटलु वेट्टग वेडुकल्मदि
न्दोट्टि कोनंग नच्चेरुवु तोंगलि रेप्पल वीग नोत्तगा
वेट्टिन दंड दीयक विभीत मृगेक्षण चूचे नातनिन्

कंदपद्यमु : २५ एणाक्षि नपुडु वेडसिं
गारिंग गोनि यलरु दूपुगमि जक्केरये
खाणमुगा गलिगिन कं
खाणपु दोर पिंज पिंज गाडग नेसेन्

उत्पलमाला : २६ पैपयि गौतकंबु दयिवारि यिट्टुंडग नंत मज्जनं
बै पुवुजप्परम्मुन नोयारमुगा गयिसेसि दानली
लापरतंत्रुडै कलकलन्नगुचुंडेडि सव्यसाचि निं
द्रोपल रोचि जूचि तलयूचि युलूचि रसोचितंबुगन्

कंदपद्यमु : २७ सिग संपेग पूलोसपरि
वग कस्तुरिनाम मोरपु वलेवाटौरा !
सोगसिडै लुंडगवले ननि
सोगसि लतातन्वि यतनि सोगसु नुतिंचेन्

२१ पाताल लोक की राजधानी भोगवती नगरी से भागीरथी में स्नान करने की इच्छा से नाग कुमारी 'उलूपी' नित्य आया करती थी। उसी प्रकार वह एक दिन स्नान करने के लिए आई—

२२ उसने ओस से भींगे हुए रेतीले टीले पर शुभ्र कमल की तरह रमणीय धनुर्धर कामदेव के वेष में अत्यंत रूपवान् अर्जुन को देखा।

२३ उस नाग कन्या ने उन नागों से अर्जुन की सुन्दरता के बारे में पहले ही सुन लिया था जो द्रौपदी के स्वयंवर में गये थे, आज उनको सामने देखते ही उसके मन में मोह पैदा हो गया और वह माया धारण कर अर्जुन के पास पहुँची।

२४ उसको देखते ही उलूपी का शरीर पुलकित हो गया। उसके मन में असंख्य कामनाएँ पैदा होने लगीं। वह भयभीत मृगी की भांति विचलित नेत्रों से अर्जुन की ओर एक टक देखती रही।

२५ उस समय पुष्पधन्या कामदेव ने उस मृगनयनी उलूपी के हृदय को अपने बाणों से घायल कर दिया।

२६ उलूपी के हृदय में कुतूहल बढ़ता जा रहा था। उसने स्नान करके पुष्पों से अपने केशों को अलंकृत किया। उसने शृंगार के अनुरूप अपनी रसीली दृष्टि से दान शील तथा प्रफुल्लित मुखवाले नील मणि जैसे कांतिवान् अर्जुन को देखा।

२७ भाल पर सुन्दर कस्तूरी का तिलक, अर्जुन की सुन्दरता और उसके पीताम्बर को देख वह लता के समान शरीरवाली उलूपी परवश हो कर अर्जुन की प्रशंसा करने लगी।

कंदपद्यमु : २८ राकोमरु नेरुलु नीलपु
राकोमरु निरांकरिंचु; राकाचंद्रन्
राकोट्टु मोगमु; केंजिगु
राकुगनि पराकुसेयु नौर ! पदंबुल्

उत्पलमाला : २९ तीरिचि नट्टुलुन्नविगदे कनुबोम्मलु कन्नुलटिमा
चेरल गोल्वगावलयु जेतुलयंदुमु जेप्पगिप्परा
दूरुलु मल्लिवेसिनट्टु लुन्नवि; बापुरे ! रोम्मुलोनिसं
गारमु ! शेषुडे पोगडगावले नीतनि रुपरेखलन्

कंदपद्यमु : ३० अकटा ! नन्नित डेलिन
नोकटा नच्चिकमुलेक युंडगवच्चुन्
निकटा मृत धारलु मरु
नि कटारि मेरुंगु लितनि कटाक्षंबुल्

उत्पलमाला : ३१ आदरहास चंद्रिकल यंदमु नाप्तुल मीद जिल्कुन
त्यादरशीतलेक्षण सुधारसधारयु जूडजूड ना
ह्लादमु गोल्पगागल कलामहिमंबु दलंचिचूचिन
न्मादिरि सेयवच्चु जननाथु मोगंबुनु जंद्रबिंबमुन्

उत्पलमाला : ३२ ऊदुकपोवुशंखमुनहो ! गळरेख; शरासनंबुलन्
वादुकु बट्टु कन्बोमल वैखरि वंकल दीरूचु गटा
क्षोदय लील सायक समूहमुलन्विषमास्त्रुगेल्चुबो
येदोर साटि यीनरुन केन्नग वीर विलास संपदन् ?

उत्पलमाला : ३३ कम्मनि जाल्लुवा नोगयगल्गिन चेविकलिटेक्कुवाडु चो
क्कम्भगु जातिकेंपु वेलगा गोनुमोवि मेरुंगुवाडु स
त्यम्भुगु रूपसंपद धनाधिपसुनुनि धिक्करिंचुवा
डम्मकचेल्ल ! ना हृदय मम्मक चेल्लदु वीनि किय्येडन् ।

सीसपद्यमु : ३४ मुद्दाडवलदेयी मोहनांगुनि मोमु
गंडचक्केर मोवि गल फलंबु
रमियिंपवलदे यीरमणु पेरुरमुपै
वलि गुब्ब पालिंड्लु गल फलंबु
शयनिंपवलदे यीप्रियुनि संदटिलोन
गप्पु पेन्नेरिकोप्पुगल फलंबु

२८ वीर राजपुत्र अर्जुन के केश नीलमणि के समान सुन्दर हैं। उसका मुखमंडल पूर्णिमा के चन्द्र को पराजित करनेवाला है। उसके पादपद्म नई कोंपलों का तिरस्कार कर रहे थे।

२९ अर्जुन की भौंहें, धनुष जैसी और नेत्र विशाल हैं। उसके हाथों की सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। उसके वक्ष आदि का वर्णन करना शेष के लिए ही संभव हो सकता है।

३० अर्जुन की तिरछी नजर इतनी सुन्दर है कि वह उलूपी को अत्यन्त आनन्ददायक लगी। उसकी दृष्टि पास में बहने वाली अमृत-धारा जैसी है और वह उलूपी के हृदय में कामवासना पैदा कर रही है।

३१ जैसे चन्द्रमा में चाँदनी, अमृत और सोलह कलाएँ हैं वैसे ही अर्जुन में प्रफुल्ल मुस्कान, शीतल दृष्टि और रूप की अतिशयता है।

३२ अर्जुन का कंठ शंख का स्मरण दिलाता है। उसकी भौंहें धनुष जैसी हैं धनुष और बाण विद्या में, वीरत्व में, सुन्दरता में किसी में भी देवता वंश के कामदेव मानव अर्जुन की तुलना में नहीं आ सकते हैं। बाण विद्या, वीरता और सुन्दरता में मानव अर्जुन की तुलना देववंशीय काम नहीं कर सकते।

३३ अर्जुन के कपोल खरे सुवर्ण का तिरस्कार कर रहे हैं। उसके ओष्ठ लालमणि का स्मरण कराते हैं। वह रूप में कुबेर पुत्र नलकूबर का तिरस्कार कर रहा है। ऐसे सुन्दर पुरुष के हाथों में मुझे बिकना ही पड़ेगा।

३४ सुन्दरता की प्रतिमूर्ति अर्जुन का मुख मण्डल इतना सुन्दर है कि चूमने की इच्छा होती है, उसकी गोद में सो जाने की इच्छा होती है। उस रसिक के साथ क्रीड़ा करने की इच्छा होती है। उसके रूप का पान करने की इच्छा होती है। राजसी गुणों से प्रकाशित इस राजा के साथ मन भर क्रीड़ा करने की इच्छा होती है इसकी संगति से देवताओं के लिए भी अलभ्य सुख और ऐश्वर्य का भोग किया जा सकता है।

वसियिंपवलदे यीरसिकु नंकमुनंदु
जेलुवंपु जघनंबु गल फलंबु
राजसमु तेजरिल्लु नी राजु गूडि
यिंपु सोपुलुवेलय ग्रीडिंपवलदे ?
नाकलोकंबु वारिकि नैनलेनि
यलघुतर भोग भाग्यमुल् गल फलंबु

कंदपद्यमु : ३५ अनि इट्टु लुव्विळ्ळूरेडु
मनमुन गोनियाडि यंतमापटिवेळं
गनुब्रामि चोक्कु जल्लिन
यनुवुन नंदरु विताकुलै युंडंगन्

चंपकमाला : ३६ इट्टु जपियिंचि नंन्विडुतुने निनुने निक नंचुजाह्नवी
तटमुन संध्यवार्चि जपतत्परुडै तगुवानि, यामिनी
विटकुल शेखरुं गोनुचु वेपुरिकिंजनि निल्पेनट्टेयु
न्नटुलने माय यच्चुपड नल्ल भुजंगि निजांगणंबुनन्

कंदपद्यमु : ३७ निलिपिन जप मेप्पटिवले
जलिपिन वाडगुचु बाकशासनि यंतं
दळुकुंबिसाळुवालुं
देलिगन्नुलु विच्चि चूचे निव्वेर तोडन

सीसपद्यमु : ३८ दट्टंपु देलिनीटि तरग चाल्कडकोत्ति
नेलराल जगति दा निलुचुटेमि ?
कोलकु दामर गंदमुलु ग्रिंदब्रडवैचि
कपुरंपु दावि दा गावियु टेमि ?
चिवुरु जोंपपु मावि जीबु मायमु से स
पसिडि युप्परिग दा ब्रब्रलुटेमि ?
निद्दंपु टिसुमुतिन्नियपान्पु दिगद्रावि
यलरुल पान्पु दाह्चुटेमि ?
मसमसक संजकेंजाय मरुगुवेट्टि
मिसिमिकेंपुल कांति दामेरयुटेमि ?
मोदल ने गंगतटि नुन्न यदियु लेदो
माययो काक यिदि यंचु मरलिचूड

३५ वह अपने मन में अर्जुन की प्रशंसा करती रही। धीरे धीरे संध्या हो गयी। सभी लोग अपनी सुध भूल कर सो रहे थे। ऐसी हालत में उलूपी ने माया से—

३६ संध्यादि नित्य-नैमित्तिक कर्मों में मग्न चन्द्रकुल भूषण अर्जुन को बहुत जल्दी जाह्नवी तट से उठा कर अपने घर के आंगन में ला बैठाया।

३७ अर्जुन जप में मग्न थे, उनका ध्यान भंग नहीं हुआ। जब इन्द्र पुत्र अर्जुन का जप समाप्त हो गया तो उन्होंने अपने कान्ति पूर्ण नेत्रों को खोल कर आश्चर्य से देखा।

३८ अर्जुन के निकट गंगा की लहरों का कंपन नहीं था वह था चन्द्रकान्त मणियों से सजाया गया फर्श। तालाब के सुन्दर कमलों की सुगन्धि नहीं थी, वहां थी कस्तूरी, चन्दन आदि की सुरभि। वहां नई नई कोंपलों की मंजरियों से पूर्ण आम्र वृक्षों के पुञ्ज के स्थान पर सोने के महल थे। अर्जुन पहले रेतीले टीले के बिछौने पर सोये हुए थे, लेकिन अब फूलों का बिछौना था। सांयकाल की धुंधली व अरुणा कांति के बदले नव रत्नों के प्रकाश से वह स्थान जगमगा रहा था।

सीसपद्यमु : ३६ बेळुकुगाटुक कंटिसोलपु जूपेदलोन
बट्टि युंडेडि प्रेम बट्टियीय
जिकिलि बंगरुवात जिलुगु टोय्यारंपु
बैट गुब्बलगुट्टुब्रयटवेय
सोगसु गुच्चेल नीटु वगलु कन्नुलपंडु
गलुग मायपु गौनु गलुगजेय
निडुद सोग मेरुंगु जडकुच्चु गरुवंपु
बिरुदु रेखकु गेल्पुबिरुदु चाट
गंट सरिनंटु कस्तुरि कम्म वलपु
कप्पुरपु वीडियपुदावि गलसि मेलग
नोरपुलकु नेल्ल नोज्जयै युंडेनपुडु
भुजग गजगामिनि मिटारि पोलुपु मीरि

कंदपद्यमु : ४० अटुलुन्न कोमरु ब्रायपु
गुटिलालक जूचि मदन गुंभित माया
नटनंबो यिदि गंगा
घटनंबो यनि विचार घटनाशयुडै

उत्पलमाला : ४१ तिय्यनि विंटिवानि वेनुतिय्यक दग्गर जालु नय्यसा
द्याय्य तनू विलासि दरहासमु मीसमु दीर्प नप्पुडा
तोय्यलिवंक गन्गोनि 'वधूमणि ! येव्वरिदान वीवु ? पे
रेय्यदि ! नीकुनोटि वसियिंपग गारण मेमि ?' नावुडुन् ?

उत्पलमाला : ४२ मेलि पसिंडि गाजुलसमेळपु बच्चल कील्कडेंपुडा
केलु मेरुंगु गब्बि चनु ग्रेवकु दार्चुचु सोग कन्नुलं
देलग चूचि यो मदवती नव मन्मथ ! यी जगंबु पा
ताळमु; ने नुलूपि यनुदान, भुजंगम राज कन्यकन्

कंदपद्यमु : ४३ सरिलेनि विलासमु गानि
वरियिंचिट दोडि कोनुचु वच्चिति निन्नो
कुरवीर ! वसिंपग नी
कुरुवीर दृढांक पाळि गोरिन दानन्

उत्पलमाला : ४४ मंपेसगन् गटाक्ष लव मात्रमु चेतने मुच्जगंबु मो
हिंपग जेय भारमिक नीवु वहिंचिति गान गेळिनी

३६ नाग कन्या उलूपी अपने कान्त नेत्रों को काजल से अलंकृत करके उन नेत्रों से अपने मन का प्रेम जता रही थी। उसका पतला और सुन्दर जरी के काम से शोभित अंचल था। उसके कंठ में माला तथा ललाट पर कस्तूरी का तिलक था। वह सभी अवयवों को उचित आभूषणों और वस्त्रों से अलंकृत करके जगमगा रही थी।

आलिंगन निबन्ध

४० अपने सामने अल्पायु की सुन्दर तरुणी उलूपी को देख अर्जुन सोचने लगे कि यह कामदेव का इन्द्रजाल तो नहीं है। वे विचारमग्न हो गए।

४१ कामदेव के बाणों से हत-हृदय होकर तथा उसके प्रहारों को सहन करने में अपने आप को असमर्थ पाकर अनन्त सौन्दर्यवान् अर्जुन ने मूछों पर ताव देते हुए मुस्कुराकर उलूपी की ओर देखा और पूछा---हे बाले! तुम कौन हो तुम्हारा नाम क्या है? तुम अकेली क्यों रहती हो?

४२ विशुद्ध सुवर्ण की बनी अपनी चूड़ियों को संभालती हुई और अपने वाम हस्त से धीरे धीरे आंचल को संभालती हुई उस नारी ने भावपूर्वक तिरछी नजरों से देख कर उत्तर दिया। युवतियों के लिए कामदेव; यह पाताल लोक है। मेरा नाम उलूपी है। मैं नागराज की कन्या हूँ।

४३ हे कुरुवीर अर्जुन, तुम्हारे अपूर्व सौन्दर्य को देख मोहित होकर मैं तुम्हें यहाँ लाई हूँ। तुम्हारे साथ आनन्द-सागर में गोता लगाना चाहती हूँ। तुम मुझे गले लगा कर मेरी कामना की पूर्ति करो।

४४ काम देव अपने पुष्प-शरों से त्रिभुवन को वश में करते हैं, परन्तु तुम (अर्जुन) अपने कटाक्ष से ही तीनों लोकों को मोहित कर रहे हो; इसीलिए तुम काम-

चंपकगंधि बित्तरपु जन्नुलमीद सुखिंचु चुंड्डु ना
संपेग मोग्ग मुल्कि गड सामरि सोमरि गाक युंडुने ?

कंदपद्यमु : ४५ अनु नेच्चेलि वावयंबुलु
विनि यच्चेरुवोंदि 'रूप विभ्रम रेखा
खनुलेंदु नागकन्यले'
यनि विंदुमु; नेडु निक्कमय्येन् जूडन्

कंदपद्यमु : ४६ अन्नन्न । मोगमु वेन्नुनि
यन्नन्न जयिंचु गन्नुलञ्ञ न्नलिना
सन्नमुलु; नडुमु मिक्किलि
सन्नमु; माटलु सुधा प्रसन्नमु लेन्नन्

आटवेलदिगीतम् : ४७ नुव्वु बुव्वु नव्वु जव्वनि नासिक
चिवुरु रुवुरु जवुरु नुविद मोवि
मब्बु नुब्बु गेब्बु बिब्बोकवति वेणि
मेरपु नोरपु बरपु देरव मेनु

कंदपद्यमु : ४८ खरखलु नेरपु नीलपु
खरखरणमु तोड जेलि यराल कच्चंबुल्
कच कच नव्वुन् वलि ज
क्कवक्कव गलकंठकंठि कठिन कुचंबुल्

उत्पलमाला : ४९ चेक्कुल यंदमुन् मोगमु चेल्वमु जग्गव नीड्डु वेणि ती
रेक्कड जूड; मन्निटिकि नेक्कुवदेमन सैकतंबु तो
नेक्कटि कय्यमुल् सलुपु निक्कटि योक्कटि चालदे मरुं
डक्क गोनन् रतिगोलन्चि डक्क गोनन्नव मोहनांगिकिन्

चंपकमाला : ५० अनि मदि मेच्चि योच्चे मोक यंदुनु लेनि मनोहरांगमुल्
गनुगोनि यौनेका व्रतमु गैकोनि युंडेडि नन्नु नेल तो
डुकोनि यिट देच्चे नीवेडगु गोमलि भूजग मेड ? मारुता
शन जगमेड ? नेंत घन साहस मिंतुल कंचु नेंचुचुन्

कंदपद्यमु : ५१ कामुकुड गाक व्रति नै
भूमि प्रदक्षिणमु सेय बोयडि वानिं
गामिंचि तोडि तेंदग
वा मगुव विवेक मिंचु कैनन् वलदा ?

देव से भी अधिक सन्तम हो। यही सोचकर शायद कामदेव रति के साथ सुखभोग करते हुए विश्राम कर रहे हैं।

४५ उलूपी से ये बातें सुनकर आश्चर्य के साथ अर्जुन ने कहा—मैंने सुना था नागकन्याएँ सौन्दर्य की खान होती हैं उस बात को मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। सुनी हुई बातें आज सत्य मालूम हो रही हैं।

४६ अहा, इस सुन्दरी का मुख मंडल विष्णु-माया लक्ष्मी के भाई चन्द्रमा से भी सुन्दर है। इसके नेत्र कमल के समान हैं। कमर पतली है और इसके सुधा अमृत जैसे वचन अत्यंत शीतल और सन्तुष्ट करने वाले हैं।

४७ इस युवती की नासिका तिल के फूल के समान है। इसके ओठ नव पल्लव के समान कोमल और सुन्दर हैं। इसकी वेणी मेघों के घमंड को भी चूर्ण करनेवाली है। इसके शरीर की कान्ति बिजली के प्रकाश को भी मात करने वाली है।

४८ युवती के केश नीलमणि के समान दिखाई देते हैं। इसके कुच चक्रवाक पक्षियों के जोड़े का परिहास कर रहे हैं।

४६ कपोलों एवं मुखमण्डल की सुन्दरता, कुच द्वय की रमणीयता और वेणी की रचना देखने से ऐसा मालूम होता है कि इस प्रकार की नारी को मैंने आज तक कहीं नहीं देखा सब से बढ़ कर इसकी जंघाएँ सैकत शय्या से लड़ने के लिए भी पर्याप्त हैं। कामदेव को जीतने और अपनी विजय दुन्दुभि बजाने में इस सुन्दरी की वह जंघाएँ समर्थ हैं।

५० इस प्रकार 'उलूपी' के कोमल अवयवों की मनोहरता को देख अर्जुन मन में अत्यन्त प्रसन्न हुए उस नागकन्या से उन्होंने पूछा—हे भद्रे, इस समय मैं व्रती हूँ। मुझे तुम यहाँ क्यों लाई हो ? पगली ? भूलोक कहाँ और नागलोक कहाँ ? तुमने मुझे यहाँ लाने का कैसा अपूर्व साहस किया ?

५१ हे सुन्दरी मैं कामी नहीं हूँ। व्रत धारण करके पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने जा रहा हूँ। तुम मुझ पर मोहित होकर यहाँ लाई हो। तुमने यह विवेक का काम नहीं किया।

उत्पलमाला : ५२ नावुडु मोमुनन् मोलक नव्वोलयन् वलि गब्बि गुब्बचन्
ठीविकि गानटिंचुक नटिंचुकवुन् गनिपिंप ब्रल्के रा
जीवदळाक्षि ! यो रसिक शेखर यो जन रंजनैक ली
लावहरूप ! यो नुतगुणा ! तगुना यिटुलान तीयगन्

कंदपद्यमु : ५३ निनु गीति साहिती मो
हन वाणुलु चेवुलु वट्टि याडिंपंगा
गनियुंडि कामुकुडु गा
ननि पल्किन नाकु नम्मि कौने नृपाला ?

कंदपद्यमु : ५४ अतुलित विलास रेखा
कृतुलुन् वलपिंचि यिट्टुल द्रिभुवन लीला
वतुल नलयिंचु टेना
व्रत मनगा नीकु रूप वंचित मदना !

चंपकमाला : ५५ तेलियनि दान गानुः जगतीवर ! द्रौपदि यंदु मुंदु मी
रलुसमयंबु सेयुट; द्विजार्थमु धर्मजु पान्पुटिंटि मुं
गल जनि शस्त्रशाल विलु गैकोनु; टंदु निमित्त मीवु निं
श्चलमति भूप्रदक्षिणमु सल्पग वच्चुट ने नेरुंगुदुन्

गीतपद्यमु : ५६ चेरकु विलुकानि बारिकि वेरचि नीदु
मरुगु जेरिति; जेपट्टि मनुपु नन्नु
बाण दानंबु कन्नानु व्रतमु गलदे ?
एरुगवे धर्म परुडवु नृपकुमार !

उत्पलमाला : ५७ नायमेनीकु मेल्पडिन नाति नलंचुट यंत्र मत्स्यमुन्
मायगजेसि मुन् द्रुपदनंदन नेलवे यंगभूपता
कायत यंत्र मत्स्य मिपुडल्लन द्रेळ्ळगनेसि येलुको
तीयग बंचदार वेनुतीयग बल्कि ननुन् द्वितीयगन्

कंदपद्यमु : ५८ अनुडु नुडुराजकुलपा
वनुडु समस्तम्मुनेरुगु वलतिविगद ! यी
यनुचितमु तगुने परमति
नेनयुट राजुलकु धर्ममे यहिमहिला ?

५२ अर्जुन की बातें सुन उभरी हुई छाती को और अधिक फुला कर मन्द हास के साथ उस कमलाक्षी ने कहा—हे रसिक शेखर, लोगों को संतुष्ट करनेवाले, विलासत्तम अर्जुन, हे गुणनिधि, इस प्रकार की बातें तुम्हें शोभा नहीं देतीं।

५३ हे राजा, तुम से भी बड़े लोग सुन्दरियों के हाथों में बिक गए हैं और उन सुन्दरियों ने उनके कान पकड़ कर अपना ईप्सित कार्य करवाया है। ऐसी अनेक घटनाओं को मैंने देखा है ऐसी स्थिति में तुम्हारा यह कहना कि मैं कामी नहीं हूँ मैं कैसे विश्वास कर सकती हूँ।

५४ तुम अपूर्व विलास, रूप तथा सुन्दरता के कारण दूसरों को मोहित करते हो। हे कामदेव से श्रेष्ठ सुन्दर पुरुष, तुम्हारे व्रत का मतलब क्या तीन लोक की सुन्दरियों को थकाना और तंग करना ही है।

५५ हे राजा, मैं मूर्ख नहीं हूँ। द्रौपदी के साथ तुम भाइयों ने एक-एक वर्ष तक रहने का जो प्रबन्ध किया है। ब्राह्मण की गाय प्राप्त करने के लिए तुम शस्त्र लाने युधिष्ठिर के शयन-गृह की ओर गए थे। इसीलिए तुम्हारे जैसे पवित्र हृदय को पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने के लिए निकलना पड़ा। इन सबसे मैं भली भाँति परिचित हूँ।

५६ हे नृपवर, कामदेव के प्रहारों से डर कर मैं तुम्हारी शरण में आई हूँ। मुझे स्वीकार करके मेरे प्राणों की रक्षा करो। मेरे साथ विवाह करो। इसी में मेरी रक्षा है। क्या मेरे प्राण-दान से भी कोई महान् व्रत है।

५७ हे राजकुमार प्रेम करनेवाली नारी की इस तरह उपेक्षा करना उसे थका देना क्या तुम्हारे लिए न्याय संगत है? तुमने मत्स्य वेध कर द्रुपदतनया से विवाह किया और इस समय कामदेव के महान् मत्स्यध्वज को तोड़ कर मुझे स्वीकार करो। मधुर वचन बोल कर मेरा पाणि ग्रहण करो। मुझे दूसरी पत्नी के रूप में स्वीकार करो।

५८ उलूपी के वचन सुन कर चन्द्रकुल भूषण अर्जुन ने कहा—हे नागकन्ये, तुम सब कुछ जानती हो तुम्हारा इस तरह कहना ठीक नहीं है। पर सती को पाना क्या राजाओं के लिए युक्ति संगत है? क्या यह अनुचित ठीक है?

चंपकमाला : ५६ अनविनि पाप पूप जवरालेदलो वलपाप लेक या
तनि तेलिमुद्दु नेम्मोगमु दप्पकतेट मिटारि कल्कि चू
पुन दनिवारजूचि नृप पुंगव ! यन्निटजाण ! वूरके
यनवल संटिगा केरुगवा योकमाटने मर्म कर्ममुल् ?

उत्पलमाला : ६० कन्नियगानि वेरोकते गानु मनोहररूप ! नीकु नै
जन्नियपट्टियुंटि नेलजव्वनमंतयु नेटिदाक ना
कन्नुलयान नावलपुगस्तुरिनाममुतोड्डु नम्मु का
दन्नु नीदुमोवि मधुरामृत मानिट ब्रास सेसेदन्

चंपकमाला : ६१ इलपयि मत्स्ययंत्र मोकयेट्टुन नेसि समस्त राजुलन्
गेलिचिन मेलुवार्त लुरगीवर गीतिकलुग्गडिंप वी
नुलनवि चल्लगा विनि निनुन् वरियिंप मनंबु कल्गि नी
चेलुवमु व्रासि चूतुनदे चित्तरुवंदु ननेक लीललन्

उत्पलमाला : ६२ चेप्पेडिदेमि नावलपुचेसिन चेतलु कोल्वुलोन नि
न्नेप्पुडु गंटिनप्पुडु पयिंब्रड नीडिचे निल्वबट्टु पा
टप्पु डदेंतयैन गल दट्टि हलाहलि किंतसेपु नी
वोप्पेडिदाक दाळुटकयो ! मदिमेच्चवुगा नृपालका !

आटवेलदिगीतम् : ६३ अनिन फणि जातिवी वेनु मनुज जाति;
नन्य जाति ब्रवर्तिचुटर्हमगुने ?
येलयीकोर्कि यनिन राचूलि कनिये
जिलुव चेलुवंपु बल्कुल जिलुवचेलुव

उत्पलमाला : ६४ येमनब्रोयेदं दगुल मेंचक नीविटुलाड दोल्लि श्री
रामु कुमारुडैन कुशराजुवरिंपुडे मा कुमुद्वतिन् ?
कोमल चारु मूर्ति पुरुकुत्सुडु नर्मद बेंड्लियाडडे ?
नी मनसोक्कटे गरुगनेरदु गानि नृपालकाग्रणी !

उत्पलमाला : ६५ ई कलहंसयान ननु नेक्कडि केक्कडिनुंडि तेच्चे ? ना
हा ! कड्डदूर मिप्पुडनि यक्कुनजेर्पक जंपुमाटलन्
व्याकुल बेट्टुटेल विरहांबुधि मुंपक पोदु नन् जलं
बेकद नीकु मंचिदिक नीतकु मिक्किलि लोतुगल्गुने ?

५६ अल्पायु की वह नागकन्या अपने मोह को दबाने में असमर्थ थी। उसने अर्जुन के कान्त और अत्यन्त आकर्षक चेहरे को एकटक देख कर कहा—हे राजोत्तम, तुम सभी विषयों में कुशल हो। कुछ जवाब देना था; इसलिए कुछ बतला दिया। तुम पहले ही मेरी व्यक्त तथा अव्यक्त भावनाओं से क्या परिचित नहीं हो ?

६० हे सुन्दर स्वरूप, मैं अविवाहित कन्या हूँ। मैंने अपने सम्पूर्ण यौवन के साथ तुम्हारी ही प्रतीक्षा में दिन बिताए हैं। मैं अपनी आँखों और अपने तिलक की शपथ लेकर कहती हूँ कि मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रही थी। यदि इन शपथों में तुम्हें विश्वास न हो तो मैं तुम्हारे अधरामृत का पान करके शपथ लूँगी।

६१ मत्स्य यंत्र को एक ही बाणके द्वारा तोड़ कर जब तुमने समस्त राजाओं को जीत लिया तब इस समाचार पर नागकन्याओं ने अनेक गीत बनाकर गाये। उन वृत्तांतों को सुन कर मेरे मन में तुम्हारे प्रति प्रेम पैदा हो गया। मैंने उसी समय चित्र में तुम्हारी अनेक प्रकार की लीलाओं का चित्रण कर रखा है। चाहो तो तुम देख सकते हो।

६२ हे नृपवर, अपने प्रेम तथा अपने किए हुए कार्यों का विवरण मैं नहीं देना चाहती। जब तुम अपने परिचारकों सहित गंगा के तट पर थे उसी समय मैंने तुमको देखा तभी मैं तुम पर मोहित हो गई। उस समय मेरा शरीर पुलकित हो गया। मैं अपने प्रेम को दबा नहीं सकी। तुम्हारे ऊपर गिरने ही वाली थी परन्तु किसी तरह मैंने अपने को सँभाल लिया। तुम्हारी स्वीकृति प्राप्त करना भी मेरे लिए असह्य था। हे राजा, मुझे स्वीकार करो मेरी कामना पूरी करो।

६३ इस पर अर्जुन ने कहा-हे नागवंश की कन्या, तुम नाग जाति की हो और मैं मानव हूँ, इस लिए हम दोनों के बीच संबध कैसे हो सकता है ? क्या तुम्हारा यह आचरण उचित है ?" इन बातों को सुन कर नागकन्या ने चमत्कार पूर्ण ढंग से कहा—

६४ हे 'नृपवर' मेरे प्रेम का कोई मूल्य न दे कर इस प्रकार कठोर वचन कहने पर मैं तुम्हें क्या उत्तर दूँ ? क्या प्राचीन काल में मेरी जाति की कुमद्वती नामक कन्या से रामचन्द्र के पुत्र कुश ने विवाह नहीं किया था ? और सुकुमार एवं सुन्दर पुरुष पुरुकुत्स ने नर्मदा से पाणिग्रहण नहीं किया था ? अकेले तुम्हारा हृदय ही द्रवीभूत नहीं होता।

६५ इस हंस गतिवाली उलूपी ने किस लोक से किस लोक में पहुँचा दिया; मैं बहुत दूर आ गया हू। यह कह कर मुझे व्याकुल बना रहे हो। तुम्हारे स्वीकार न करने से वियोग के समुद्र में डूब ही जाऊँगी। तुम्हारी अटल प्रतिज्ञा से मेरी मृत्यु निश्चित है।

चंपकमाला : ६६ अनि वचियिंचु नप्पुडु मुखाब्जमु नंटेडि विन्नबाटु च
क्कनि तेलिसोग कन्नुगव ग्रम्मुचु नुंडेडि भाष्पमुल् गळ
बुन गनिपिंचु गद्गदिक मुप्पिरि गोन्वलवंत देल्प नि
ट्लनु मदिलो गरंगि रसिकाग्रणि या करभोरु भोरुनन्

उत्पलमाला : ६७ चक्केर बोम्म ! नाव्रतमु चंदुमु देल्पिति; नंते काकनी
चक्कदनंबु गन्न निमुसंबयिन न्निलु पोप शक्यमे
यक्कुन जेर्प ? कंचु दयनानितियी दल वंचे नंत लो
नेक्कड नुंडि बच्चे दरलेक्षणकुन् नुनु सिग्गु दोंतरल ?

उत्पलमाला : ६८ अंकि लेरिंगि यासरसुडंत 'विवाह विधिज्ञुडैन मी
नांकु डोनर्चि नाडिदि शुभैक मुहूर्तमु' रम्मटंचु ब
यंकमुमीद नच्चेलि गर ग्रहणं बोनरिंचे दन्मणी
कंकण किंकिणी गण विकस्वर सुस्वरमुल्सेलंगगन्

मत्तेभविक्रीडितम् : ६९ ओक माणिक्यपु बोम्म येट्टिवग कीलो जाळुवा जालव
ल्लिक बागाल् कपुरंपुटाकुमड्डुपुल् वेतेंच्चि राजुन्नचा
यकु नंदीय नतंड्डु लेनगवुतो नावेळ नाव्यालक
न्यक केंगेल नोसंगि कैकोनिये सय्याटंबु वाटिल्लगन्

उत्पलमाला : ७० शय्यकु दार्पगा दुरुमु जारे दनंतट; जक्कदिद्द
बो बय्येद जारे; नय्यदिरिपाटुन ग्रक्कुन नीवि जारे रा
जय्येड नव्विलासिनि योयारमु जून्चि कवुंगिलिंचे; नौ
नेय्येड मेले चूतुरु ग्रहिंपरु जाणलु जारु पाटुलन्

उत्पलमाला : ७१ कौगिट जेर्चु नप्पटि सुखंबे लतांगिकि बारवश्यमुन्
मूगग जेसे; मोविपलुनोक्कु लुरोजनखांकमुल्मोदल्
गागल कंतु केलि सुखलक्षणमुल् पयिपेच्चु लय्येन
ट्लौगद येट्टिवारलकु नग्गल पुंदमि गल्गि युंडिनन्

चंपकमाला : ७२ चनुगव सामुकेडेपु बिसालि युरंबुन सारे गान ने
मन सुनुपुन्; सुधारसमु माटिकि ग्रोलने चूचु जोक्कु गी
ल्कोनु सरसोक्तुलन्विनने कोरु सदा; यिट्टुलादिसंग मं
बुनने विभुंड्डु मूडुवलपुल् वलचेन् फणि राजकन्यकन्

६६ इन वचनों के बोलते समय उलूपी के मुखारविन्द पर चिन्ता की रेखाएँ छा गईं और उसके सुन्दर व शुभ्र कान्ति युक्त विशाल नेत्रों में आँसू झलकने लगे। और गद्गद् कंठ से उसकी कामवासना बढ़ने लगी। इस दृश्य को देख कर रसिकशिरोमणि अर्जुन का मन द्रवित हो गया। अर्जुन ने उस नागकन्या से कहा—

६७ हे सुन्दरी मैंने अपना व्रत तुम्हें बता दिया। परन्तु तुम्हारे रूप को जिस क्षण मैंने देखा है उसके उपरान्त अपने मन को रोके रखना संभव नहीं है। इन बातों में अत्यन्त दया के साथ अर्जुन ने अपनी सहमति प्रकट की तो उसी क्षण उलूपी ने अपना सिर लज्जा के मारे झुकाया और उस चंचल नेत्रों वाली सुन्दरी में मनोहर लज्जाशील भावनाएँ उत्पन्न हुईं।

६८ इसके उपरान्त रसिकवर अर्जुन ने उलूपी के इशारे को पाकर विवाह विधि के ज्ञाता मत्स्य ध्वज कामदेव का बिठाया गया यह शुभ मूहूर्त मंगल प्रद है कह कर उस युवती को बुलाया और उलूपी के हाथ के रत्नजटित कंकण तथा किंकिणियों से होने वाली मधुर ध्वनियों के मध्य शय्या पर अर्जुन ने उस युवती का पाणिग्रहण किया।

६९ न मालूम वह किस प्रकार का यन्त्र है, रत्न से बनी एक पुतली ने स्वर्ण की थाली में सुपारी तथा पान देकर अर्जुन की ओर बढाई तो उसने मंदहास के साथ उस थाली को नागकन्या के कोमल हाथों में रखा और जब नागकन्या ने थाली से उठा कर पान आदि अर्जुन के हाथों में दिए तो उसने संतोष पूर्वक ग्रहण किया।

७० जब अर्जुन ने उस नारी को शय्या पर लिटाया तो उसका वेणीबन्ध खुल गया। उसे जब ठीक करने लगी तो उसका अंचल हट गया। इस घबराहट में कमर में लपेटी हुई साड़ी का बन्ध ढीला हो गया। उस समय अर्जुन ने उस सुन्दरी को देख अत्यन्त प्रेम के साथ उसका आलिंगन किया। किसी भी स्थिति में बंधों के छूटते समय उस ओर रसिकों का ध्यान नहीं जाता। यदि जाता है तो खुले हुए अवयवों की ओर ही।

७१ वह लतांगी उलूपी जब अर्जुन के गाढ़ालिंगन के सुख में तल्लीन हो परवश हो गई तब उसके अधरों पर अंकित दंतक्षत तथा उरोजों के नखक्षत काम क्रीडा के सुख की और भी वृद्धि हुई। मोहाधिक्यता से प्रत्येक की यही स्थिति होती है।

७२ अर्जुन उलूपी के कुचद्वय का बार बार अपने विशाल वक्ष से स्पर्श करते थे। अधरामृत का बार बार पान करते थे। इन क्रियाओं से उलूपी की परवशता बढ़ती जा रही थी और बीच बीच में उसने सरस बातों से उलूपी को अत्यन्त सुख पहुँचाया। इस प्रकार अर्जुन ने नागकन्या उलूपी को प्रथम संगम में ही त्रिविध (देखना, आस्वाद करना और सुनना) भोगों से प्रे[illegible]

गीतपद्यम् : ७३ नागरक मुद्रगल मंचि बागरियट !
नागवासमुलो विंत नटनलदट !
कुलुकु गुब्बल प्रायंपु गोमलियट !
वलचि वलपिंपदे येंत वारिनैन ?

कंदपद्यमु : ७४ ई गति रतिकेळी सुख
सागरमुन देलियुन्न समयंबुन द
द्योगं बेट्टुवंटिदो स
द्योगंभेबुन सुपुत्रु डोक डुदयिंचेन्

कंदपद्यमु : ७५ आचक्कनि बालुडु वा
क्प्राचुर्युमु गांचु ननि शुभग्रह दृष्टुल्
चूचि यिलावंतुंडनि
या चतुरुडु नामकरण मलरंचि यंतन्

उत्पलमाला : ७६ कामिनि जूचि रम्मु गजगामिनि यिक्कड नोक्कना डिकं
दामस मैन नक्कड हितव्रति तीर्थिकोटि यात्मलो
ने मनि येंचुनो ? यिपुड येग वलेन् दरुवात नीसुत
ग्रामणि नीवु वच्चेदरु गाकनि यूरडिलंग बल्किनन्

उत्पलमाला : ७७ अंटिन प्रेम जाह्नविकि नप्पुडतोड्कोनि वच्चि यल्लवा
ल्गंटि निजेश्वरुं दनदु गब्बि चनुंगव जेर्चि भाष्पमुल्,
कंट दोरंगुचुंड दिरुगं दिरुगं गनु गांचु ग्रम्मरन्,
जंट दोरंगि संजनु वेसं जनु जक्कव पेटियुंबलेन्

उत्पलमाला : ७८ अंतट राजुराक गनि यात्म पुरोहित भृत्य वर्ग म
त्यंत मुदम्मु चेंदि यिट्टु लार्तुल गाचुट केमो गाकये
कांतमु गाग नेगुदुरे ? यंचु दलंचिति मीरु वच्चुप
येंतमु मम्मु मे मेरुग मंदर प्राणमु लीव भूवरा !

चंपकमाला : ७९ अनि पलुकं ब्रसन्न मुखुडै विभु डिष्ट सखुन्विशारदुं
गानि योक विंत विंटे ? फणि कन्य युलूपि यनंग नोर्तुन
न्गोनि तम नागलोकमुनकुंजनि तन्नु रमिंचु मंचु जे
प्पनि प्रिय मेल्ल जेप्पि योड बाटोनरिंचि करंचे डेंदमुन्

७३ चतुरा उलूपी शुभ लक्षणों से युक्त है और अत्यंत रूपवती भी है। नागलोक में वह नट विद्या में निपुण है। सुन्दर कुचद्वय से अल्पायु की नवयौवना प्रतीत होती है। इस लिए उसका किसी से प्रेम करना या किसी पर उसका मुग्ध होना कठिन कार्य है ? चाहे कोई कितना भी बड़ा क्यों न हो उलूपी उसे अपने प्रेम जाल में फँसा सकती थी।

७४ इस प्रकार जब उलूपी और अर्जुन रति के सुख-सागर में गोता लगे रहे थे तो उनके संगम से उलूपी ने गर्भ धारण किया। समय पूरा होने पर उसने एक सुपुत्र को जन्म दिया।

७५ जन्म कुंडली से यह जान कर कि यह बालक वाचाल बनेगा उस शिशु का नाम 'इलावंत' नाम रखा गया। तदनन्तर—

७६ उलूपी को देख कर अर्जुन ने पूछा—हे गजगामिनी, मैं यहाँ अब एक दिन भी नहीं ठहर सकता। यदि देर होगी तो भूलोक में मेरे अनुचर मुनि तथा यात्रियों का समूह अपने मन में क्या सोचेगा ? मुझे अविलम्ब जाना ही होगा। तुम अपने पुत्र के साथ बाद में आ सकती हो। इस प्रकार अर्जुन ने उस कामिनी को सांत्वना पूर्ण वचन कहे।

७७ इस पर उस विशाल नेत्री ने अपने अगाध प्रेम से अपने प्राणनाथ अर्जुन को जाह्नवी नदी के किनारे पहुँचाया। उस समय उस सुनारी के नेत्रों से कुच-द्वय पर अविरल अश्रु धारा बह रही थी। वह अर्जुन को वहाँ छोड़ कर तेजी से लौट रही थी। उस समय ऐसा विदित होता था मानो शाम के समय चकई अपने प्रियतम को छोड़ बराबर पीछे घूम घूमकर देखती हुई वापस लौट रही है।

७८ अपने प्रभु अर्जुन के लौटने पर उनके सम्बन्धी, पुरोहित, तथा सेवकों में अत्यन्त आनन्द छा गया वे कहने लगे—'हे नृपवर, हमने सोचा था कि आप अपने शरणागत की रक्षा के लिए अकेले ही गए होंगे। आपके आने तक हम अपने प्राणों को भी भूल गए थे।

७६ उन लोगों की बातें सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता के साथ अर्जुन ने अपने मित्र विशारद को देख कर कहा—सुनो ! एक रहस्यपूर्ण बात है। उलूपी नामक एक नागकन्या मुझे नागलोक में ले गई और वहाँ उसने पाणिग्रहण करने का अनुरोध किया, उसने अपने अपूर्व प्रेम का परिचय देकर मेरे मन को आकर्षित कर लिया। कुछ काल बाद उसने मुझे बिदा किया।

उत्पलमाला : ८० चेप्पेडिदेमि ? कन्नुगव चेरल केक्कुडु चंद्रबिंबमे
तप्पदु मोमु; मोवि सवता चिवु रेक्कडिमाट ? गोप्प कुं
गोप्प पिरुंदु; गब्बि चनु गुब्बलु कौगिटि केच्चु; जाळुवा
योप्पुल कुप्प मेनु; नडुमुन्नदो लेदो येरुंग निंतकुन्

उत्पलमाला : ८१ चंगुन दाटु चूपु लिरु चक्कनि बेडिसलेमो ? मीटिनन्
ग्रंगन वागु गुब्बलु चोकाटपु दाळमु लेमो ? रूपमा
नंगननैन चेक्किळुलु नाणेपुटद्दमु लेमो ? चोक्कमौ
रंगुन मीरु दानि यधरंबुनु गेंपगु नेमो ? नेच्चेली !

उत्पलमाला : ८२ आयेलनागवेणि मेरुगारु कटारिकिं मावटीडगुन्
बोयनवच्चु; नम्मेरुगु बोडि पिरुंदु समस्त भूमिकिन्
रायलनंग वच्चु; नल राजनिभास्य येलंगु गट्टि वा
कोयिल कंचु कुत्तिकलकुन् बयकाडनवच्चु नेच्चली !

कंदपद्यमु : ८३ मदिराक्षि मोवि जिगि प्रति
वदनमु गाविंचु गीरवदनमु तोडन्
मदनुनि विलु गोनवच्चुन्
सुदती मणि कन्नु बोमल सुदती रेंचन्

चंपकमाला : ८४ अलजड यंदमुन्मेरुगुटारु मिटारमु नाकु मुंदुगा
जिलुव कोलंबटंचु जेलि चेप्पक तोल्तने चेप्पे; दत्तनू
विलसनमेन्न गन्नदियु विन्नदिगा; दिललोलतांगु ल
प्पोलतुक कालिगोरुलकु बोलरु पोलुनो येमो तारकल्

सीसपद्यमु : ८५ मरुनि गेल्पुल कथा महिमम्मु विलसिल्लु
नोरपु जित्तरु ठीविनुल्लसिल्लु
वीनुल कमृतंपुसोनलै वर्तिल्लु
शारिका मुख सूक्ति संदडिल्लु
गस्तूरिकादि सद्वस्तुल ब्रभविल्लु
परिमलम्मुल जोकबरिढविल्लु
जेप्पजूपग रानि सिंगारमु घटिल्लु
पेक्कुशय्यल सोंपु पिक्कटिल्लु
वितहरुवुल पनुलचे विस्तरिल्लु
दिव्य माणिक्य कांतुल देजरिल्लु

८० उस नागकन्या की सुन्दरता के बारे में मैं क्या कहूँ ? उसके नेत्र इतने विशाल हैं कि हथेली से भी बड़े हैं। उसका मुखमंडल चन्द्रबिम्ब के समान है। उसके अधरों के समाने नई कोंपलें भी तुच्छ हैं। उसकी जंघाएँ बहुत बड़ी हैं। उसके कुच आलिंगन में बद्ध नहीं होते, इन अवयवों के बीच ऐसा सन्देह होता है कि शायद उसकी कमर है ही नहीं।

८१ मित्रवर, शीघ्र ही दूर तक फैलनेवाली उसकी दृष्टि दो मछलियों जैसी तो नहीं है ? उंगलियों के अग्रभाग से उसके कुचों पर चुटकी देने से झनकार होती है। ये कुच द्वय सुन्दर ताड़ के फल तो नहीं हैं ? उसका स्वरूप इस समय भी मेरी आँखों में प्रतिबिम्बित हो रहा है।

८२ उस सुन्दरी की वेणी चमकनेवाली तलवार के समान है। उसकी जाँघें सारी पृथ्वी मण्डल की तरह गोल हैं। उस चन्द्र वदनी का कंठ कोयल की कंठ ध्वनि को भी परास्त करता है।

८३ उस मदिराक्षी के अधरों की लालिमा तोते की नाक से भी अधिक लाल है। सुन्दर दंत पंक्ति से युक्त उस नारी की भौंहें कामदेव के धनुष को भी मात करनेवाली हैं।

८४ उस सुन्दरी की वेणी तथा कांति पूर्ण रोमावली को देखते ही पहचान सकते हैं कि वह नागकन्या है, अर्थात् वे दोनों सर्प (नाग) जैसे हैं। उसके शरीर का विलास अन्यत्र कहीं देखा या सुना नहीं गया है। उसकी तुलना में भूलोक की सुन्दरियां नहीं ठहर सकतीं। चन्द्रमा की पत्नियों में प्रसिद्ध अश्वनी आदि शायद ही उसके सामने ठहर सके।

८५ नागकन्या का सोने का बना शयनागार कामदेव और उसकी विजय सम्बन्धित चित्रों से शोभायमान है। वहां मृदु-मधुर वाणी में अमृत वर्षा करनेवाली मैना भाषण करती है। कस्तूरी आदि सुन्दर सुगन्धित द्रव्यों से गन्धवान उस प्रदेश की महिमा बखानी नहीं जा सकती। उस शयनागार में अनिर्वचनीय अलंकारों से सज्जित पलंग हैं। उन पलंगों पर की गई कारीगरी देखने लायक है, नवरत्नों की कांति से प्रकाशमान है।

नंदमुल केल्ल नंदमै यतिशयिल्लु
पापजवरालि बंगारु पडकटिल्लु

कंदपद्यमु : ८६ आ भोगमु तद्वस्तु च
याभोगमु नेंदु गन्न यवि गावुसुमी !
ना भोगपुरमु सरियौ
ना भोगवती पुरंबु सार्थं बय्येन्

उत्पलमाला : ८७ आ मदिराक्षि भोगवति यन्नदि गृंकग जेसि तत्पुर
स्थेमुनि हाटकेश्वरु भजिंप नोनर्चिंटु तोडि तेञ्चि न
न्नी महिनिल्पि येगे निदे यिप्पुडे; नन्नेडबाय लेनि या
प्रेम मदिंत यंत यनि पेर्कोने रादनि तेल्पे; देल्पिनन्

उत्पलमाला : ८८ मौखरि मिंच निट्टुलनु मंत्रिशिखामणि चोद्यमय्ये ना
वैखरि विन्न नेमनग वच्चु नहो ! मनुजेंद्र चंद्रम
श्शेखर ! जिल्वराकोलमु चेडिय नोकते जेप्पनेल ? नी
रेख गनुंगोनन् बलवरे खचरी मुख सुंदरी मणुल्

कंदपद्यमु : ८९ अनि पलुक नलरि बलरिपु
तनयुंडट गदलि मोदलितैर्थिकुलुनु दा
नुनु मंचुगोंड येडकु
जनि तच्छिखरावलोक जनितादरुडै

८६ वहां के सुख तथा वहां की वस्तुएँ अन्यत्र देखने को नहीं मिलेंगी। स्वर्गपुरी अमरावती के समान नागलोक की राजधानी उस भोग पुरी का नाम भोगवती पुरी बिल्कुल सार्थक प्रतीत होता है।

८७ उस मदिराक्षी 'उलूपी' ने भोगवती नामक नदी में मुझे स्थान कराया। उसके बाद उस नगर में स्थित प्रसिद्ध देवता अटकेश्वर शिवजी के पास ले जा कर मुझ से प्रार्थना कराई। फिर मुझे इस गंगा तट पर छोड़ कर अभी अभी लौट गई। मेरे विरह को न सहने वाली उस मुग्ध के स्नेह प्रणय की प्रशंसा कहां तक करूँ? इसे सुन कर—

८८ उसके मन्त्री विशारद ने कहा—हे राजेन्द्र, आपके वचन सुनकर मुझे आश्चर्य हो रहा है। नाग कन्याओं की बात ही क्या? आपके सौन्दर्य को देख श्रेष्ठ देव पत्नियाँ भी प्रेम करने लगेंगी। आपको देख कोई भी आकर्षित हो सकती है।

८९ मन्त्री के वचनों से अत्यंत प्रसन्न हो कर इन्द्रपुत्र अर्जुन वहां से रवाना हुए और जो यात्रार्थी उनके साथ आए थे उन सब को लेकर हिमालय के समीप पहुँचे। हिमालय के शिखरों को देखने की इच्छा से वे सब आगे बढ़े।

शब्दार्थ :

आन्ध्र महा भारत (राजधर्म)

पद्य

१ सिद्धिबोंदु-सिद्धि प्राप्त करना
शक्यमे-संभव है
२ परंगेडु-शोभित
पोम्मु-जाओ
तिरिगिन-फिरे हुए
३ तग-उचित
नडुपु-चलाना
तुनुमु-नष्ट करेगा
जमुडु-यम, काल
४ नागममुलु-वेदशास्त्र
अर्चिपकुंड-पूजा किए बिना
योरुलकुन्-अन्यों के लिए
५ पुडमि-पृथ्वी में
मडुवु-तालाब
६ विभुडु-राजा
तल्लडिल्लुदुरु-कांप जाएँगे
लेमि-अभाव
कलिमि-संपदा
७ ऊरडि-तृप्ति पाना
परिणय-विवाह
जनपालुडु नरेश
निर्भयतन-निडरतापूर्वक
८ अंजलो-कदम में
अंजलु-कदम
मखमुलु-यज्ञ
चेटावाटिल्लु-हानि होगी
ब्रतुकुगान-जीवित रहेगा
९ तद्धयु-और
चेतलेकुन्न-हाथ में न रहने से
दार पत्नी
अल्पुल-नीचों को

पद्य

१० तरणि-सूर्य
तममु-अंधकार
करणिनि-पद्धति, तरीका
११ चेइदमुलु-कार्य
तलकोननेर्चुन-करना चाहेगा
१२ मुन्नु-पहले
विनीतुडै-विनम्र होकर
प्रजकु-जनता को
१३ तनुदान-अपने आपको
तोलुत-पहले, प्रथम
पिदप-बाद, उपरांत
तरमे-संभव है
१४ रिपुल-शत्रुओं को
१५ उनिकियुनु-अस्तित्व
सोलिपि-लगाकर
तडवि-विचार कर
१६ तालिमि-सहन
लोलतलेनिवारु-अचंचल
१७ कुलंबेलसिरिकि-संपदा के लिए वर्ण की आवश्यकता ही क्या ?
१८ कुलमनिपट्टि-वर्ण भेदभाव मन में रख कर
अग्गलपु-अधिक
कर्जमेट्लु-कार्य कैसे !
१९ मेलोनर्चु-भलाई करके
२० मन्नन-प्रशंसा
नग्गलमैन-अनुरूप
घटिंचि-प्राप्त कर
२१ पेनुपु-पोषण
२२ बोंकु-झूठ
चेट्ट-हानि, बुराई

पद्य

२३ अवलेपंबुन-गर्वज्ञान

२४ वाविरि-क्रम

२५ प्रोवन्-रक्षा करना

२६ मावंतुडु-हाथी को चलानेवाल (महाति)

एनुगु-हाथी

तेकुव-साहस

चाड्पुन-जैसे

२७ चुव्वे-सतर्क रहो

किल्बिषमु-पाप, अपमान

२८ वेयेल-सदा सर्वदा

ब्रतुकु-जीवन, जीविका

३० चावकुंड-बिना मरे

जारुलु-व्यभिचारी

३१ अरयवलयु-पहचाना चाहिए

३२ तोचुन्-सुनता

३३ चंदमु-जैसे

नूयि-कुआ

३४ स्तोममु-ताकत

तगुलु-फँस

३५ मतिमंतुडु-बुद्धिमान

३६ वाविरि-क्रम, अनुगति

परिकिंचि-परीक्षा करके

३८ नडुपवलयु-चलाना चाहिए

चिरमु-स्थिर

३९ आवहिंचु-होना

४० कलित-मिला हुआ

४१ योगमु-कुशलता

४२ अरसि-परख कर

४३ मोदलुगा-आदि

तेरगु-पद्धति

तगवु-झगडा, अनुचित

४४ देस-पक्ष

दंडिंचुट-दण्ड देना

पद्य

डेग-बाज़

करणि-पद्धति

४६ ओंडोरुलु-आपस में

अलगक-नाराज न होकर

४८ तुदि-अंत

वाटिलु-संभव होगा

४९ गाभरपडि-घबराहट के साथ

५० इम्मेयि-इस तरह

५२ इंचुक्यु-जरा भी

उपार्जनमु-कमाई

५३ बेहारमु-वाणिज्य

५४ वेरवुन क्रमशः

५५ तोटवाडु-माली

भंगि-तरह

५७ ओले-जैसे

अरि-कर

विडुवु-छोडो

५८ बेनिच्चिन-पालना

५९ परूसदनमु-कठिनता

६० कून-शावक

जेलग-जौके

६१ चेरचुट-बिगाडना

६२ मनिकि-आस्तित्व

६३ तलप-विचार करना

सरियें-ठीक है ?

६४ पोगड्त-प्रशंसा

६५ आलापमु-बातें करना

पेंपु-अधिक

६६ चिरुनव्वु-मुस्कराहट

६७ उल्लसमु हर्ष

६९ विपुल-अधिक

बिड्डुलु-बच्चे

७० चर-स्थिर (स्थावर)

अचर-जंगम

पद्य
७१ पोंदि-पाकर
७२ दान-अतः
७३ विवादंबु-झगडों को
७४ एरिगि-जानकर
मेलु-भलाई
७५ लेकुन्नन-नहीं होने पर
७८ कोपमु-नाराज
गोपनमु-गोपनीय
७९ अध्वरमु-याग
८० वान-वर्षा
इल्लु-घर
८१ कट्टेदुर-समाने
८२ ऊरक-चुप रहना
८४ चेटु-हानि
८५ अड्डमु-रुकावट
८६ दोम-मच्छर
८७ तेरगु-पद्धति
माराडक-अन्याय नहीं कहकर

पद्य
८८ आवुलिंत-अंगडाई
९० मीरिन-उल्लंघन करना
९१ तेकुव-परवा
९२ मनुपु-मारना
वेलिपुच्चुट-बहिर्गत करना
९३ अंतिपुरमु-अंतःपुर
चुट्टरिकमु-रिश्ता, नाता
९४ नगळुलु-अन्तःपुर
९५ अभिराममु-सुन्दर
९६ मन्नन-प्रशंसा
९७ कलिमि-संपदा
विच्चलविडि-मनमाने
९८ उब्बक-मतफूल कर
अवमति-अपमान
९९ नियति-नियमानुसार
कोलुचु-सेवा करना
नय-ठीक तरह, सामान

आंध्र महाभागवतमु माय (माया)

पद्य
१ सोरिदि-क्रम
अड्चिकोनु-दबाना
घनत-बड्प्पन
२ संस्थान-विकास
विनाशमु-लय
तेरगु-विधान
३ कल्पिंचुट-सृष्टि करना
चतुरत-चातुर्य
सगुनुरडु-गुणी
४ नित्यम्बु-सदा
पलिक-बता कर
भूरि-अधिक

पद्य
५ इतरुलयंदु-दूसरों में
एम्भंगि-किस तरह
कड्गि-धो कर
६ महितुंडु-महिमान्वित
७ बुद्धिदोम्चिन-अपने बुद्धि के अनुसार
अभिदान-नाम
विनुति-प्रसिद्धि
८ निलिपि-प्रदान कर
पुट्टिंचेन्-सृजन किया
९ चोदितमु-हाँकनेवाला
परगु-कहलाता

पद्य

उत्पन्नमय्ये-पैदा हुए

१० वोरिसन-क्रमानुसार

नभ-आकाश

गति-तरह

चतुर्विध-चतुर्विध पुरुषार्थ

(धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)

११ निगुण-सत्व, रज, तमोगुण

दिनकरुड्डु-सूर्य

भंगि-तरह

१२ सुर-देवता

संसृति-संसार

कैकोनि-लेकर

१३ विषयध्यानंबु-वासना के ध्यान से

मानसमु-मन

मतिलोलत-मति भ्रम से

१४ कल-स्वप्न

अरयग-देखने पर

तोचुतुन्नदि-मालूम होता है

१५ वियत्तलमु-आकाश

कंपमोंदुट-हिलना

कल्गनेरवु-नहीं लगते

१६ अविद्या-अज्ञान

वेंडियु-और

१७ घन-बड़ा

अनयमु-विजय

१८ पुट्टिंचुट-सृजन करना

अन्तविदिनचेयुट संवार करना

मुनुगड्डु नहीं फँसता

निपुण नियन्त्रण करता है

१९ देहमंदु-शरीर में

पेरुगुनु-विकसित होते हैं

भाविकालमु-भविष्यकाल

२० मृगमु-जानवर

[illegible]

पद्य

तरणि-जहाज़

२१ चर-जंगम

अचर-स्थावर

जनियिंचि-पैदा होकर

२२ सलिलंबु-पानी

क्रम्मर-फिर

अनयमु वितरण

२३ निर्धूरितमुग-मेघ रहित

अनिलुडु-समीर

भाति-तरह

२४ अमित-बहुत

चण्डवेगुड्डु-शीघ्रगामी

२५ गडुवंगावचुने-समझ सकते है क्या ?

२६ आकाशमु-आसमान

हुताशनुंडु-अग्नि

वसुंधर, धाति-भूमि

उद्भवंबै-पैदा हुए

ईक्षिंचि-देख कर

२८ अडगियुंदुरु दबे रहते हैं

अंधुलु-अंधे

२९ तापसलु-तपस्वी लोग

सुधा-अमृत

३१ जगमु-संसार

मनुपन्-रक्षा करने

कानुपिंतुवु-दिखाई देते हैं

३२ निज-अपना

कलवंटि-स्वप्न जैसा

मनुचु-रक्षा करते

३३ चिक्कुवडक-न फँस कर

जठरंबु-पेट

तल्पमु बिस्तर

३४ पारमु-तट

अति-अधिक

३५ [illegible]

पद्य

मावोटि-हम जैसे
पदमु-पाँव
३६ परमंवैन-पवित्र
कानगनोपरु-देख नहीं पाते
अज्ञुलयि-अज्ञानी होकर
३७ एन्न नेमिटिकि-गणना करने की क्या जरूरत है
तरियिंतुरु-मुक्त होते है
३८ नम्मि-विश्वास करके
अंचित-कुछ
३९ इंचुक-कुछ
वर्तिंचुचु-रहते हुए
४० तारणंबु-पार करना
४१ अनयमु-आपत्ति
अभिवंदनमुल्-नमस्कार
४२ कप्पुट-ओढना

पद्य

तापमु-गर्मी
पायनू-जाने के लिए
४३ तिरुगुदुमु-फिरते हैं
अंतदाक-तब तक
४४ मोदमु-खुशी
पुलकिंतुरु-पुलकित
गेल्चुट-जीतना
४५ नित्यमु-सदा
विनुतिंचुचु-भजन करते
चनरु-नहीं जाते
४६ प्रादुर्भावमु-पैदा होना
अमराधिपुडु-इन्द्र
४७ येडब्राप-दूर करने
बुध-पंडित
विधायकुडु-आदेश देनेवाला

कर्ममु (कर्म)

पद्य

४८ जनुलेल्ल-सारी जनता
अन्योन्य-आपस में
कार्नानिवानिकि-आधे को
तेरवु मार्ग
४९ पावक-अग्नि
तंडुलंबुलु-चावल
भवमु-इहलोक
५० नरुलु-जनता
अतीतुडु-अतीत
पोरयुडु-मुक्त होता है
५१ भवबंधापवर्ग-मोक्ष
मरियुन्-और
५२ कोरि-चाह कर
कलुगुचुंडु-होते हैं

पद्य

५३ कीडु-हानि
दडवगा-डरना
५५ ओनरंग-प्रकाशवान
५६ कैकोनि-लेकर
क्रम्मर-फिर
५७ कायमु-शरीर
मनंबु-मन में
५८ संसरण-संसार
सततंबु-सदा
परगुट-रहना
५९ वृत्ति-स्वभाव
मोपु-गठरी
पायुट-बिछुडना
६० नम्मुट-विश्वस करना

पद्य

६१ मेत्तन-नरम

६२ चेडुगु-बुराई

तेरंगु-विधि विधान

६३ निक्कमु-सच

कैवडि-तरह

६४ जलघट-पानी से भराहुआ घड़ा

कदलुट-हिलना

६५ चेत-से

तिविरि-आकर्षित होकर

६६ एंदाक-कब तक

अन्दाक-तब तक

६७ अरय-परखने पर

त्रेंपवलयु-काट लेना चाहिए

६८ इट्लु-इस प्रकार

६९ तेलियनेरक-नहीं जान कर

ओनरिंप वलयु करना चाहिए

७० पट्टि-पकड़

७१ चालिंपुमु-समाप्त करो

कीलिंपुमु-स्थापित करो

७२ क्रम्मर-फिर

तगुन्-चाहिए

७३ उलियिंचुट-खो देना

एप्पुडुन्-सदा

७४ घन-अधिक

७५ संचय-समूह

यतुलु-योगी

७६ पोंदवु-प्राप्त नहीं करते

ऐमंदुमु-क्या कहते

७७ तमलो-अपने में

तेलुट-तैरना

७८ तोंटि-पूर्व

नीवाडै-आप ही का होकर

७९ पांथुडु-यात्री, मुसाफिर

कुंकि-अस्त हो कर

क्रमंबुन-क्रमानुसार

८० तोलगुनु-अलग हो जाएगा

८१ एल्लन्-सब

८२ तापमु-गर्मी

तिरुगुदु-फिरते

कनिन-देखा हुआ

मनुचरित्रमु (प्रवर विजय)

पद्य

१ वप्रस्थली चुम्बितांबरमै-गगन चुंबी प्रकार

अरुणास्पदंबनगन्-'अरुणास्पद' नाम से

आर्यावर्तदेशंबुनन्-हिमालय तथा विंध्याचल के मध्य में स्थित देश

विडंबिंचुचुन्-अनुकरण करते हुए

२ विप्रुलु-ब्राह्मण

भार्गवुनैनन्-भगवान् परशुराम को भी

मेटि किराटुलु-प्रमुख वैश्य लोग

४ कांक्ष-कामना

मधुकरांगन-भ्रमर

५ यज्व-याग करनेवाला (सोमयाजी)

सोमिदम्म-सोमयाजी की पत्नी

६ विकस्वर-विकसित

प्रत्यूषपवनांकुरमुलु-प्रातः काल की मन्द वायु

सच्छात्रुडु-शिष्यों के साथ

सैकतस्थलि-रेतीला टीला

७ शमंबु-जितेन्द्रियता

पद्य

पात्रुडु-योग्य

८ वेबुरु-हजार लोग

उद्दि-ससान

एतेरन्-आने पर

अब्वारिगा-समृद्धि से

९ दव्वु-दूर

ऊर्पुलु-गहरी सांस

उप्पोंग-अतिशय

१० मुब्वन्ने मेगमु-बाव

केदार कटकमु-पंच लोहों का कंगन

ऐणेयमु-हरिण का चमडा

बडुगुदेहंबु-पतला शरीर

११ भक्तिसंयुक्तिन्-भक्ति के साथ

संतुष्टुन्-सन्तोष पूरित

१२ विद्वद्वंदित-पण्डितों से स्तुत्य

मान्युडन्-पूज्य

१३ मेट्टिनयेड-पाद स्पर्श होगा

पवित्रामल तोयमुलु-पूत पाद तीर्थ

१४ अवंध्य जीवनमु-सफल जीवन

पानमुलन्-पवित्र स्नान विधि से

१५ युष्मदंघ्रि रजो लेशमु-आपके पद रज

१६ तैर्थिकावळि-यात्री समूह

१७ गृहमेधि, यजमानुड्, संसारि, भवनभर्त, कुलपति, कुटुम्बि-गृहस्थ

पंगु-लंगडा

परिव्राजक-सन्यासी

अवधूत-दिगंगर

अंक स्थितार्थ पेटि-जांघ पर स्थित रुपयों की पेटी

गार्हस्थ्यमु-गृहस्थ धर्म

१८ इल-संसार

पद्य

कौतुकमु-उत्सुकता

१९ चरिंचि क्रम्मरि-घूमे

कुंकिडितिरि-स्नान किये

२० आदरायत्त चित्तुडै-आदरयुक्त मन से

२१ चतुरास्युडु-विधाता

जनपदंबुलु-देश

२२ हिंगुळ-'हिंगुळ' नामक देवी

यादोनाथ सुता कळत्रुडु-भगवान् श्रीमन्नारायण

२३ ईषदंकुरित हसनग्रसिष्णु गंड युगळुंडै-मंद मुस्कुराहट से

२४ एरकलु-पंख

प्रायंपु जिरुत तनंबुन्-युवावस्था

२५ जर-बुढापा

रुज-व्याधि

सिद्धुलु-सिद्ध लोग

२६ परमंबैन-अधिक

तद्भूरि प्रभावंबुनन्-उसकी महान महिमा से

२७ दिवि-आकाश

ठवठव-थकावट

२८ प्रल्लदमु दुर्भाषण

धन्यात्मुगान्-कृतार्थ

२९ रस लिंगमु-रस गुटिका

पदांबुज युगळि-दोनों पाद पद्म

३० तुहिनभूधरमु-हिमाचल

श्रृंगमु-शिखर

श्यामल-काला

३१ मुहर्मुहु-बार बार

३२ हर्षोत्कर्षंबुनन्-सन्तोषातिशय

षंड समूह

सरणिन्-राह

३३ लहरी हल्लोहल-लहरों के प्रवाह

३४ आपड्डुलु-गायों के जैसे

पद्य

विसर-समूह से
३५ डेंदंबुनन्-मन में
कटक-बीच जगह में
तरु-पेड
३६ मिन्नेरु-आकाश गंगा
अल-मशहूर
३७ वेडिमिन्-गर्मी से
चलिमल वल्ल-हिमालय पर्वत से
३८ इंटिपट्टु-गृहस्थ धर्म को
रवणमु-आभरण
३९ चोद्यंबुलु-तमाशा में
नलिनी बांधव-सूरज
४० क्रम्मरु वेलन्-वापस जाते समय
बेरसि-लगकर
४१ एरिगि-जान कर
४२ क्रोव्वि-मद से
तेरगु-ढंग
४३ अकलंक-निर्दोष युक्त
उद्दंड-बहुत क्रूर
मंचुकोंड-हिमालय पर्वत
चेल्लुने ?-उचित है ?
४४ कानक युन्नन्-देखे बिना
ओमेडु-रक्षा करनेवाली
किनुक-क्रोध
४५ ओदवडोको-नहीं होगा ?
कदुरन्-होने से
४८ हति-घात
रंभा-केला
केकि-मोर
कनियेन्-देखा
४७ पोडमन्-सूझने से
दिगुलु-अधैर्य
कोंत-कुछ
४८ पासि-छोड कर

पद्य

एगि-जाकर
चेंगटन्-समीप
४९ केवलन-आस पास में
५० अच्चेरुवडि-आश्चर्य से
इंचुक-कुछ
५१ मृगमद-कस्तूरी
वीटी-पान का
पोलुपु-पता
५२ नत-गहरा
नवलान्-स्त्री को
५३ अय्यवसरमुनन्-उस समय पर
५४ तत-व्याप्त
विभ्रममु-नखरापन
५५ पेल्लु-खूब
कनीनिकल्-पुतलियाँ
कोरिकल्-कामनाएँ
५६ लेनडुमु-पतली कमर
पूचिन-पुष्पित
कलशांबुधि-क्षीर सागर
५७ लौल्यमु-चंचल भाव
केल्लु-दौड़
रिच्चपाटु-आश्चर्य
५८ मैन्-देह
पुलकलु-रोमांच
५९ गुरि-चिह्न
६० मान्चे-खो दिया
तोडने-तुरन्त
गीर्वाण वधूटि-देवता स्त्री
६२ गेलुवन् चालु-जीतने लायक
महीसुरान्वयमु-ब्राह्मण कुल
मरुडु-कामदेव
६३ प्रभूत-अधिक
पद्मभवुडु-ब्रह्मा
६४ उरग-नाग

पद्य

निरतमु-सदा
पोलन् समान
६५ दीपिंचु-प्रकाशमान
तत्तरंबु-जल्दी
६६ ईवु-तुम
हरिणेक्षण-मृग नयनी
ओट-डर
चरिंचु-घूमते
६७ तन-अपना
चनुगव-कुचद्वय
नडुमु-कमर
सेलवि-अधर
६८ जवरांडु-युवतियाँ
पल्करिंचुलागु-किसी बहाने से बातचीत करने का ढंग
मुनु-पहले
एल्लिदमु-हल्का
६९ नर्मगर्भबुगान्-परिहासपूर्ण
क्रम्मर-फिर
मगुव-स्त्री
७० चेलुव-स्त्री
मिनुकुलु-बातें
पेर्वडु-प्रसिद्ध
७१ उदार गुणाढ्यलु-सु गुणवती
मदीयलु-मेरे हैं
७२ नभोवाहिनी-आकाश गंगा
गंधवाह-समीर से
७३ कैतव-कपट
विंदवु-बंधु
सेद-थकावट
७४ कंदेन्-काला हुआ
पासि-लेकर
चनुमु-जाओ
७५ सपर्यलु-अतिथि सत्कार

पद्य

उंडगरादु-नहीं रहना चाहिए
नापयिन्-मुझपर
७६ कानमु-नहींदेखते
कूर्पुमु-पहुँचाओ
लेतनव्वु-मुस्कराहट
तोपन्-लगनेपर
७७ रत्नकंदरमु-मणिमयगुहा
चंदन-चंपक
उत्करंबु-समूह
गांगसैकतमुलु-गंगा नदी के रेतीले टीले
७८ निक्कमु-सत्य
दापनेल-छिपना क्यों ?
चोक्कि-परवश
कौगिटन-गले लगाकर
७९ वरुस-क्रम,उचित
विप्रुलु-ब्राह्मण
कार्मिप-मोहित होना
विचारमु-विचार
८० भुक्ति-भोजन
आकटन्-भूख से
तोय्यलि-युवती
८१ पोवगन्-गुजरना
भोगमु-सुख
पावनुलु-परिशुद्ध
८२ कसदु-गंदा
कप्पुरमु-कपूर
वसनमु-वस्त्र
८३ कूलेदु-पड़ते हो
दिवांधमु-उल्लू
गोंदि-अंधकार से भरे कोने में
८४ कुशलता-निपुणता
अलचुट-थकाना
समकोनि-सिद्ध हो कर

पद्य

८६ एल्लन-सब
अकामुडु-कामना रहित मनुष्य

८७ जिह्माचरण-वक्र व्यापार
एक-मुख्यतः

८८ अत्तेरुव वह स्त्री
पलुकुलु-बातें
उलिकि-चौंककर

८९ डेंदमु-मन
श्री-संपदा

९० पोडमन्-पैदा होने पर
उविद-युवती

९१ दक्क-मात्र
नान्-मानो

९२ रेपुन-प्रातःकाल
हव्यमुलु-होमद्रव्य
दर्भ-कुश

९३ वेल्ल-सफेद
वलचि-प्यार करके
एरिकिन-किसी के लिए भी

९४ वेतलु-कष्ट
ऊडन्-छोडने से
कोप्पु-वेणीबंध

९५ बाहुल-बगल
अंटि-चूकर

पद्य

त्रोचेन-हटाया

९६ ओडलु शरीर
दीपिंप-प्रकाशित होना
चुर चुर-तीक्ष्ण दृष्टि

९७ इंति-स्त्री
चिंदर वंदर बिखर
ओर्तुरे-सह सकते ?

९८ कन्नु-नेत्र
कावि-लाल

९९ चेकूरुन्-सिद्ध होंगे
तलपोयुट-सोचना

१०० बाडबुल-ब्राह्मणलोग
चुट्टरिकमु-संम्बन्ध
नवसि-कमज़ोर होकर
इनप कच्चडाल्-लौहकोपीन

१०१ पस-सार
कंदं बिंचु-चिपका हुआ

१०२ काव-रक्षा
स्वाहा वधू वल्लभा-अग्निदेव !

१०३ रतुंडु-आसक्त
कृंककमुन्न-अस्त के पहले

१०४ महीदेव-ब्राह्मण
गंडु-देहपुष्टि

योगी वेमन्ना (वेमन्ना के पद्य)

पद्य

१ आचारमु-रिवाज
भांडमु-घड़ा
पाकमु-पदार्थ, रसोई

२ निन्नु-तुमको (हे भगवान ! तुम्हें)
तन्नु-अपने को (लोग अपने को)
मरचुनु-भूल जाएँगे

पद्य

एव्विधमु-किस प्रकार
एरुगु-पहचान सकेगी

३ चेरि-पहुँच कर
चेट्टु-वृक्ष

४ उप्पु-नमक
रुचुलु-स्वाद

पद्य

वेरया-अलग होने
५ अनुवुगानि-अननुकूल
कोदुव-कम
कोंड-पहाड़
६ तन-अपना
विडचिन-छोड़ने पर
लेडु-नहीं है
७ चंपदगिन-मारने योग्य
कीडु-अपकार
मेलु-भलाई
पोम्मु-जाओ
चावु-मृत्यु
८ नीळ्ळु-पानी
मोसलि-मगर
बैट-बाहर
भंग पडुनु-हार जाता
९ वेलयु-कीर्त्तिमान होगा
मलयजंबु-चन्दन वृक्ष
गुणवतुडु-सद्गुणी
कुलमु-वंश
१० पंदि-शूकरी
कुंजरंबु-हाथिनी
ओकडे-एकमात्र
जालडा-काफी नहीं है क्या ?
११ पल्कुन्-बोलेगा
चल्लगानु-मीठी बातें (शान्ति से)
कंचु-काँसा
कनकंबु-सोना
१२ ओगुन्-नीच, दुष्ट
लुब्धु-कंजूस
मेच्चु-प्रशंसा करता है
बुरद-पंख
१३ कदलनि गति तोड़-धीमे से
मुरिकि-गंदा

पद्य

म्रोत-शोरगुल
वोर्चुट-सहना
१४ लोभि-कंजूस
मंदु-दवा
पैकमु-धन (रुपए)
चालु-काफी है
१५ चमरु-तेल
दिव्वे-चिराग
मंडुनु-जलेगा
समसिपोवु-बुझ जायगा
१६ तनदु-अपना
टगिलियुंडु-मिला रहता
काक-नहीं होकर
ओप्पु-अच्छा है
१७ कोंट-के साथ
येड-कहां
१८ इनुमु-लोहा
इनुमारू-दो बार
मुम्मारु-तीनबार
१९ उडिगि-खोकर
२० बोंदि-शरीर
पलु-बहुत
सोम्मु-माल
धर्म-दान
२१ मेडिपंडु-अंजीर-फल
पोट्ट-पेट
पुरुगुलु-कीडे
बिंकमु-आग्रह
२२ आलि-पत्नी
लेमि-गरीबी
विभुनि-पति
तिट्टुनु-गालियां देगी
२३ वेर्रिवाडु-मूर्ख
चूचिनन्-देखने पर

पद्य

चित्तंबु मन
रंजिलु-विचलित होता
२४ चेसिन-किया हुआ
कोदुव-कम
वित्तनंबु-बीज
मर्रि-वट
२५ चक्कग-सुन्दर (अच्छी तरह)
चीकटि-अंधेरा
दिव्वे-चिराग, दीपक
२६ गिट्टुट-मरना
पुट्ट-वलमीक
चेद-दीमक
२७ रागमु-प्रेम
वेमु-नीम का पत्ता
साधकमुन-साधना से
समकूरु-साध्य होते हैं
२८ तेलियक-न समझ कर
एल्ल-सब
म्रोक्कि-पूजा करके
२९ गंटेडु-चमच
चालु-काफी है
कडवेडु-घड़े भर
कूडु-अन्न, भात
३० येग्गु-शर्म
रायि-पत्थर
तिन्नगानु-ठीक तरह से
३१ निंडुनु-भरता है
तगुलु-लगता है
३२ चेलिमि-संगती
पलुक-पापी
३३ सेयक-नहीं करके
कूड बेट्टि-कमा कर
लेस्स-खूब
तेनेनीग-मधु मक्खी

पद्य

३४ इच्चेवारुल-देनेवाले
कानि-लेकिन
३५ राजिल्लु-प्रकाशमान
चेत-से
३६ पगल गोट्टुट-फोडना
पिंडी-आटा
३७ कोरत-कमी
तोड-के साथ
कोल्व-पूजा करना
३८ हेच्चिन-ज्यादा होने से
मानक-लगातार
उडिगिन चले जाने पर
३९ तमक-वडक-क्रुद्ध न होकर
विवरिंपवलेन्-विचार करना चाहिए
कनि-देख कर
४० एंड-धूप
वेळ समय
तेलियरा-समझो
४१ एंडिन-सूखा हुआ
अडविनि-जंगल में
यूडुचुनु-नाश करेगा
४२ मंटि-मिट्टी
मंकुजीवि-हठी
४३ मिरपगिंज-काली मिर्च
नल्लग-काला
लोन-अन्दर
४४ गुरुवु-अध्यापक
लेक-बिना
गुरुतर-बड़ा
४५ बहुळ-बहुत से
बाधपडुन-पीड़ित होता है
ब्रतुकग नेरडु-जिन्दा नहीं हो सकता है
४६ अरसि-देख कर

पद्य
प्रौढि-यश
निल्पुकोनिरि-कायम रखे
४७ गोड्डलि-कुल्हाडी
अडवि-जंगल
नरिकि-काट कर
तेलिवि-बुद्धि, अकल
४८ डोक्कबडि पोवुवेळ्ळ-मरते समय
४९ पालु-दूध
नेमलि-मोर, मयूर
५० निरुडु-पिछले साल
मुन्दटेडु-पिछले साल
५१ इंटनु-घर में
रूढिग बेशक
तेलिवि-अकल
५२ एरु-प्रवाह
दाटि-पार कर
सरकुगोनक-परवाह नहीं करके
५३ चच्चुनु-मरेगा
येकमे-एक ही है
५४ मनसु निल्पुट-मन को लगे रखने
सुरिय-तलवार
५५ कूर्चुट-इकट्ठा करना
५६ उडिगिन-जाने से (खो देने से)
चाटर-डिंढोरा पीटो
५७ मोदल-पहले
तुद-अन्त
नडुम-बीच
५८ वेरु-जड
पिदप-बाद
कोर्के-इच्छा, कामना
५९ दोरकुना-मिलेगा ?
पनुलु-काम
६० कडुपु-पेट
अांगु-बुरा

पद्य
चेरुचु-बिगाड़ देना
६१ तनुवु-शरीर
पायकुंड-रोक रखने
६२ इच्चिन-देने से
टोड्डु-अच्छे (सज्जन)
६३ तोलु-चर्म, चमड़ा
उतिकन-धोने से
तेलुपु-सफेद
कोय्य-लकड़ी
बोम्म-खिलौना
६४ आलू-पत्नी
विडिचि-छोड़ कर
६५ तप्पुलु-गल्तियाँ
तंडोपतंडमु-बहुत
उर्वि-भूमि
तम-अपना
६६ कल्ललाडुवाडु-झूठ बोलनेवाला
ग्रामकर्ता-मुखिया
सामि-भगवान
पेक्कु-बहुत
तिंडिपोतु-पेटू
६७ पेच्चूकूरा-साग
अरय-देखने पर
कुलहीन-निम्न जाति के
६८ तेलियंग-परसने पर
वितति-समूह
पसिडि-सोना
तीपि-मधुर
६९ पंचदारा-शक्कर
तेने-शहद
७० आयुधमु-हथियार
तोड़ा-के साथ
हास्यमाडुटा-दिल्लगी करना
७१ विडुवरादु-नहीं छोड़ना चाहिये

पद्य

पेद-ग़रीब
तिट्टरादु-गालियाँ नहीं देना चाहिये
सति-पत्नी
७२ संसृति-संसार
जालि-करुणा
कप्पुट-ढँकना
७३ माट-बात
आडमुण्डा-रण्डी
वेल्पु-भगवान
७४ चदुवु-पढ़ाई
अवगुणमु-बुरी आदत
बोग्गु-कोयला
७५ निंदिंचु-निंदा करना
जगमु-संसार, दुनियाँ
७६ वेरुववले-डरना चाहिए
मरुवगवले-भूल जाना चाहिए
७७ जारपुरुषुड्डु-व्यभिचारी पुरुष
चन्दम्बु जैसे
७८ नव्वु-हँसेगा
कदन भीतु-कायर, डरपोक
७९ पुट्टु-पैदाहोना
पूड्डोक्कि-दबाकर
गट्टिचेसिचूडु-स्थिर बनाकर देखो
८० अनुवुगा-उचित रीति
८१ अक्कमनसु-एकनिष्ठ
८२ तेलिविलेमि-बुद्धिहीनता
इत्तड़ि-पीतल
८३ आकलि-भूख
तनदु-अपना
परुल-दूसरों का
८४ पामु-साँप
चेप्पिनट्लु-कहे अनुसार
८५ बोन्दि-शरीर
नरुडु-आदमी, मनुष्य

पद्य

८६ तनुवु-शरीर
तरलिपोयेडुवेळ-मरते समय
येगरु-नहीं जाते
मँचि-भलाई
८७ वान-वर्षा
राकड़ आगमन
पोकड-निर्गमन
कलि-लौहयुग
८८ मिगुल-उच्च
जाति-वर्ण
हेच्चैनकुलजुंडु-उच्च वर्ण का मनुष्य
८९ रोसि-छोड़ कर
वेरुबडुट-अलग होना
९० माल-हरिजन
माटतिरुगुवाडु-वचन का पालन नहीं करनेवाला।
९१ मुत्यमु-मोती
चिनुकु-बूँद
९२ गोडुटावु-शुष्क गाय
कुंड-घड़ा
पण्ड्लु-दाँत
लोभिवानिन्-कँजूस को
९३ कलिमि-संपत्ति
मिगुल-बहुत
९४ ईग मक्खी
९५ पप्पुलेनिकूडु-बिना दाल का भोजन
अप्पुलेनिवाडु-वह आदमी जिसके सिर पर क़र्ज़ का बोझ नहीं है।
९६ कडुपु-पेट
मोसपुच्चि-धोखा देकर
९७ पिन्न-छोटा
९८ कनगलेक-न समझकर
विचलविडिग-इच्छानुसार
९९ पारिपोवु-भाग जानेवाले

पद्य

१०० वेदुकबोवुवाडु-ढूँढ़नेवाला
वेर्रिवाडु-पागल

१०१ कन्नन्-बढ़ कर
निलुपन्-केन्द्रीकृत करना

१०२ चेप्पु-जूता
जोरीग-गो मक्खी
नलुसु-किरकिरी
मुल्लु-काँटा
पोरु-झगड़ा

१०३ बोय-व्याध
अय्यु-होकर भी

१०४ तुम्मचेट्टु-बबूल का पेड़
मुंड्लु-काँटे
वित्तु-बीज

१०५ रवि-सूरज

१०६ कुक्क-कुत्ता
कुंदेलु-खरगोश
दोम-मच्छर
लोभि-कँजूस

१०७ गोनमे-सद्गुण ही
सिरुलकु-संपत्ति के लिए

१०८ तामु-स्वयं
धर्ममु-दान
कूड़पेट्टुट-एकत्रित करना
अंदु-प्राप्त होता है

१०९ व्यसनमुलनुदगिलि-माया जाल में फँस कर

११० मूलिकलु-जड़ी बूटियाँ
पनिकिराडु-किसी काम का नहीं होता

पद्य

१११ घनता-बड़प्पन
गोडुजेंदु-हानि होती है
उडिगनेनि-दब जाती है तो
कोरिक-कामना

११३ मरुववले-भूल जाना चाहिए
दुरमु-कलह
नेरिमि-गल्ती
मेलु-उपकार

११४ इहमु-परमु-इहलोक और परलोक
कल्गु-प्राप्त होते है

११५ तनुवुलोन-शरीर के भीतर
वेरेकलदु-अन्यत्र है
दिव्वे-चिराग़
पट्टि-पकड़ कर

११६ मादिग-चमार
द्विज-ब्राह्मण

११७ वेमु-नीम का पे[illegible]
चेदु-कड़वा
वोगु-अज्ञानी

११८ इंदुनंदु-यत्रतत्र
लेरस-पवित्र

११९ पामर-अज्ञानी
जोमु-स्वास्थ्य
सोम्मुलु-धन
पोजेसि-खो कर

१२० अवुनु-हाँ
देवेलु-मूर्ख व्यक्ति
वेंट्रुक-केश

विजय विलासमु (उलूपी अर्जुन विवाह)

पद्य

१ चन्द्र प्रस्तर-चन्द्रकान्त मणि

पद्य

श्यामा-युवतियाँ

पद्य

प्रत्यह-प्रति दिन
द्योधुनी-आकाश गंगा
चंचत्-घूमता हुआ
२ मेलु-अच्छाई
एलुन्-पालन करता था
३ विमत-शत्रु
याचनक-याचक
चण-समर्थ
दोःखर्जुलु-बाहुबली
४ मेटि-नामी
नुतिंपगान्-स्तुति करते हुए
५ सोयगंबु-खूबसूरत
प्रतिजोदु-समान
साटि-समान
६ इंपु-प्रीति
विनयान्वितुडु-विनम्र हो कर
नरुडु-अर्जुन
६ कूरिमिन्-प्यार में
पनुपगान्-भेजने से
वार्तलु-बातें
चक्कदनुमु-सुन्दरता
८ मृगविलोक-मृगनयनी
धी-बुद्धिमान
वयः-जवानी
कनत्-प्रकाशित
ग्रक्कुन-शीघ्र
तरंबे-साध्य है ?
६ चेलुवु-सौन्दर्य
अय्यारे-कितना आश्चर्य है ?
गेलुव जालुन्-जीनने योग्य है
वेय्यारुललोन-छः हजार में
१० कडु-बहुत
हेच्चु बड़ा
चनुदोयि-कुच द्वय

पद्य

नडुमु-कमर
पस-बल
११ पसिडि, अंगारमु-सोना
नोसल-फालभाग
मुज्जगमु-त्रिलोक (स्वर्ग, मर्त्य, पाताल)
सकिय-युवती
१२ अम्मक्क-आहा !
चोक्कपु-सुन्दर
सोलपु-नखरापन
एरुंगन-जानना
१३ बहुभंगुलन्-बहुभांति
मुँगलन-(अपने) सामने
डेंदमु-मन
ग्रक्कुन-तेज
दैविकंबुगन्-भाग्यवश
१४ वेडिकोंटकुन्-प्रार्थना करने से
पूर्वकृत समयन्याया नुकूलंबुगा पहले आपस में किये गये-निर्णय के अनुसार
पाटिल्लगन्-संभव होने पर
१५ म्रोक्कि-प्रणाम करके
पनिविंदुनु-जाऊँगा
मानक-नहीं छोड कर
एट्टकेलकुन्- आखिर
१६ तम्मुनि-अनुज के
ओनरिंचि-करके
येनयन-इज्जत के साथ
वेडुकन्-प्रीति पूर्वक
अंचेन-भेजा
१७ एगु गतिन-जिस तरह जाएँगे
अय्येडन्-उस जगह से
कदिलि-रवाना हो कर
तद्युयु-बहुत
तालिमि-सहन

पद्य

मीर-ज्यादा होने से
उलुपाल-उपहार
तानमुलाड्डुचुन्-नहाते-नहाते

१८ सुना सीरसूनुडु-इन्द्र का पुत्र (अर्जुन)
उत्पतत्-उड़ते हुए
शंकाकर-संदेहास्पद

१९ दोंतर-एक के बाद एक
तोयधि वर सीमंतिनि-
त्रिजगद्दी व्यंटिनि
भागीरथी स्रवंतिनि
जाह्नवि
} -गंगा नदी

२० मुनकल-स्नान
परिजनमुलु-सेवक

२१ भोगवति पाताल लोक की राजधानी
नागकुमारिक-सर्पकन्या
तमि-इच्छा

२२ दवुलने-दूर से ही
क्रीडि अर्जुन
औरगदुवदन- { उरग जाति की सुंदरी (उलूपी)

२३ मुनु-पहले
तमकमु-मोह
पेनुगोनगन्-वृद्धि होने पर

२४ असियाडुट-हिलना
अच्चेरुवु-अचरज
विभीत-भय से
मृगेक्षण-मृगनयनी

२५ एणाक्षि-मृगनयनी
चक्केर...दारे-काम देव
एसेन्-मारा

२६ कौतकंबु-कुतूहल
मज्जनंबै-स्नान करके
सव्यसाचि-अर्जुन

२७ ओसपरिवग सुन्दर ढंग

पद्य

सोगसि-परवसित हो कर
तन्वि-शरीरी

२८ नेरुलु-केश
राका-पूर्णिमा
पदंबु-पांव

२९ ऊरुलु-जाँघें

३० नच्चिकमु-कमी
निकटामृतधारलु- { समीप स्थित अमृत के झरने

३१ दरहास-मुस्कुराहट
मेरुगु-कांति

३२ गलरेख-कंठ की सुन्दरता
सायक-बाण
विषमाम्बुन् कामदेव को
दोर-प्रभु

३३ कम्मनि-सुन्दर
जाळुवान-खरा सोना
चेक्किलि-गाल, कपोल
रातिकेंपु-पद्मराग मणि
इय्येडन्-इस समय पर

३४ कंडचक्केर-मिश्री
मोवि-अधर
पालिंड्लु-स्तन

३५ मापटि-शाम
कनुब्रामि माया करके

३६ यामिनी विटकुलशेखरु-चंद्रवंश भूषण (अर्जुन को)
अच्चुपडन-स्पष्ट रूप से
अल्लभुजंगी-वह नागकन्या, (उलूपी)
अट्टे-शीघ्र

३७ पाकशासनि-इन्द्र तनय
तलुकुंगन्नुलु- { कांति से सुशोभित अर्ध निमीलित नेत्री

पद्य

निव्वेरतोडन्-अचरज के साथ

३८ पसिडि योप्परिगन्-सोने का महल

अंलरुलपान्पुन-फूलों का बिछौना

दिगद्रावि-छोड कर

मिसिमिकेंपु-प्रकाशमान पद्मराग

३६ काटुक काजल

एद्-मन

गुब्ब-कुच

गुट्टु-रहस्य

कौनु-कमर

४० कोमरुब्रायपु-कम उग्र (युवती)

कुटिलालक- सुन्दरी

४१ तिय्यनि विंटि वानिन्-कामदेव को

डग्गरजालु-सामने करने लायक

मीसमु-मूंछ

तोय्यलि-स्त्री

ओंटि-अकेला

४२ गाजुलु-कंगन, चूड़ी

डाकेलु-बायाँ हाथ

केवकुन्-के पास

तार्चूचु-पहुंचाते

सोगकन्नुलन-निमीलित नेत्रों से

तेलगन् चूचि-नखरापन से देखकर

मदवती-युवती

जगंवु-दुनिया

४३ सरिलेनि-समानष्ट (१)

कुरुवु-जांध

हृदांकपालि-गले लगाना

४४ सोमरि-सुस्त

संपेग-चंपक

४५ अच्चेरुवु-आश्चर्य

निक्कमु-सच

४६ अकन्न-अहा !

वेन्नुनि यन्नन्नु-चांद को

पद्य

(विष्णु की स्त्री लक्ष्मी के बड़े भाई)

४७ सवुरुन्-हुस्न

तरुव-जवान स्त्री

मेनु शरीर

गेब्बुन निकाल देगा

नुब्बु घमंड

नोरपु कांति

परपुन्-भगाएगा

४८ रवरवलु-झगडा

नव्वुन्-दिल्लगी करेगा

४६ चेल्वमु-लावण्य

सैकतंबु-रेतीला टीला

मरून्-कामदेव को

नवमोहनांगिकिन्-सुन्दरी को

५० ओच्चेमु-अभाव

वेडगु-पगली

मारुताशनजगमु-नागलोक

व्रतिनै व्रतधारी हो कर

तगवा-न्याय है

विवेकमु-ज्ञान

वलदे-नहीं चाहिए क्या ?

५२ मोलकनव्वु-मुस्कुराहट

आलेयन्- फैलने पर

गब्बि-कड़ा

गुब्बचन् टीविकि-स्तनों की बड़ाई

कवुन्-कमर

५३ चेवुलु-कान

याडिंपन्-हिलाना

कनियुंडि देख कर

नम्मिक-विश्वास

५५ तलियनिदान-ना समझ

अल-प्रसिद्ध

समंबु नियंत्रण

५६ वारिकि-हिंसा को

पद्य

वेरचि-डर कर
चेपट्टि-ग्रहण कर
मनुपु रक्षा करो
५७ मेल्पडिन-मोहित
नाति-युवती
अलंचुट-थकाना
तीयगन् माधुर्य से
पल्कि-बोलकर
एलुको-ग्रहण करो
५८ उडुराज चन्द्रमा
पावनुडु-पवित्र
वलतिवि-निपुण
एनयुट-पाना
अहि-सांप
५६ पापपूपजवरालु- { कम उम्रवाली युवती
आपलेक-दबा नहीं सकी
जाण-निपुण
६० कन्निय-कन्या
जन्नियवट्टि-मनौती
बास-कसम
६१ मेलुवार्तलु-शुभ समाचारों को
वीनुलु कान
अनेकलीलन्-कई ढंगों से
चेलुवमु सुन्दरता
६२ वलपु-प्यार
कोल्वुलोनन्-दरबार में
(गंगा तट पर तुम्हारी सभा में)
हलाहलि-घबराहट
ताळुट-प्रतीक्षा करना
मदि-मन
६३ प्रवर्तिचुट-व्यवहार करना
चिलुवचेलुव-नाग कन्या
राचूलिकिन्-राजकुमार से

पद्य

६४ तगुलमु-प्रेम
एंचक-गिनती नहीं करके
नोल्लि-प्राचीन काल में
वरिंपडे-शादी नहीं किया है ?
६५ चलंबु-आग्रह
६६ विन्नवाटु-दुःख
करंग-द्रवीभूत
६७ ओप-सहन करता
आजति-आदेश
सिग्गु-लज्जा
६८ अंतन्-के बाद
विकस्वर-विकसित
चेलि-युवती
करग्रहणंबु शादी
६९ एट्टिवगकोलो-किस तरह का यंत्र
जालुवाजाल वल्लिकज-पानके लिए सोने की थाली में
बागालु-सुपारी
कैकोनियेन्-लिया
७० तुरुमु-केशबन्ध
पय्येद-आंचल
कदुंगलिंचेन्-गले लगाया
७१ मूगगजेसे-फैलाया
मोवि-अधर
नोक्कुलु-दंतक्षत
७२ सारेन्-बारबार
माटिकिन्-अक्सर
७३ उनुपुन्-चाहता
ग्रोलन-पीने
७४ बागरि-सुन्दरी
वलचि-प्यार करके
७५ गति-तरह
सयोगंबु-उनकी मिलन (मिलाप)
उदयिंचेन्-पैदा हुआ

पद्य

७६ वाकप्राचुर्यमु-वक्तृत्व
अलरिंचि-प्रबन्ध करके

७७ कामिनिन्-प्रेयसी को
तामसमैनन्-देर होने पर
एगवलेन्-जाना है

७८ अप्पुड-तुरन्त
तोरगुचुंडन्-टपकने पर
संज-शाम
क्रम्मरन्-वापस चली

७९ एगुदुरे-जाएँगे ?
अंचुन् तलंचितिमि-समझे
इरु-आप

८० विंत-विचित्र
करंचेन-पिघलाया

८१ कन्नुगव-दोनों आंख
चिवुरु-कोंपल

८२ चोकाटपु- तालमुलु } ताड के फल
अद्दमु-आइना
चोक्कममौ-आकर्षक
मीरु-अतिशय
अधरंबु-ओष्ठ

८३ मासटीडु-शस्त्रविद्या में निपुण
रायलु-राजा
कुत्तिक-कण्ठ

पद्य

बयकाडु-अध्यापक

८४ जिगि-कांति
तीरु-पद्धति
येंचन्-सोचने पर
कोनवच्चुन्-समझ सकते हैं

८५ जड-वेणी
चेलि-प्रेयसी
तोलतने-पहले ही
चेप्पक-कहे बिना
इल-भूलोक
पोलरु-समान नहीं होगी

८६ शारिक मैना
प्रभविल्लु-पैदा हुआ
सिंगारमु-अलंकार, सजावट

८७ भोगमु-अनुभव
सार्थबु-अर्थवंत

८८ क्रुंगगजेसि-नहाकर
एडबाटु-बिदाई
पेर्कोनि राद-कह नहीं सकते

८९ चोद्यमु आश्चर्य
रेख-सौन्दर्य
वलवरे-प्यार नहीं करतीं ?

९० अलरि-खुश होकर
मंचु-ओस
मोदलि-पहले साथ आए हुए